निहालदे-सुलतान

डा० कन्हैयालाल सहल

साहित्यागार, जयपुर

आज से चालीस वर्ष पहले
जिन्होने लोक - कथाओं में
मेरी अभिरुचि जागृत की,
उन्ही प्रसिद्ध समाज - सेवी
तथा शिक्षा - प्रेमी

श्री भागीरथजी कानोडिया

को

सादर समर्पित

भूमिका

बचपन मे पड़ा प्रभाव अमोघ होता है । वह मेरा बचपन ही तो था-कक्षा ८ से कक्षा ११-१२ तक के बीच की बात हो सकती है । एक देशराज थे-मैं समझता हूँ कि नाम मुझे ठीक ही याद है, यद्यपि आज मुझे यह स्मरण नही कि वे कहाँ के रहने वाले थे और क्या काम करते थे । पर उनकी कुछ झाँकियाँ मेरे मानस-पटल पर इस समय उभरी हुई हैं । उनकी छरहरी शरीर-यष्टि जिसमें यौवन की दीप्ति तो थी, भले ही उसका उफान बैठने को तैयार हो रहा था । नातिलम्बे, गेंहुआ रग, हलकी-हलकी रेशमी श्मश्रु, एक हाथ की कुछ उगलियाँ पिचकी-सी टेढी सी । उनके साथ कुछ हड्डियाँ रहती जिनका मुँह कपडे से कसकर बँधा होता, एक कपडे के खोल मे बंद चिकाडा ।

वे बडे अच्छे ढोला-गायक थे । रात को ६-१० के बाद ढोलक खटकती और व एक चारपाई या खाट पर बीच मे बैठकर अपना चिकाडा मिलाकर जब एक-दो धुनें निकालने लगते तो ढोला के शौकीन श्रोता जुडने लगते । हजारो की भीड हो जाती । पहले दो तीन कई मशालें लेकर प्रकाश करते, बाद म हडे (गैस) मगाये जाने लगत । वे सरस्वती-गणेश आदि देवताओं की स्तुति करके ढोला गाना प्रारम्भ करते । पाठ्य-गान, अरथाना, द्रुत विधियों से गीत को प्रभावपूर्ण बनाते चलते । स्वर-लहरी की एक ऊचाई पर पहुँच कर वे रुकते तो सुरैया की भींगुर की झनकार-सी तीखी सुरीली सुर-भरन उनसे जुडकर, कुछ देर तक चलती । एक समाँ-सा बँध जाता । हम लोगो की दृष्टि से गायक देशराज तो ओझल होन लगते, उनकी जगह होने के पात्र पिरथम भखा, नल, मोतिनी आदि दीखने लगते । श्रोता जैसे कान म ही समा गया हो । आवेगमय स्थला पर देशराज उठ कर श्रोताओं मे जा पहुँचते और कभी मद, कभी द्रुत गति से चलते, कभी नाचते हुए-से, कभी चिकाडा अलग हाथ से ऊपर उठाकर और दूसरे हाथ मे चिकाडा बजाने का गज लेकर गीत की व्याख्या गद्य मे करते हुए, और भी ओज भर देते और एक नाटकीय तरग के साथ फिर गज से चिकाडे से चि-चिकार करते हुए आगे गीत की उत्ताल उर्म्मियो मे श्रोता को बहा ले चलते । और पहरी समाप्त होने को आती तो वे गा उठते—

'पहरी भई समाप्त हमारी (?)
तुम करो चिलम की त्यारी'

एक विराम आता । तब भी चिलम मे कश लगाते हुए, कोई रोचक चुटकला सुनाने लगते । मत्र मुग्ध जन-समूह विविध आवेगो मे तैरता रहता ।

ढोला की अपनी तर्ज है । उसम वे यथावश्यक अन्य तर्जे भी जोडते जैसे नल के जन्म होने पर बेमाता देविया के साथ जन्ति के गीत गाती, विवाह पर 'गाली' गायी जाती, 'रे जितो होंस बिरे को जायो रे', कहो मल्हार जडी जाती । इन जडी हुई तर्जों मे एक

'निहालदे' की तर्ज भी होती देशराज की वाणी इस तर्ज मे कुछ अद्भुत जादू भर दे थी कि इतने विशद ढोला-गान की चित्र विचित्र स्वर-तरगो मे प्रवहमान विविध ग्रन्य र भँवरें और उन सब के ऊपर उतराती होती 'निहालदे' की तर्ज। उसकी मार्मिकता वर्णन करना आज कठिन है। बहुता ने देशराज से निहालदे का पूरा गीत सुनाने का आग्रह किया था। उन्होने आश्वासन भी दिया था कि कभी सुनायेंगे। पर मन मे 'निहाल के लिए जो तीव्र उत्कण्ठा जागृत हुई, वह आज तक शमित नही हो सकी। 'निहालदे' गायक से निहालदे मैं नहीं सुन पाया। पर, आकाशवाणी के लिए निहालदे पर रेडि नाटक लिखने के निमत्रण से डॉ० सहल द्वारा सपादित निहालदे सुलतान की कथा पढने। अवश्य मिल गयी। निहालदे सुलतान की यह कथा मुझे आकर्षक लगी। और विधि विधान कि आज डॉ० सहल मुझे इसी कथा की भूमिका लिखने की प्रेरणा दे रहे हैं। इ तो डॉ० सहल का यह सहज भोला निरभिमान रूप कि स्वय लोक साहित्य के उच्च को के विद्वान् होते हुए भी मुझसे कह रहे हैं कि भूमिका लिख दें, उधर मेरी मुदमरदी देखि कि मैं भूमिका लिखने भी बैठ गया हू। पर मैं यह समझकर लिखने नही बैठ रहा कि मैं यह मान लिया है कि मैं विद्वान् हूँ और लोक-साहित्य का विशेषज्ञ हूँ, वरन् यथार्थत य समझकर प्रवृत्त हो रहा हूँ कि मैं विद्वानो का पासग भी नहीं, उनके चरणो की धूल तक तो नही हूँ,, हाँ ज्ञानार्थी होना चाहता हूँ। भूमिका लिखने के बहाने इस महाकथा का अतरग ज्ञान हो सकेगा, साथ ही मै जिन पर आतरिक श्रद्धा रखता हू, उन विद्वान्-शिरोम डॉ० सहल के आदेश के पालन का भी आत्मिक सुख मिलेगा। डॉ० सहल का सकेत भी लिए आदेश है।

हाँ, डॉ० सहल की एक बात मुझे कुछ अनोखी लगी कि उन्होने श्रेष्ठिवर श्री भागी रथजी कानोडियाजी से भी मेरे पास भूमिका लिखने का निवेदन भिजवाया। एक न शुद्ध दो शुद्ध। पहला तीर भी अचूक ही था, दूसरा तो रामबाण ही था। इस प्रकार पूर्णतः बि धर इन गुरु-बाणो से मै भूमिका के बहाने 'निहालदे-सुलतान' की प्रेम-गाथा और विक्रम गाथा के रहस्य को हृदयगम करने का प्रयत्न कर रहा हूँ। काश। मेरा यह प्रयत्न-मात्र उ गुरु-बाणों से बिंधे मन से रिसते रस से सिक्त हो सफल भूमिका हो जाए।

'निहालदे सुलतान' एक शुद्ध लोकगाथा है। शुद्ध लोकगाथा वह होती है जो अभी त कण्ठो पर ही विराजमान रही हो। उसे मसि-कागद ने न छुआ हो। अभी तक इस पर को काव्य नही लिखा गया। ढोला मारू, आल्हा, सारगा सदावृक्ष, नल-दमयन्ती, लोरचन्द्रान जैसी कितनी ही अन्य लोक-कथाए हैं जो लोक मे कण्ठ पर भी विराजमान हैं और इन काव्य भी रचे गये हैं। पर निहालदे-सुलतान पर लिखा कोई भी ग्र थ उपलब्ध नही।[1] इस दृ से यह एक शुद्ध लोकगाथा है। जिसे पहली बार पिलानी मे राजस्थानी शोध-विभाग के द्वा

---

१. श्री अगरचन्द नाहटा ने सूचित किया कि 'निहालदे सुलतान' हस्तलिखित रूप मे तो न देखी पर ख्याल पहले छपे हुए थे।

एकनाथ जोगी से सुनकर लिपिबद्ध किया गया है। लिपिबद्ध हो जाने पर भी, वह लोकगाथा रूप मे प्रकाशित नहीं हो सका है। डॉ० कन्हैयालाल सहल ने उसका सार मरु भारती मे क्रमश गद्य-कथा के रूप म प्रकाशित किया था, और अब इसका पुस्तकाकार सस्करण प्रकाशित किया जा रहा है।

भारत मे लोकगाथा की बडी पुरानी परपरा प्रतीत होती है। यदि धार्मिक भूमि से हटकर देखें तो अपौरुषेय वेदो मे भी कितनी ही लोकगाथाएं मिल जाती हैं। प्रतीत होता है, जैसे कि वेद इन्द्र की लोकगाथा ही हो। यह बात क्या कम आश्चर्य की है कि हिन्दी का 'साका' शब्द ठेठ ऋग्वेद से ही आया है। ऋग्वेद मे इसका रूप 'शाक' था। उदाहरणार्थ—

साका=शाक — शक्ति । कर्म्म । यथा ऋग्वेदे ।६।२८।४।

' शचीवनस्ते पुरुशाक शाका
गवामिव स्रुतय सञ्चरणी ॥"
"हे पुरशाक । बहुकर्म्मन्निन्द्र शचीवत
प्रज्ञावतस्ते त्वदीया शाका शक्तय कर्म्माणि वा ।"

इति तद्भाष्ये सायण ॥ समर्थेऽपि । यथा ऋग्वेदे । ५।३०।१०

"सत्ता इन्दो असृजदस्य शाकैर्यदी" सोमास सुषुता अमन्दत" "शाकैं शक्तैर्म्मरुद्भि ह ।" इति तद्भाष्ये सायण ॥)—शब्दकल्पद्रुम part five लेखक राजा राधाकान्त देव । प्रकाशक चौखम्बा सस्कृत सीरीज–Work No ९३, पृष्ठ ४२ ।

उसके जन्म की कथा से लेकर पूर्ण उत्कर्ष के चरम तक की कथा जिसमे इन्द्र के कितने ही पराक्रम सम्मिलित हैं, वदो में गुथी हुई हैं। ये कण्ठस्थ थी, और इन्हें विविध गीतो से सकलित किया व्यासजी ने। व्यासजी ने महाभारत को भी सपादित किया। पर वह भी आज धार्मिक महत्त्व का ग्रथ है।

किन्तु धर्म-क्षेत्र के साहित्य की इस प्रकार व्याख्या करने की अनधिकार चेष्टा न भी करें तो भी 'कथासरित्सागर' या पैशाची भाषा मे लिखी गयी बृहत्कथा या 'बड्डकहा' क्या आज की कृति है ? 'गुणाढ्य'[1] की यह कृति भी तो विविध लोक-कथाओं का सकलन

[1] भूमिका कथा कुछ इस प्रकार है-शिवजी ने एकान्त म पार्वती जी को कहानियाँ सुनाई। पार्वतीजी ने यह निषेध कर दिया था कि कोई भी उस समय उनके पास न जाय। किन्तु शिव के एक गण पुष्पदन्त ने छिप कर वे कहानियाँ सुनलीं। अपनी स्त्री जया को उसने वे कहानियाँ सुनादी। जया ने पार्वती का दे फिर जा सुनाई, तो रहस्य खुला। पार्वती ने रुष्ट होकर पुष्पदन्त को शाप दिया कि वह पृथ्वी पर मनुष्य-योनि मे जन्म ले। माल्यवान ने उसके पक्ष म कुछ कहना चाहा तो उसे भी वही शाप मिला। पार्वतीजी ने बताया कि एक यक्ष शापवश कुछ काल के लिए पिशाच बन गया है। जब पुष्पदन्त की उससे भेंट होगी और उसे अपनी पूर्व स्थिति का स्मरण हो आयेगा, तब

ही है जिसकी भूमिका कथा रोमांचक और रोचक होते हुए भी समस्त उपक्रम को लोक साहित्य के सकलन का रूप ही देती है। वत्सराज उदयन के पुत्र नरवाहनदत्त की सूत्र कथा म अनेका नोककथाए और लोकगाथाए पिरो दी हो गयी हैं। लगता है उस समय जितनी भी लोककथाए और लोकगाथाए प्रचलित थी, उन सभी को सूत्र वद्ध कर दिया गया है।

और क्या यह प्रयत्न फिनलैड के इस प्रयत्न के समकक्ष नही था जो १९वीं शती मे हलसिकी विश्वविद्यालय के विद्वान् पिता-पुत्र क्रोहन न सम्पन्न किया था, कलेवल[1] का सग्रह और सपादन करके ? किन्तु इस महागीत या पुराण काव्य के प्रथम सकलनकर्ता और सपादक तो Loonnart थ[2] काल क्रोहन के पिता जूलियस क्रोहन के गुरु। उसन ही पहल कलेवल की मुखस्थ कथाएँ सपादित की। निहालदे सुलतान के ये पँवाडे उसी परपरा म प्राप्त है। यह सच है कि कलेवल के सकलन के निए जिस पद्धति का अनुसरण किया गया था उस पद्धति का अनुकरण इस सकलन के लिए नही किया गया केवल एक ही गायक जयदयालजी नाथ से सुनकर इसे लिपिबद्ध किया गया है। इसम भी सदेह नही कि इस पँवाडे की परपरा भी बहुत पुरानी होनी चाहिए। प्रस्तुत सकलन १९५९ से पूव ही हो

यदि वह पुष्पदन्त शिव से सुनी कहानियाँ उस पिशाच को सुना देगा तो अपने दिव्य स्वरूप को प्राप्त कर लेगा। माल्यवान इन्ही कहानियो को उस पिशाच से सुनकर मुक्त हो जायगा।

पुष्पदन्त न वररुचि का अवतार लिया माल्यवान हुआ गुणाढ्य। वररुचि अनेका आश्चयजनक घटनाओ से होता हुआ उस पिशाच से मिला। उसे वे कहानियाँ सुना कर शाप मुक्त हुआ। इसी प्रकार गुणाढय पिशाच से मिला उससे वे कहानियाँ सुनीं उन्हे पैशाची म लिखा और सातवाहन राजा को भेंट स्वरूप देन ले गया। राजा न उन्हे स्वीकार नही किया तो पशु-पक्षियो को सुनाकर एक एक पृष्ठ जलान लगा। तब राजा न महत्त्व समझकर उस ग्रथ को बचाया और सस्कृत म लिखाया। इस प्रकार गुणाढय भी मुक्त हुआ। यही कथासरित्सागर की कथाए हैं।

डा० सत्येन्द्र—ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन-पृष्ठ—३६५

२ He (Lonnart) now set himself to a very great task to prepare a *new edition of the Kalevale which would take advantage of all the* newly collected material He found however, that it was necessary to undertake still further collections in the field A young student Daniel Europaeas spent the entire years 1845–1848 travelling about for this purpose He recorded some 2,800 variants of runes most of them hitherto unknown Lonnart *now began working on the final form of the* Kalevale the new or present edition of the Kalevale appeared in 1849

चुका होगा क्योंकि इसका संक्षिप्त गद्यात्मक साराश प्रथम खण्ड के रूप मे १९५९ मे प्रकाशित हुआ और मैंने निहालदे की तर्ज बाल्यावस्था मे आगरा मे सन् १९२३ से पूर्व सुनी होगी। इसका अर्थ यह है कि यह पँवाडा बहुत पहले से लोकप्रिय रहा है और इसके गायक भी कितने ही होगे। यह आवश्यकता आज भी बनी हुई है कि विविध गायको का पता लगाकर स्थान-स्थान से इनका संकलन किया जाय और सबके आधार पर एक संशोधित पूरा सस्करण पँवाडो का ही प्रकाशित किया जाय। साथ ही यह भी देखा जाय कि यह प्रचलित कहाँ कहाँ पर है। पर इसके लिए समय, श्रम और धन सभी अपेक्षित हैं। किन्तु इस पँवाडे का यह कथा सार भी महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक पँवाडे या लोकगाथा मे दो तत्त्व तो होते ही है १ कथा वस्तु, २. गेयतत्व। महत्त्व दोनो का ही है। पर साहित्य-अध्येता के लिए तो कथा-वस्तु ही अर्थ रखती है। और श्रोताओ के लिए भी कथा-पक्ष यथार्थ मे रुचिकारक होता है। गायक की गायकी तो कथा को कुछ अधिक स्वादप्रद ही बनाती है। अत. यह 'सक्षिप्त गद्यात्मक साराश' इस पँवाडे का यथार्थ आधार माना जा सकता है।

यह पँवाडा ५२ साको का बना हुआ है। १२ वर्ष का देश निकाला मिलने पर 'सुलतान' चलते चलते, गोरखनाथ की धूनी के पास पहुँचा, उनके चरणो मे शीश नवाया और सारा हाल कह सुनाया। गोरख ने कहा—"इस बारह वर्ष की तपस्या को तू पूरा कर। पर-स्त्री को माता समझना और पराये धन को धूल। मुँह से झूठ न बोलना, युद्ध मे पीठ न दिखाना। ५२ साके तुमसे होगे, उसकी सिद्धि का वरदान तुम्हे दे रहा हूँ।" यह वरदान गुरु गोरखनाथ ने सुलतान को पहली ही भेंट मे दे दिया था। फलत यह पूरा गीत या पँवाडा सुलतान के ५२ साको से युक्त होना चाहिए। ये 'बावन साके' ये हो सकते हैं–

(१) मत्स्य-वेध
(२) दानव (चदबली) का सहार
(३) दानव के शव को चिता पर रखना
(४) भीमसिंह बनजारे को परास्त करना
(५) सत्यक्रिया से नरवरगढ के ढाई कगूरे झुकना
(६) थानिया ठग का सहार
(७) मोतिया ठग का सहार
(८) हकडा दरिया को पार करना
(९) हुडदम बेगम को परास्त करना
(१०) निहालदे का चिता से उद्धार
(११) नदी मे बह जाने के बाद निहालदे तथा घोडे की पुन प्राप्ति
(१२) कीचलगढ मे अपने ही बाग मे पिता की तोपो का सामना
(१३) सत्यक्रिया से चक्क वैण के किले को खोलना
(१४) खैराती बाजार खोलना
(१५) बूदी के हाडा सरदार श्यामसिंह को परास्त करना

(१६) महकदे की मुक्ति कराना प्रदलीखा पठान (ग्रातू) से
(१७) धरतीधकेल दानव को मारना
(१८) देवलगढ के भानुसिंह की पराजय
(१६) बावडी की कोठरी से मुक्ति पाना
(२०) कच्छ के जगतसिंह की पराजय
(२१) नरवल के द्वार खोलना
(२२) बुधसिंह, ताराचन्द-मेघचन्द की पराजय
(२३) इन्द्र के अखाडे मे पोप के फूल लाना
(२४) मारू को भात पहनाना
(२५) नगदाड की भीडी मे निहालदे का पीवणा साप से पुन सजीवित होना
(२६) मोतीशहर की पनवाडिन का जादू समाप्त कराना
(२७) स्वर्ग मे सबलसिह कछवाहा को हराना, पथरीगढ से स्वर्ग जाकर
(२८) चकवे वैरा के दर्शन स्वर्ग मे
(२९) डांगपाड दानव को पछाडना
(३०) कछुए का उद्धार करना
(३१) ग्राभा नगरी से ग्राभलदे का ग्रपहरण
(३२) ग्राभसिह को परास्त करना
(३३) जलदीप ग्रौर रूपादे का दानव के यहाँ से लाना
(३४) गेंद को परास्त कर ढोल को छुडाना
(३५) सबलसिंह को परास्त करना
(३६) विमनकोट के भारामल को ठगना
(३७) वेंड राजा को परास्त करना
(३८) तांबागढ म जलदीप का विवाह करना ।

इन्हो मुख्य साकों में पिरोये कुछ अन्य कृत्यो को भी साका मानकर ५२ संख्या पूरी की जा सकती है।

गायक ने ग्रत मे बताया है कि जलदीप के विवाह तक सुलतान ५२ साके कर चुका था। यही वरदान उसे प्राप्त था। हमने इस समस्त कथासार मे से खीचतान कर ३८ साके निकाले हैं।

'साका' करन का ग्रर्थ होता है किसी न किसी प्रकार की वीरता का प्रदर्शन[1]। चारा प्रकार की वीरता[2] के कार्य 'साके' माने जाएगे। 'साके' करने के लिए सुलतान

१. साका-सका पु० [स शाका] (६) कोई ऐसा बडा काम जो सब लोग न कर सकें ग्रौर जिसके कारण कर्ता की कीर्ति हो। हिन्दी शब्द सागर, ना. प्र. सभा, काशी। पृ० ३५००।

२ युद्धवीर, दानवीर, धर्मवीर ग्रौर कर्मवीर या दयावीर-चार प्रकार के वीर-इनकी वीरता।

का जीवन समर्पित था। अत स्पष्ट है कि निहालदे-सुलतान का यह पँवाडा 'वीरगाथा' है।

पर, यह एक अद्भुत 'वीरकथा' है। अद्भुत इसलिए है कि इसका विधान सभी प्रचलित परपराओ से भिन्न प्रतीत होता है। वीरकथा (Hero tale) लोक-कहानियो मे एक अलग वर्ग माना गया है। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के स्टिथ थामसन ने 'फोक टेल' नाम की प्रसिद्ध कृति मे लोक-कहानी के विविध भेद या वर्ग बताये हैं। वे हैं: मार्ते (Marchen) उसकी व्याख्या यों दी गई है:

'A *Marchen is a tale of* some length involving a succession of motifs or episodes. It moves in an unreal world without definite locality or definite characters and is filled with the marvellous. In this never ever land humble heroes kill adversaries, succeed to kingdoms, and marry princesses Since Marchen deals with such a chiemerical world, the name Chimerate (किमेरेट) has been suggested for international usage though it has not yet received wide adoption'

अंग्रेजी मे मार्ते का कुछ कुछ पर्याय fairy tale (परी कहानी) माना जाता है।

दूसरा भेद या वर्ग (*Novella*) नॉविला है। इसका उदाहरण अलिफलैला या सिंदबाद नाविक माना जा सकता है। इसकी व्याख्या यो दी गयी है.

"The action occurs in a real world with definite time and place and though marvels do appear, they are such as apparently call for the *hearer's belief in a way that the marchen does not*"

तीसरा वर्ग 'वीर कथा' का है। स्टिथ थामसन ने बताया है कि "Hero tale *is a more inclusive term than either Marchen or Novella* Since a tale of this kind may move in the frankly fantastic world of the former or the psuedo *realistic* world of the latter. Most *Marchen* and *Novella*, of course, have heroes, but would hardly be called hero-tales unless they recount a series of adventures of the same. Almost everywhere are found such clusters of Tales relating to the superhuman struggles of man like Hercules or Theseus against a world of adversaries." फिर, स्टिथ थामसन ने एक वर्ग बताया है saga या local legend का, अर्थात् स्थानीय अवदान का एक अन्य वर्ग है Ectological tales या व्याख्याकारी कहानिया का, एक अन्य है मिथ-वर्ग, पशु पक्षी कथा तथा तन्त्राख्यान कहानी भी एक-एक वर्ग बताती है। चुटकले short anecdotes और सन्त-कथाएँ या saint's legends भी एक महत्त्वपूर्ण वर्ग है, पर तभी जब कि ये सत-कथाए लोक मानसिकता से ओत-प्रोत हो।

वीर-कथा के लिए स्टिथ थामसन ने जो सबसे प्रमुख आवश्यकता बतायी है, वह है एक ही वीर पुरुष के पराक्रमों की शृंखला–a series of adventures. दूसरी बात य बतायी गयी है कि उसमें परी कहानी भी समा गयी हो और नोवेला या पवाडे का यथार्थ या अर्द्धयथार्थ जगत् भी समाया हुआ हो।

'निहालदे-सुलतान' के पँवाडे में सुलतान वे मार्के स्टिथ थामसन की परिभाषा

"The warrior kings,
In height and
prowess more than human, strive
Again for glory, while the
golden lyric
Is ever sounding
in heroic ears
Heroic hymns,"

—Tennyson

आते हैं। पर इस पारिभाषिकता के ज्ञान से मुक्त होकर देखें तो भी 'सुलतान' एक अद्वित वीर है।[1] कथाकार या गायक उसे यही मानता है। नरवरगढ़ में मदा ने उसका वर्णन किया है :

'मेरी भावज महना म है आगयो वीर कोई औतार है,
पाय पदम हे मेरी भावज माथे मरण दिपै।

आगे स्टिथ थामसन न वीर-कथाओं की कुछ विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला वे लिखते हैं :

"Of first interest in such tales are the circumstances of heroes birth and childhood, and then the various causes assigned his setting forth on adventures."

'वीर पुरुष' का जन्म अलौकिक रूप में होता है। हमारे नायक सुलतान का भी अलौकिक है—अलौकिक परिस्थिति और अलौकिक घटनाक्रम। कथाकार ने कित कथा-तन्तु एक में मिला दिये हैं। हिरण का पीछा करते राजा बाण स हिरण को घ करते हैं। हिरण एक गुफा में प्रवेश कर जाता है। राजा भी गुफा में जाते हैं। वह

---

१. वीर का अंग्रेजी पर्याय hero है। इसके संबंध में यह लिखा गया है–The 'hero' is usually applied to one who stands out from an ordinary mortals by his superior quality or qualities, conspic bravery or sustaining power of endurance being the distinguis features.—Encycloo of Religion and Ethics Vol VI, Page 633

रखनाथ मिलते हैं। इस अंश में हमें 'हिरण या मृग' तो उन प्रेम-कहानियों में आया
तीत होता है जो मृगावती जैसी प्रेम कहानियों के समकक्ष हैं। कथासरित्सागर की भी
प्रेम-कहानी में शक्तिदेव एक बनैले सूअर का पीछा करता है, उसे घायल कर देता है।
ह एक गुफा या बिल में चला जाता है। शक्तिदेव भी बिल में प्रवेश कर उसके द्वारा एक
द्या न में पहुँचता है जहाँ उसे सुन्दर भवन और एक सुन्दरी मिली, वह उसकी पत्नी बन
यी। (कथा सरित्सागर, ५वां लम्बक, श्लोक १७३-१८५)

पर हमारी इस कथा में मानव ने एक अद्भुत मिश्रण कर दिया है—वह राजा गुफा
। सुन्दरी को नहीं, गोरख सिद्ध को देखता है और गोरखनाथजी की सेवा में लग गया।
उसने अपनी पत्नी की इच्छा अपने मन में की और उसकी पत्नी वहाँ तुरन्त और अनायास
ही प्रकट हो गयी। अर्थात् हिरण का पीछा + गुफा[1] = प्रेम कहानी की भूमि[2] : गुरु गोरख-
नाथ (गुफा के संयोग में) + उनकी कृपा से गुफा में ही पत्नी की प्राप्ति = प्रेम कथा की
परिपूर्ति, भले ही उसी रानी की प्राप्ति हुई, जो विवाहिता थी।

और यहाँ प्रसन्न होकर गुरु गोरखनाथ ने रानी को जौ दिये, जो उसने खा लिये
और गर्भवती हो गयी। जौ, फल, खीर या ऐसी ही कोई वस्तु खाने से गर्भाधान का एक
अत्यन्त प्रचलित अभिप्राय है। स्टिथ थामसन ने लिखा है कि—

यह कहीं-कहीं सरोवर है जैसे—हंस बाला (Swan maiden) में।

'हिरन' या मृग के माध्यम से प्रेम कथा की संभावना भी एक ही पक्ष है। नाथ-
सम्प्रदाय पर दृष्टि डालने से 'हिरन' का अभिप्राय वहाँ हमें इस प्रकार मिलता है :—
"मुख्य कथा यह है कि ये किसी मृगीदल विहारी मृग को मार कर घर लौट रहे थे।
तब मृगिया ने नाना प्रकार के शाप देना शुरू किया और वे नाना भाव में विचार
करने लगे, दयार्द्र राजा निरुपाय होकर सोचने लगा कि किसी प्रकार यह मृग जी
जाता तो अच्छा होता। संयोगवश गुरु गोरखनाथ वहाँ उपस्थित हुए और उन्होंने इस
शर्त पर कि मृग के जी जाने पर राजा उनका चेला हो जायगा, मृग को जिला दिया।
राजा चेला हो गया (नाथ-सम्प्रदाय, पृष्ठ १६७)
आगे, 'विधना क्या कर्तार' का बनाया हुआ 'भरथरी चरित्र' के आधार पर यह भी
लिखा है कि "भरथरी या भर्तृहरि" उज्जैन के राजा इन्द्रसेन के पौत्र और चन्द्रसेन
के पुत्र थे। वैराग्य ग्रहण करने के पूर्व राजा सिंहल द्वीप की राजकुमारी सामदेई से
विवाह करके वहीं रहता था। वहीं मृग का शिकार करते समय उसकी गुरु गोरखनाथ
से भेंट हुई थी। (नाथ-सम्प्रदाय पृ० १६७)
हमारी इस कथा में कथाकार ने हिरण को ही स्वयं गोरखनाथ बना दिया है। उसका
भी संबंध गोरख के इन शब्दों से जोड़ा जा सकता है—

'भणत गोरखनाथ मछिंद्र ना पूना,
मार्‌यो मृघ भयो अवधूता (मारा हुआ मृग=मन) अवधूत (=विरक्त योगी) हो गया।
५/२६ गोरखबानी, पृ० १२०।

"The general idea of the Miraculous birth of the hero is so common all over the continent that a listing of occurrnnce is of no special value On the other hand particular way in which the hero is conceived or brought forth is frequently distinctive enough to furnish *the basis for interesting studies of motif distribution* Conception from rain falling on a woman seems to be confined to South Western legend but pregnancy from eating is known to practically all tribes except those of the south west Pregnancy from some casual contact with a man occurs most frequently in the North Pacific areas but also in the plains and plateaux" (The folk tale) स्टिथ थामसन के इस कथन के अनुसार कुछ खाने के उपरान्त गर्भ-धारण यूरोप म दक्षिण पश्चिमी जातियो को कहानी के अतिरिक्त काटीनेण्ट की सभी जन-जातियो (tribes) की कहानियो मे मिलता है। भारत मे भी यह अभिप्राय बहुत प्रचलित है। दशरथ के पुत्र यज्ञ के चरु की खीर से पैदा होते हैं। जहरपीर भी गोरख के दिये 'जौ' से उत्पन्न होते है।[1] स्टिथ थामसन और वारेन ई० राबर्ट्स ने 'टाइप्स आफ इडिक ओरल टेल्स' मे कथामापक सख्या ३२५ The magician and his pupil (जादूगर और उसके शिष्य) कहानी दी है, इसमे जादूगर के दिये 'आम' से सतान मिलती है। ब्रज की एक कहानी मे भी यही तत्व है। नल का जन्म भी ऐसे ही उपक्रम स होता है और वही मर्त्य है। गोरखनाथ, उनके जौ और रानी करणावती तथा राजा मैनपाल—और रानी के जौ खान से 'सुलतान' का जन्म। इस प्रकार इस कथाकार ने वीर-कथा और प्रेमगाथा के तत्वो का समीकरण यहाँ प्रस्तुत कर दिया है।

यह बात द्रष्टव्य है कि सुलतान को सुन्दरता मे भी अद्वितीय बताया गया है। एक व्यक्ति उसके सबध मे कुछ इस प्रकार कहता है 'आज इस बाग मे एक ऐसा शख्स आया है जिसके सौन्दर्य को देख लेने पर नेत्र सार्थक हो जाते हैं, आँख तृप्त हो जाती है। ऐसा सुन्दर व्यक्ति मैने तो अपने जीवन मे कभी देखा नही, और न भविष्य मे देखन की कोई *उम्मीद ही है।" रानी माह उसे देखते ही मूर्छित हो गयी थी।* इसी प्रकार और भी कई स्त्रियाँ सुलतान के सौंदर्य के कारण मुग्ध हुई। उन्होने उससे विवाह का प्रस्ताव किया। इस प्रकार शौर्य और सौन्दर्य दोनो का प्रतीक है—सुलतान। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने राम म जिस शील-शक्ति-सौन्दर्य के दर्शन किये थे, वही मूर्ति लोककथाकार न 'निहालदे सुलतान' के सुलतान मे देखी है। 'गुरु' के आशीर्वाद या वरदान से पुत्र का जन्म, पुत्र को वीर बनाता है। यह चमत्कार विधि ही मानी जायगी। ज्योतिषी बतलाते हैं कि राजा मैनपाल और करणावती के सतान का योग ही नहीं, अत सुलतान पूर्णत गुरु के वरदान से विशिष्ट देन के रूप मे उत्पन्न हुआ है।

---

१ राजा रिसालू का जन्म भी गुरु गोरख के शिष्य पूरन द्वारा अक्षत का एक दाना देने से हुआ। (लिजेंड्स आफ पजाब टेम्पल)

स्मिथ थामसन के प्रमाण मे जन्म के उपरान्त वीर-कथाओं मे जो बात ध्यान आकर्षित करती है, वह है—

'And then the various causes assigned for his setting forth on adventures "

ऐसे वीर पुरुष को घर छोडकर यात्रा पर जाना पडता है, और इस यात्रा म उसे विविध साहसपूर्ण कार्य करने पडते है। भारत म ऐसे वीरो की एक लम्बी परम्परा है। राम को देश निकाला मिला विमाता के कारण, जगदेव पँवार को भी विमाता के कारण घर छोडकर यात्रा पर निकलना पडा है। रिसालू को किसी भिन्न कारण से घर छोड कर जाना पडा है, पर मुलतान और रिसालू की परिस्थितियाँ कुछ-कुछ समान हैं।

मुलतान सात वर्ष का हुआ तो उसने तीर कमान बनाई और पनघट पर घडे फोडना शुरू किया। शिकायत पहुँचने पर राजा ने ताँबे के घडे बनवा दिये। मुलतान ने भी तीर कमान पक्के बनवाये और एक ब्राह्मण-कन्या का कलश फोड दिया। उसके हठ पर मुलतान को देश निकाला मिला। यही—कुछ ऐसा ही वृत्त रिसालू का है।

> "So Raja Rasalu followed her directions and reached Sialkot, and found the women of the city drawing water from the well which is near the entrance of it and he began throwing stones at their earthen pitchers and broke them all. The women went to Raja Salbahan to complain against Raja Rasalu 'He is my son', said Raja Salbahan, and I love him greatly. So take your pitchers of iron and brass .. ,so the women went with iron pitchers and the poor got them from the treasury. But when they went to draw water from the well, Raja Rasalu made holes in all the pitchers with his iron headed arrows " (The legends of the Punjab-by Temple)

यद्यपि ज्योतिष द्वारा वर्जन भी रिसालू के लिए एक बाधा थी। पर यह घडा फोडना और तद्विषयक उसकी शिकायत को भी रिसालू के कथाकार ने उसके घर छोड कर जाने का कारण कल्पित अवश्य किया है।

तो, १२ वर्ष तक का बनवास मिला मुलतान को। १२ की सख्या भी ऐसे सदर्भ म महत्वपूर्ण है। रिसालू को १२ वर्ष तक न देखने का वर्जन ज्योतिष से था उसके मा बाप को। राम को भी १२ वर्ष का बनवास मिला।[1]

---

१ सभवतः कथाकार को 'गोपीचन्द' की कथा का प्रचलित एक रूप भी स्मरण म था जो अनजाने मे इस कथा म जुड गया है। बगला भाषा म 'मयनामतीर गान' मे बताया गया है कि यह देखकर कि गोपीचन्द की आयु केवल १८ वर्ष है, उसने गोपीचन्द को हाडिपा जालन्धरनाथ का शिष्य बनवा दिया और वे बारह वर्ष तक के लिए प्रव्रजित हो गये।

हमारे सुलतान के साथ यहाँ भी एक विशेषता है। उसे दो बार देश-निकाला मिला है। एक बार तो घड़े फोड़ने पर ब्राह्मण-कन्या के हठ से। यह हुआ कोचलगढ़ में।

कोचलगढ़ से ईडरकोट या ईडरगढ़ गया और वहा के राजा कमधजराव ने उसे अपना धर्मपुत्र बना लिया। यहाँ धर्म भाई और धर्ममाता के कारण उसे ईडरकोट छोड़ कर जाना पडा। धर्ममाता का समीकरण 'विमाता' से किया जा सकता है—अत दूसरा देशत्याग राम के देशत्याग के समकक्ष-सा हो जाता है। किन्तु अवधि की दृष्टि से पहला ही राम जैसा है।

यहाँ से हम देखते हैं कि 'कोचलगढ़' का सूत्र तो बिलकुल विच्छिन्न हो गया, पर ईडर का सूत्र निरंतर सुलतान से जुडा रहा। पहले तो निहालदे के कारण, निहालदे का विवाह सुलतान से हुआ। और इसी कारण निहालदे को ईडरगढ़ में धर्मपिता की देख-रेख मे छोड कर वहाँ से चले जाना पडा। निहालदे को वह वचन दे गया था कि वह श्रावण की तीज को लौट आयेगा। निहालदे ने कहा था कि यदि तीज को न आये तो मैं सती हो जाऊँगी। ईडरगढ़ मे दिया गया यह वचन सुलतान-कथा की पहली धुरी है।

पहले निष्कासन के अन्तर्गत यह दूसरा निष्कासन है। किन्तु यह निष्कासन आत्मारोपित है। परिस्थितियाँ धर्ममाता ने पैदा की है, निष्कासन का निर्णय स्वय सुलतान का है। पहलो म निष्कासन की अवधि पिता+राजा न निर्धारित की हैं, दूसरे निष्कासन की अवधि स्वय सुलतान ने निर्धारित की—श्रावणी तीज। और यही तिथि निहालदे के लिए प्राण बन गयी और सुलतान के लिए भी।

यहाँ तक की गाथा का प्रेमगाथा भी कहा जा सकता है। किन्तु स्पष्ट है कि इस अश मे भी प्रेम को उतना महत्व नही दिया गया जितना शौर्य को। निहालदे और सुलतान वर्षा की झडी मे मिले, निहालदे की वाटिका मे। दोनो मे प्रेम हो गया। पर निहालदे का सुलतान ने प्राप्त किया स्वयवर म—मत्स्यवेध करके। मत्स्यवेध की कल्पना का स्रोत महाभारत ही हो सकता है। मत्स्यवेध की युक्ति स्वय सुलतान ने निहालदे का सुझाई है। यह युक्ति धर्म-सकट से बचने के लिए है। निहालदे की सगाई पहले गयी कोचलगढ़ सुलतान को, वह बारह वर्ष के वनवास पर था, अत उसकी सगाई ईडर मे फूलकँवर को, सुलतान के धर्म भाई को चढ़ादी गयी थी। इसी धर्मसकट से बचने के लिए मत्स्यवेध मे स्वयवर रचा गया, और उसमे परीक्षा रखी गयी कि जो मत्स्यवेध करे, वह निहालदे का वरण करे। अत

इसी कथा-प्रसग मे दक्षिण की हीराँ वश्या का भी उल्लेख है जिसने इन्हे प्रेम करना चाहा, पर इन्होंने उसे स्वीकार नही किया। उसने इन्हे बहुत दु ख दिये। गुरु इन्हे कुछ कौड़ियो में उसके यहाँ बधक रख गये थे। १२ वर्ष बाद यहाँ से ये लौटे। १२ वर्ष के देश निकाले के प्रसग मे यह द्रष्टव्य है कि सुलतान भी 'मारू' के यहाँ रहे। वहाँ 'मारू' का ही बोलबाला था, ढोला का नही। वही 'हीराँ' इस कथा मे सभवत. 'मारू' बन कर आयी है। (दे. नाथ सम्प्रदाय, पृ० १६६–१७१)

स्वयंवर हुआ, जिसमे फूलकँवर असफल रहा, सुलतान ने मत्स्यवेध किया और निहालदे का वरण किया। इस मत्स्यवेध के कारण प्रेम से शौर्य को प्रमुखता मिल गयी।

और यह एक साका भी हो गया। यही पहला साका है और इसका फल स्वयं सुलतान को मिला है—स्त्री-प्राप्ति के रूप में। 'कथासरित्सागर'[1] की भूमिका में डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने कथासरित्सागर की आयोजना पर लाकोत का मत देते हुए लिखा है कि —

"लाकोत के मत के अनुसार नष्ट हुई बृहत्कथा की आयोजना इस प्रकार थी—प्रस्तावित भाग में उदयन और उसकी रानी वासवदत्ता एवं पद्मावती की सुविदित कथा थी। वासवदत्ता का पुत्र नरवाहनदत्त जब युवा राजकुमार की अवस्था को प्राप्त हुआ, तब उसका गणिकापुत्री मदनमंचुका से प्रेम हो गया। उसने अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध उससे विवाह कर लिया। विद्याधर राजा मदनमंचुका को हर ले गया। मदनमंचुका की खोज करते हुए नरवाहनदत्त ने विद्याधर-लोक और मनुष्य लोक में नये नये पराक्रम किये। दीर्घ-पराक्रम के बाद मदनमंचुका से उसका मिलन हुआ, वह स्वयं विद्याधर चक्रवर्ती बना और मदनमंचुका उसकी पटरानी हुई। इससे पूर्व उसके पराक्रमों की सूची में वह हर बार एक स्त्री से विवाह करता है।" अर्थात् प्रत्येक पराक्रम का फल एक स्त्री की प्राप्ति।

इसी "कथासरित्सागर" के आदर्श पर लिखी गयी-आदर्श पर ही नहीं, विद्वानों की राय में पूर्ण अनुकरण पर बनी हुई 'वसुदेवहिंडी' में कथा का रूप क्या रहा? डॉ० अग्रवाल लिखते हैं .

"संघदास ने गुणाढ्य कृत बृहत्कथा की शैली को तो अपनाया, किन्तु अपने ग्रंथ को बदल कर 'वसुदेवहिंडी' कर दिया, प्रद्युम्न ने कुछ शरारत से बड़े वसुदेव को जिस प्रकार छेड़ दिया था[2], उससे वसुदेव के मन में आपबीती सुनाने के लिए एक फरहरी-सी उत्पन्न हो गयी और २६ लम्भकों के रूप में उन्होंने अपने २६ विवाहों की कहानियाँ सुना डाली।"[3]

वसुदेव भाई से रूठ कर घर से निकल पड़े थे, और पराक्रमों की यात्रा पर चल पड़े थे। और पराक्रमों का फल था-हर पराक्रम से स्त्री रत्न की प्राप्ति। कथासरित्सागर को भारतीय प्रेमगाथा या काम कथा माना जा सकता है, क्योंकि इस महान् ग्रंथ का प्रारंभ कामदेव की विजय से युक्त मंगलाचरण में होता है :—

---

१. बिहार राष्ट्र भाषा प्रकाशन पृ० १३-१६।

२. इस छेड़खानी का रूप यह था—'सत्यभामा के पुत्र सुभानु के लिए १०८ कन्याएं इकट्ठी की गई थी, किन्तु उनका विवाह रुक्मिणी के पुत्र साम्ब से कर दिया गया। इस पर प्रद्युम्न ने वसुदेव से कहा—देखिए साम्ब ने अंतःपुर में बैठे-बैठे १०८ बहुएं पा ली, जबकि आप १०० वर्ष तक उनके लिए घूमते फिरे।

३. वही (बिहार राष्ट्रभाषा प्रकाशन, पृ० १२)।

है और वे स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं जो इस कथा को वह रूप प्रदान करती हैं जो इसका वैशिष्ट्य है। निहालदे से विवाह हुआ, और उर-वधू के ईडर पहुँचते ही दोनों का परस्पर विछोह हो गया। सुलतान को ईडर छोड कर चले जाना पडा। स्पष्ट है कि कथाकार की दृष्टि मे निहालदे-सुलतान के विवाह से दोनो के प्रेम की स्थिति दिखाना अभीष्ट नही। यह भी द्रष्टव्य है कि वर-यात्रा के समय सुलतान के रूप का जो वर्णन किया गया है, वह यद्यपि 'जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन्ह तैसी' की प्रणाली का है तथापि जो रूप-दर्शन का विवरण है, उसमे किसी 'प्रेमी' का उल्लेख नहीं है। वर्णन देखिए—

'छत्तीसो जाति के लोग वर को देख कर
उसे सराह रहे थे। सुलतान के जगमगाते हुए
भाल को देख कर सब यही सोच रहे थे
निश्चय ही यह कोई अवतारी पुरुष है। कोई
कहता, यह गोपीचन्द का अवतार है, कोई उसे
भरथरी बतलाता, कोई अजनीपुत्र हनुमान
बतलाता, कोई उसे राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न मे से
एक बतलाता—कोई कहता—

'एक बी भाण तो उग्या आकाश में,
आज यो दूजो ऊग्यो मेलागढ माय।'

यहाँ कथाकार को स्मरण आये है गोपीचन्द, भरथरी जैसे नाथ सम्प्रदाय के महान् योगी, हनुमान जैसे पराक्रमी ब्रह्मचारी सेवक, अर्जुन तथा भीम जैसे वीर, या फिर मर्यादा पुरुषोत्तम राम और उनके भाई।

तुलसी ने राम के सबध म ऐसे ही अवसर पर 'जाकी जैसी भावना' बतायी उसम लिखा—

"नारि बिलोकहिं हरषि हिय निज निज रुचि अनुरूप
जनु सोहत सिंगार धरि, मूरति परम अनूप। २४।
(बालकाण्ड)

रामहिं चितव भाय जेहि सीया।
सो सनेहु सुखु नहिं कथनीया॥

और स्वय कवि की दृष्टि में—

सहज मनोहर मूरत दोऊ।
कोटि काम उपमा लघु सोऊ। २४३।
(बालकाण्ड)

स्पष्ट है कि महाकवि तुलसी भी काम बोध को छोड नही सके।

किन्तु हमारा कथाकार प्रेमकथा को कथते हुए भी उसे वीरकथा ही बना रहा है। क्योंकि कई पराक्रमो के उपरान्त उसम आयी हुई स्त्री स्वय अपना समर्पण सुलतान को करना

चाहती है—प्रेम-कथा का फल। पर सुलतान की अस्वीकृति से कथा की प्रकृति बदल जाती है। एक और बात ध्यान आकर्षित करती है: प्रिय, प्रेमी या पति के चले जाने पर प्रेमगाथा का नायिका या प्रेमी की विरह-वेदना का वर्णन करता है, और उसे ही प्रमुखता देता है। कवि "सदेश रासक" मे नायिका की विरह-व्यथा की ही कथा कहना है। जायसी के पद्मावत मे भी नागमती का विरह प्रसिद्ध है। किन्तु हमारी गाथा मे ऐसा नही होता। अर्थात् कथाकार एक बार और प्रेमकथा के मार्मिक स्थल की उपेक्षा कर गया है। वस्तुत. उसकी दृष्टि उतनी निहालदे की ओर नहीं जितनी 'सुलतान' की ओर है। निहालदे का विरह प्रकट अवश्य किया गया है, पर पत्रों म, जो मारू को लिखे गये थे, विरह वर्णन मार्मिक है, पर समस्त कथा-विधान मे वह गौरव का स्थान नही ग्रहण कर पाता।

सुलतान गोरखनाथ का शिष्य हो गया है-और उसे गोरखनाथ ने यह उपदेश दिया था—

(१) परायी स्त्री को माता समझना,

(२) पराये धन को धूल,

(३) मुँह से झूठ न बोलना, और

(४) युद्ध मे पीठ न दिखाना।

इसमे पहली दो बातें उस प्रसिद्ध उपदेश-वाक्य से मिलती हैं जो इस प्रकार है- "मातृवत् परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्टवत्, आत्मवत् सर्वभूतेषु, य. पश्यति स पण्डित.।" पर गोरखवानी का यह चरण भी यह उपदेश देता है कि 'काछ का जती, मुख का सती। सो सत पुरुष उतमो कथौं। (गोरखवानी- ४५८, पृष्ठ ५२) ब्रिग्स के अनुसार राँझा से गोरख ने कहा था, "युवती स्त्री को बहन और वयस्का को माता के नाम से अभिनन्दित करो" (गोरखनाथ और उसका युग-पृष्ठ ५६)।

यह सुलतान ईडरगढ से चलकर नरवरगढ पहुँचता है, मार्ग घटना रहित है। यहाँ उसकी भेंट पनिया पठान से होती है। वे मित्र बन जाते हैं। पनिया पठान के स्थान पर सुलतान नगर की देखभाल रखने नगर मे परिभ्रमणार्थ निकल पडता है। यहाँ उसका दूसरा साका होता है।

वह एक सेठ के स्थान पर दानव की बलि बन कर जाता है, और दानव को मार डालता है।

यह अत्यन्त प्रसिद्ध और लोकप्रिय कहानी है। भीम ने एकचक्रा नगरी मे इसी प्रकार एक ब्राह्मणी के पुत्र के स्थान पर जाकर दानव का संहार किया था। 'Types of Indic Oral Tales'-India, Pakistan and Ceylon by Stith Thompson and Warren E Roberts मे 300-749. A Tales of Magic शीर्षक के ३००-३९९ Supernatural Adversaries उपशीर्षक के अन्दर ३०० संख्या का प्रथम कथानक

204-209 : III = V c, VI f, VII c.—Grierson, IX (2), 190 : II c, III d [+507B] —Lorimer, II, 281-289 : II a, b, III a, IV a b, c —Mc Culloch, 262-269 : II c, III d, V a, VI f, VII c [+566+302] — Morgenstierne, 70-76 : II a, b, III b, V d VI.—NQ. V no. 378 : II c, III d.—Parker, I, 137-145 . II a, III d, V a, VI f, VII c, d [+502]; I, 186-190 : II a, b, III d, IV c, e [+462+1119], II, 162-169 : III e, V d, VI, VII c [+301 B+302 B Ind], III, 373-379 : III e, V a, VI VII = [+302 B] —Schulze, 124 130 : cf. 303.—Sen, 196-202 : III f, (+856]—Steel-Temple, 138-152=Ind Ant., XI, 342-346=Steel, 129-143 : II c, III d, V d VI [+567] —Steel-Temple, 258-262=Steel, 245-250=Temple, I, 17-21 : II c, III d.—Steel Temple, 304-312=Steel, 289-296 : II c, III d, V d, [+425 A] — Swynnerton, Upper Indus 284-286 : III e, V b, VI c [+567]; 357 359 : IIc, III d [+881 A Ind]; Raja Rasalu, 59-74 : II c, III d— Temple, II, 182-196 : II c, III d, V d —Thurston, IV, 41-42 : II (bull), V d, VI f, VII c d —Wadia, Ind Ant, XVII, 75-81 = RTP IV, 438-445 : II c, III d, V a, b, VI f, VII c [+567]

इस उद्धरण से हमें अंग्रेजी में प्रकाशित भारत के विविध क्षेत्रों में प्रचलित इस कथा के प्रचलित रूपों का पता चलता है। कितना लोकप्रिय है यह कथानक, इसी से प्रकट होता है। पर यह तो विश्व भर में प्रचलित है। इस कहानी के भी दो हिस्से माने जा सकते हैं १ एक व्यक्ति दूसरे के लिए प्राण अर्पण करने राक्षस, दानव या नाग के पास जाता है और २. दूसरे में वह राक्षस को मार डालता है। यहाँ कथा दोनों से युक्त है। पर भारत में ही इसका पहला रूप अलग से भी मिलता है और दोनों मिले हुए रूप तो यहाँ मिलते ही हैं प्रचुर मात्रा में, जिनका उल्लेख पाश्चात्य विद्वानों ने किया है। उनके अतिरिक्त इसके अनेकों रूप मौखिक अलिखित कहानियों में भारत भर में फैले हुए हैं। इस पूरे रूप का एक उल्लेख महाभारत में भीम से संबंधित है, इसका संकेत ऊपर दिया जा चुका है। पहले रूप की प्राचीनता तो वेद के शुनःशेप से आंकी जा सकती है। इसका एक रूप जीमूतवाहन की कहानी में भी है। कथासरित्सागर में इस रूप की भी कई कहानियाँ सम्मिलित हैं और इन पर परिशिष्टों में *Tawny & Penzer* द्वारा संपादित *Ocean of Stories* में विस्तार पूर्वक इसकी व्यापकता और लोकप्रियता का विवरण सोदाहरण दिया गया है। इसमें से यह उद्धरण द्रष्टव्य है :

We leave the East and on entering in Europe find the story of a hero sacrificing himself or endangering his life for that of some hopeless person whose turn it is to be destroyed by a monster. S

extensive is the cycle in European folk tales that many volumes would be required to give them all. E. S. Hartland has already written three volumes on the subject, and he has far from exhausted the variants, still less has he discussed all possible sources of the motif. Frazer also has given us a useful list of forty one different versions, the first five of which are all from ancient Greek mythology. He has added to this list in the Golden Bough, and discusses the possible origin of the custom of sacrifices to water spirits.

और फ्रेजर के 'गोल्डन बो' में यह देखकर कि हमारी कथा के अनुरूप कथा का वास्तविक आनुष्ठानिक अभिनय या लीला भी कहीं होती है तो आश्चर्य भी होता है। यह आनुष्ठानिक अभिनय बवेरिया के फर्थ नामक स्थान पर होता है। फ्रेजर ने बताया है कि—

बवेरिया मे फर्थ में प्रतिवर्ष मिड समर के लगभग कार्पसक्रिस्टी के उपरांत रविवार को एक नाटक 'ड्रेगन' (अजदहा) का संहार' नाम का अभिनीत किया जाता था। पास पड़ोस से दर्शकों के झुण्ड के झुण्ड उसे देखने के लिए एकत्र होते। एक सार्वजनिक बाड़े में यह खेला जाता था। एक चबूतरे पर एक राजकुमारी सोने का मुकुट तथा पूरे शरीर पर जितने भी चाँदी के आभूषण माँगे मिल सकते थे, उन्हें पहने बैठी होती। एक सम्मानित स्त्री परिचारिका रूप में उसके पास होती। उसके सामने लकड़ी के कंकाल पर कैनवेस मढ़ कर और रंगों से चीत कर बनाया हुआ भयावह अजदहा खड़ा किया जाता, जिसके भीतर घुसे हुए दो मनुष्य उसे चालित करते। समय समय पर वह अजदहा अपना मुँह फाड़ भीड़ पर कभी इधर, कभी उधर दौड़ पड़ता, जिससे भयभीत होकर भीड़ बचने को एक दूसरे पर गिरती पड़ती रौंदती भाग उठती थी। तब एक वीर हथियार-बंद घोड़े पर सवार उस राजकुमारी के पास आता और पूछता, "इस कठोर पत्थर पर बैठी आप क्या कर रही हैं और इतनी उदास क्यों है?" वह कहती कि उसे खाने के लिए अजदहा आ रहा है। तब वह राजकुमारी से कहता कि आप प्रसन्न हों, मैं इस दानव को नष्ट कर दूँगा। तब वह उस दानव पर आक्रमण करता है।

With that he charged the dragon, thrusting his spear into its man and taking care to stab a bladder of bullock's blood which was there concealed. The gush of blood which followed was an indispensable part of the show.

वह वीर इस प्रकार दानव का संहार कर राजकुमारी के पास पहुँचता है और सूचना देता है कि उसने दानव को समाप्त कर दिया है जो नगर को अब तक पीड़ित कर रहा था और राजकुमारी से उसका विवाह हो जाता है।

फ्रेजर महोदय ने बताया है कि अजदहे से बहने वाले रक्त को और उससे रंजित मिट्टी को लोगबाग लेकर अपने खेतो मे डाल देते थे कि खेती अच्छी हो। 'This use of the blood suffices to prove that the slaying of the Dragon at Furth was not a mere popular spectacle but a magical rite designed to fertilise the fields' (Golden Bough Part I The Magic Art, Vol II page, 161-162).

इस विवरण से यह स्पष्ट है कि यह कहानी विश्व भर मे व्याप्त है, और कही-कही तो आनुष्ठानिक होने से भी जुडी हुई है। ऐसे प्रत्येक वीरवृत्त से जो परदुःखकातर, परहितकारी वीर का होता है, यह कथाश कथाकारो द्वारा सम्मिलित किया जाता रहा है। जगदेव पँवार मे व रसालू म भी है।

स्टिथ थामसन राब्र्ट्स ने इस कथा म जो VI (f) चरण बताया है, The imposter is a man of low caste यह चरण हमारी कहानी मे 'रूमी घूमी' वाला अश है।

तो, नरवरगढ मे आते ही सुलतान यह साका करता है। राजा ढोलकुमार को जब सुलतान का पुरुषार्थ विदित होता है तो 'मारू' उसे लाख टके दैनिक पर राज्य-सेवा मे नियुक्त कर लेती है। यो सुलतान 'लखटकिया' की कोटि मे आ जाता है। लखटकिया की कहानियाँ भी बहुत व्यापक हैं। कथासरित्सागर मे 'वीरवर' की कहानी भी एक प्रकार से लखटकिया की ही है और जगदेव की कहानी मे भी इस अभिप्राय को सम्मिलित किया गया है।

इसके बाद कहानी एक विशेष रूप ग्रहण करती है। एक चोर को चोरी करते पकडा जाता है, उसे मृत्युदण्ड दिया जाता है, पर, सुलतान उसे क्षमा करा देता है और अपना मित्र बना लेता है। इसी प्रकार उसने एक गोदू जाट को मित्र बना लिया। ये उसके अभिन्न मित्र हो गये। अब ये चार हो गये, इन सभी की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। जानी को देवी सिद्ध थी और गोदू को हनुमान, पनिया पठान पट्टेबाजी मे दक्ष था। ये तीनो मित्र उसे नरवर मे ही मिले। नरवर मे यथार्थ 'साका' तो भीमसिंह बनजारे के साथ ही किया गया है। प्रसग है 'बावडी स्नान' का। भीमसिंह बनजारा मारू को छीन ले जाना चाहता था, उसने अवसर यही ढूढा कि जब मारू बावडी स्नान के लिए जाय, तभी उसका अपहरण किया जाय। फलत सुलतान ने भीमसिंह को परास्त किया। इसके बाद वह ढोलसिह और मारू से विदा लेता है, तीज तक ईडरगढ पहुँचने के लिए। तब मारू से अपने पवित्र भाई-बहिन के सबधो को सिद्ध करने के लिए उसने एक साका चलते-चलते किया, इसमे 'सच्चनिया' से उन्होने नरवरगढ के कगूरे झुका दिये। चलते समय उन्होने मारू से केवल एक घोडा लिया और वह अकेला चल दिया। यहाँ से सुलतान का साथ इस घोडे से हो गया, आगे के प्राय समस्त घटना-चक्र म घोडा ऐसा ही उपयोगी सिद्ध होता है, जैसे प्रसिद्ध वीरो या लोककथा के नायको के घोडे। इस घोडे को मिलाकर अब सुलतान 'पाच' वीर हो गये। इस प्रकार कथाकार ने 'पचवीर' या 'पचपीर' की भावना भी इस लोकगाथा मे जाने-अनजाने प्रस्तुत कर दी है।

extensive is the cycle in European folk-tales that many volumes would be required to give them all E S Hartland has already written three volumes on the subject, and he has far from exhausted the variants, still less has he discussed all possible sources of the motif Frazer also has given us a useful list of forty-one different versions, the first five of which are all from ancient Greek mythology He has added to this list in the Golden Bough, and discusses the possible origin of the custom of sacrifices to water spirits

और फ्रेजर के 'गोल्डन बो' म यह देखकर कि हमारी कथा से अनुरूप कथा का वास्तविक आनुष्ठानिक अभिनय या लीला भी कही होती है तो आश्चर्य भी होता है। यह आनुष्ठानिक अभिनय बवरिया के फर्थ नामक स्थान पर होता है। फ्रेजर ने बताया है कि—

बवेरिया मे फर्थ म प्रतिवर्ष मिड समर के लगभग कार्पसक्रिस्टी के उपरात रविवार को एक नाटक 'ड्रैगन' (अजदहा) का सहार' नाम का अभिनीत किया जाता था। पास-पडोस से दर्शको के झुण्ड के झुण्ड उसे देखने के लिए एकत्र होते। एक सार्वजनिक बाडे मे यह खेला जाता था। एक चबूतरे पर एक राजकुमारी सोने का मुकुट तथा पूरे शरीर पर जितने भी चांदी के आभूषण मागे मिल सकते थे, उन्हे पहने बैठी होती। एक सम्मानित स्त्री परिचारिका रूप मे उसके पास होती। उसके सामने लकडी के कंकाल पर कैनवैस मढ कर और रगो से चीत कर बनाया हुआ भयावह अजदहा खडा किया जाता, जिसके भीतर घुसे हुए दो मनुष्य उसे चालित करते। समय समय पर वह अजदहा अपना मुँह फाड भीड पर कभी इधर, कभी उधर दौड पडता, जिससे भयभीत होकर भीड बचने को एक दूसरे पर गिरती पडती रौदती भाग उठती थी। तब एक वीर हथियार-बद घोड पर सवार उस राजकुमारी के पास आता और पूछता, "इस कठोर पत्थर पर बैठी आप क्या कर रही हैं और इतनी उदास क्यो है ?" वह कहती कि उसे खाने के लिए अजदहा आ रहा है। तब वह राजकुमारी से कहता कि आप प्रसन्न हो, मैं इस दानव को नष्ट कर दूगा। तब वह उस दानव पर आक्रमण करता है।

With that he charged the dragon, thrusting his spear into its man and taking care to stab a bladder of bullock's blood which was there concealed. The gush of blood which followed was an indispensable part of the show.

वह वीर इस प्रकार दानव का सहार कर राजकुमारी के पास पहुँचता है और सूचना देता है कि उसने दानव को समाप्त कर दिया है जो नगर को अब तक पीडित कर रहा था और राजकुमारी से उसका विवाह हो जाता है।

फ्रेजर महोदय ने बताया है कि ग्रजदहे से बहने वाले रक्त को और उससे रंजित मिट्टी को लोगबाग लेकर अपने खेतो मे डाल देते थे कि खेती अच्छी हो। 'This use of the blood suffices to prove that the slaying of the Dragon at Furth was not a mere popular spectacle but a magical rite designed to fertilise the fields' (Golden Bough Part I The Magic Art, Vol. II page, 161-162).

इस विवरण से यह स्पष्ट है कि यह कहानी विश्व भर मे व्याप्त है, और कहीं-कहीं तो ग्रानुष्ठानिक होने से भी जुडी हुई है। ऐसे प्रत्येक वीरवृत्त से जो परदु खकातर, परहितकारी वीर का होता है, यह कथाश कथाकारो द्वारा सम्मिलित किया जाता रहा है। जगदेव पँवार मे व रसालू मे भी है।

स्टिथ थामसन राल्ट्स ने इस कथा मे जो VI (f) चरण बताया है, The imposter is a man of low caste यह चरण हमारी कहानी मे 'रूमी-थूमी' वाला प्रश्न है।

तो, नरवरगढ मे ग्राते ही सुलतान यह साका करता है। राजा ढोलकुमार को जब सुलतान का पुरुषार्थ विदित होता है तो 'मारू' उसे लाख टके दैनिक पर राज्य-सेवा मे नियुक्त कर लेती है। यो सुलतान 'लखटकिया' की कोटि मे ग्रा जाता है। लखटकिया की कहानियाँ भी बहुत व्यापक हैं। कथासरित्सागर मे 'वीरवर' की कहानी भी एक प्रकार से लखटकिया की ही है और जगदेव की कहानी मे भी इस ग्रभिप्राय को सम्मिलित किया गया है।

इसके बाद कहानी एक विशेष रूप ग्रहण करती है। एक चोर को चोरी करते पकडा जाता है, उसे मृत्युदण्ड दिया जाता है, पर, सुलतान उसे क्षमा करा देता है और अपना मित्र बना लेता है। इसी प्रकार उसने एक गोदू जाट को मित्र बना लिया। ये उसके ग्रभिन्न मित्र हो गये। ग्रब ये चार हो गये, इन सभी की अपनी-अपनी विशेषताऐं हैं। जानी को देवी सिद्ध थी और गोदू को हनुमान, पनिया पठान पट्टेबाजी मे दक्ष था। ये तीनो मित्र उसे नरवर मे ही मिले। नरवर मे यथाथ 'साका' तो भीमसिंह बनजारे के साथ ही किया गया है। प्रसग है 'बावडी स्नान' का। भीमसिंह बनजारा मारू को छीन ले जाना चाहता था, उसने ग्रवसर यही ढूढा कि जब मारू बावडी स्नान के लिए जाय, तभी उसका अपहरण किया जाय। फलत सुलतान ने भीमसिंह को परास्त किया। इसके बाद वह ढोलसिंह और मारू से विदा लेता है, तीज तक ईडरगढ पहुँचने के लिए। तब मारू से अपने पवित्र भाई-बहिन के सबधो को सिद्ध करने के लिए उसने एक साका चलते चलते किया, इसमे 'सच्चनियो' से उन्होंने नरवरगढ के कगूरे झुका दिये। चलते समय उन्होंने मारू से केवल एक घोडा लिया और वह ग्रकेला चल दिया। यहाँ से सुलतान का साथ इस घोडे से हो गया, आगे के प्राय समस्त घटना चक्र मे घोडा ऐसा ही उपयोगी सिद्ध होता है, जैसे प्रसिद्ध वीरो या लोककथा के नायको के घोडे। इस घोडे को मिलाकर ग्रब सुलतान 'पाच' वीर हो गये। इस प्रकार कथाकार ने 'पचवीर' या 'पचपीर' की भावना भी इस लोकगाथा मे जाने-ग्रनजाने प्रस्तुत कर दी है।

पर, नरवर से ईडर की यात्रा तो अकेले घोड़े के साथ ही उसे करनी पड़ती है। घोड़ा दरियायी है। ग्रिम ने ट्यूटानिक माइथोलोजी में बताया है कि 'वीरों की पहचान का एक प्रमुख लक्षण यह है कि उनके पास बुद्धिमान घोड़ा होता है और व उससे बातचीत भी करते हैं। "The Ocean of Story by Tawny and Penzer" Vol II page 57n. । यह घोड़ा सुलतान को सकटों से भी बचाता है, यथास्थान उचित परामर्श भी देता है। एक बार तो वह उफनती नदी में से सुलतान को पार लगा देता है। इस घोड़े का इष्ट देव 'सूर्य' है। उसी की प्रार्थना वह करता है। इसी घोड़े का उपयोग निहालदे और सुलतान को बीच मझधार में डुबाकर एक दूसरे से पुन वियुक्त कर देने के लिए भी किया गया है। बाद में नाथों ने तीनों को पुन मिला दिया गया है। नरवरगढ से ईडर अकेले घोड़े के साथ सुलतान को दो बार ठगों से पीछा छुड़ाना पड़ा है और एक हुडदम बेगम के जादुई चक्र से। हुडदम बेगम का प्रसंग 'इस्माइल सिद्ध' को गोरख से महानता में कम दिखाने के लिए हुआ है।

नरवरगढ से ईडर को चलने का मुख्य कारण तीज तक ईडर पहुँच जाना है, जिससे वह निहालदे को सती होने से रोक सके। निहालदे ने पत्र द्वारा सूचना दे दी थी कि यदि इस तीज को सुलतान उसके पास नही पहुँचेंगे तो वह जल मरेगी। अत कथाकार ने जो बाधाएँ मार्ग में खड़ी की हैं, वे सभी व्यग्रता बढ़ाने के लिए हैं और उधर निहालदे की प्रतीक्षा की अवधि को अंतिम क्षण तक पहुँचा देने के लिए है। एक ओर वह सुलतान को उलझन में डालता जा रहा है, और सुलतान व्यग्र होता जा रहा है, उधर निहालदे की वेदना शनै शनै बढ़ती जा रही है और वह सती होने के लिए तैयार होती जा रही है। कथाकार ने अपने ढग से दोनों ओर की विडम्बना को बढ़ाने का कुशल प्रयत्न किया है। इसी प्रसग में उसने थके हुए सुलतान को नींद में सुला दिया है—लगता है कि सुलतान-निहालदे अब मिलन से रहे और निहालदे भस्म होकर रहेगी। तभी निहालदे की अँगूठी कौआ लेकर आता है और वृक्ष पर से काँव काँव करता हुआ उस सुलतान की छाती पर गिरा देता है। इस युक्ति से सुलतान जग पड़ता है। 'अँगूठी' का उपयोग भारतीय साहित्य और गाथाओं तथा लोकगाथाओं में कई रूपों में हुआ है। यहाँ भी अँगूठी का उपयोग लोक कवि ने अनूठे ही रूप म किया है। कौवे का उपयोग एक अभिप्राय (motif) के रूप में गहन अध्ययन की अपेक्षा रखता है, तो घोड़े की सहायता से वह उस समय ईडर पहुँचता है जब चिता में आग लग गयी होती है। चिता के पास वह घोड़े के पराक्रम से दीवाल फाँद कर पहुँचता है। इस सब के पीछे अन्य बाधाओं के साथ फूलकुँवर के मालिन्य की भूमिका भी इस मानवीय दुर्बलता के अध्ययन का अवसर देती है।

दोनों के मिलन में एक और बाधा अंत समय में उपस्थित हो जाती है। निहालदे तो निराश हो चुकी है। चिता में आग लग चुकी है—तभी सुलतान ने पहुँच कर निहालदे को चिता से उतारने के लिए उसका हाथ पकड़ा तो निहालदे ने उसे फूलकुँवर समझ कर

कहा कि धर्म भाई। जो हाथ तुमने पकडा है, वह अब जलेगा नही। अब सुलतान निहालदे को पत्नी रूप में कैसे ग्रहण कर सकता है। उसे तो निहालदे ने अनजाने ही सही, 'भाई' मान लिया है। मुख से अनजाने भी निकले वचनो के मूल्य पर क्या समाज शास्त्रीय अध्ययन ऐतिहासिक, तात्रिक और मनोवैज्ञानिक के साथ मानवीय संस्कृति के आधार पर अपेक्षित नहीं है?

इस समस्त लोकगाथा मे व्याप्त यह धर्म भाई और धर्म बहिन का भाव और उसकी मर्यादा और आन अपने आप मे एक महान् सास्कृतिक उपलब्धि मानी जा सकती है। आदि से अन्त तक यह महान् पवित्र भावना इस लोकगाथा मे जुगजुगा रही है। जिसे उसने बहन कह दिया, वह उसकी बहन हो गयी, जिसे किसी स्त्री ने भाई कह दिया, वह उसका भाई हो गया। वह ऐसे सबध को अन्यथा दृष्टि से, पत्नी भाव से, नहीं देख सकता। यह स्थिति बेचारी निहालदे के लिए अत्यन्त कष्टकर है। कहाँ तो प्रियमिलन का क्षण, कहाँ उसी के प्रमाद से वह क्षण ही टूट गया।

यहाँ कथाकार ने एक सूक्ष्म और जटिल समस्या खडी करदी है। लगता है दोनो का स्थायी विछोह हो गया। कहे हुए शब्द लौट नही सकते और सुलतान उन शब्दो की मर्यादा तोड नही सकता। तब निहालदे शिव का स्मरण करती है। इस प्रकार यहाँ एक और देवता का संयोग हुआ। निहालदे शिव-भक्त है। शिव-पार्वती आते है और मार्ग निकालते है पुन दोनो का विवाह रचाकर। इसी कठिन क्षण तक पहुँचा कर अर्थात् निहालदे सुलतान के पारस्परिक कथा-सूत्र के महत्तम स्थान तक पहुँचा कर और निहालदे सुलतान के मिलन में कथा की परिणति कराके कथाकारो ने मूल कथा पूरी करदी है। यही कथा मूलत. प्रेम-कथा है और इस प्रेम-कथा का प्रेम-तत्त्व केवल निहालदे के पत्र-प्रसग मे प्रकट होता है। उन छह पत्रो या परवानो मे जो विरह की व्यथा-कथा निहालदे ने प्रकट की है, वह भी बडी मार्मिक है। ये परवाने मारू के नाम भेजे गये और वियोगिनी स्त्री की मन स्थिति का सफल चित्रण करते है।

किन्तु एक दूसरी कथा का बीज सुलतान ने तब बो दिया था जब नरवरगढ से चलते समय वह मारू से कह आया था कि बहिन, तू अपनी लडकी का भात माँगने आना, मैं भात भरूँगा। वही मारू भात भरने कीचलगढ न आजाए, इसलिए सुलतान निहालदे को साथ लेकर ईडरगढ से कीचलगढ को चला। इस यात्रा मे भी विघ्न उपस्थित कराया गया है। नदी पार करते समय सुलतान, निहालदे और घोडा तीनो ही बह जाते हैं और अलग हो जाते है।

यह बिछुडने और मिलने की कहानी भारतीय कथा-मानको मे ६३८ वें मानक प्लेसीडास से मिलती है केवल बिछोह वाले चरण से कुछ-कुछ, इसमे पुरुष और स्त्री बिछुडे हैं, पिता पुत्र नही। बिछुडने-मिलने की कितनी ही कहानियाँ हैं, पर यह कहानी यहाँ भी अद्भुत है। इसमे एक तो वचन पालन का वर्णन है, दोनो उससे बँधे हुए हैं, दूसरे दैवयोग और

भाग्य का समावेश है। तीसरे घोडे की विवशता, जिसे घोडे ने बता दिया था, पर सुलतान ने ध्यान नही दिया : निहालदे को भी पीठ पर विठाकर चमचमाती पूर्णिमा की चांदनी मे घोडे को नदी मे चला दिया। चांदनी में निहालदे की पानी मे पडती प्रतिच्छवि ने घोडे को विचलित कर दिया और वह बह गया। इसमे भी कथाकार ने वह नाजुक क्षण चरम के रूप मे प्रस्तुत किया है कि इस वचन के बावजूद कि वह किसी दूसरी स्त्री से विवाह नही करेगा, सुलतान परिस्थिति के चक्र मे पडा विवाहार्थ जा रहा है, और उधर निहालदे इस वचन के बावजूद कि वह पर-पुरुष को नही देखेगी, ब्राह्मण-पुत्रियो से प्राप्त उत्तेजना मे वर को देखने के लिए आँख की पट्टी उतार देती है। और देखती है कि उसी का सुलतान दूसरा विवाह करने जा रहा है—और कुशल कथाकार सुलतान का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के निहालदे के पहले कुछ प्रयत्नो को विफल करा देता है, तब अत मे अँगूठी फेंकती है निहालदे, जो सुलतान की गोद मे गिरती है—इस विधि से निहालदे से उसका मिलन होता है।

अब दोनो कीचलगढ पहुँच जाते हैं। १२ वर्ष की अवधि पूरी हो जाती है। अब मारू के भात भरने से सबधित कथा का सूत्र आरभ होता है। भूमिका भाग है—मारू-डोना का भात न्योतने आने का। इस भूमिका भाग को रोचक बनाया गया है—हीरा पन्नो के खैराती बाजार का अभिप्राय (मोटिफ) प्रस्तुत करके। इसमे कथाकार का कौशल यह है *कि हीरा-पन्ना का खजाना पाने का जो वृत्त तिलस्मी और जादुई हो सकता था,* उसे 'सत' की परीक्षा का साधन बना दिया है। सिंहासनबत्तीसी की पुतलियों की तरह यहाँ भी बोलने वाली दो पुतलियाँ हैं।

इसके बाद इस कथा मे हमे तीन मोड दीखते हैं—(१) भात भरने जाने और लौटने का वृत्त। इसमे निहालदे भी साथ रहती है। जानी चोर और गोदू जाट भी साथ हैं। यह वृत्त घटनाओ से भरा हुआ है। (२) भात भरकर कीचलगढ आ जाने पर फिर पूर्नसिंह के साथ शिकार पर जाने से पूर्नसिंह को ईडरगढ तक पहुँचाने का वृत्त। और (३) कीचलगढ लौट कर फिर जलदीप मे विवाह तक का।

इन तीनो मे से पहला वृत्त तो, जैसा ऊपर बताया गया है, सुलतान के चरित्र को निष्कलंक करने और 'मारू' की प्रतिष्ठा को और पावन करने के लिए आवश्यक माना जा सकता है। भात भरने की उसकी प्रतिज्ञा थी ही। किन्तु शेष दो तो 'परिशिष्ट' रूप में ही जोडे गये माने जायेंगे। इन तीनो मे ही कथा-सरित्सागर की तरह मूल-सूत्र मे अनेक कहानियाँ जोडी गयी हैं।

भात भरने जाने और भरकर लौटने के वृत्त मे वस्तुत जानी चोर के करतब ही प्रमुख हैं। इस सूत्र मे जुडे सुलतान के कार्यों की सफलता का आधार जानी ही है।

चोर-कथाएँ विश्वभर मे प्रचलित हैं, और अपने आप मे विश्व की लोक-कथाओ मे महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। महन्द को मुक्त कराने की कथा मे कथाकार ने 'चोर शिरोमणि' के प्राचीनतम कथा-रूप के अनुसरण पर अभिप्रायों का नियोजन किया है। इस कथा की मूल-कथा इतनी है कि एक राजा एक चोर को पकडने के लिए कई प्रयत्न करता है, कई

व्यक्ति बीड़ा उठाते हैं, चोर सबको छलता है, और अंत तक पकड़ा नहीं जाता। टानी तथा पेंजर ने 'ओसिन ग्राफ स्टोरी' के पाँचवें खण्ड मे 'घट कर्पर' की प्रसिद्ध कथा दी है, और उसके चौर्यकलाविषयक अंश पर 'द्वितीय परिशिष्ट' मे विस्तार से विचार किया है। इस परिशिष्ट के अत में बताया गया है कि इस कहानी का एक रूप दो हजार तीन सौ वर्ष पुराना माना जा सकता है, (पृ० २८६)। इनका प्राचीनतम रूप मिश्र मे उद्भावित लगता है। 'परिशिष्ट' लेखक का कहना है कि "Versions of the story have found their way into nearly every important collection. To such an extent, indeed, has the tale circulated, that it would require a volume to give all the versions in their entirety. (Page 245). इस कहानी के जिस रूप का उल्लेख TOIOT[1] ने किया है वह इस प्रकार है : पृ० १२१ पर कथा क्रमाक ६५०, Rhampsinitus II(c) The thief steals a camel and kills it. An old woman promises to find the thief and came begging for camel's flesh to cure her sick son. The thief's mother gives the old woman camel's flesh. The thief kills the old woman or discredits her testimony. इसके कितने ही भारतीय रूपो का उल्लेख इसमें किया गया है। हमारी गाथा मे जानी को पकड़ने के लिए अशर्फियो से लदा ऊंट बाजार मे छोड़ा गया है। और बातें ऊपर की कहानी की तरह हैं। हमारी गाथा मे चोर की मा के स्थान पर मालिन है जिसे जानी ने मौसी बना लिया है। आगे के चरण ा अर्थात् दूती को मारने की बात का उल्लेख इसमें नही है। वरन् उसकी साक्षी को झुठला ने की बात है। हमारी गाथा मे दूती ने मालिन से लिये ऊंट के मास के रक्त से द्वार पर क थापा लगा दिया ताकि वह मकान पहचाना जा सके। जानी ने सभी मकानो पर ऐसे ी थापे लगा दिये। अलीबाबा चालीस चोर की कहानी मे भी यह अभिप्राय आया है।

हमारी गाथा के और चोर शिरोमणि की गाथा के विविध रूपान्तरो मे आने वाली विविध चतुराइयो का वर्णन TOIOT मे पृ० १४५-१४६ पर १५२५ कथाक्रमाक शीर्षक 'The Master Thief (R 301) के अन्तर्गत १५२५ G शीर्षक 'The Thief Assumes Disguises (K 311) मे IV के इन चरणो मे मिलते हैं :

> **Theft by Disguising** The thief (thieves) steals from and escapes from or entraps the King, the police chief, the adviser, etc. by assuming various disguises.... ...(b) The thief disguises as the police chief's son-in-law and *steals the daughter's jewels.* (c) The thief disguises as an old woman grinding corn and gets the adviser to take his place............

इनके कितने ही रूपो के सकेत भी इसमे दिए गए हैं। भारत मे यह चोरशिरोमणि की कहानी इतनी प्रचलित है कि हर क्षेत्र और हर गाँव में इसे सुना जा सकता है। यह बात

१. Types of Indic oral tales.

भी ध्यान देने योग्य है कि 'घट-कर्पर' की संस्कृत कथा के इन दो चोरों में 'कर्पर' का देसी रूप 'खापरा' हो गया है। खापरा चोर पर डॉ० मनोहर शर्मा ने भी प्रकाश डाला है, और कर्नल टाड को जूनागढ़ में तो 'खापरा चोर' की गुफा भी देखने को मिली। (दे पश्चिम भारत की यात्रा–ले कर्नल टाड–पृ० ३७३) इस चोर की गुफा का रेखा चित्र भी टाड महोदय ने दिया है।

इसी प्रकार हमारी गाथा अनको साहसपूर्ण घटनाओं, जादुई चमत्कारों, स्वर्ग की यात्राओं, कई प्रकार के दानवों के सहार, चौर्यकला के करतब, स्त्रियों के अपहरण और मुक्ति–आदि आदि, सक्षेप में 'लोक कहानियों' में से अनेकों इस लोकगाथा में गूथ दी गयी है। एक भूमिका में इस सब के सबंध में विस्तृत चर्चा नहीं की जा सकती। यहां तक भी मैंने अनधिकार चेष्टा ही की है, किन्तु वह इसलिए कि इस महान् गाथा की ओर विद्वानों की दृष्टि जाय, और इसकी रोचकता को तो समझा ही जाय, इसमें आयी कथाओं और अभिप्रायों का भी वैज्ञानिक अध्ययन किया जाय।

कथासरित्सागर की तरह इसमें मूल-कथा के पेट में कितनी ही अन्य कथाओं का समावेश है, पर सभी कथाए मूल-कथा के नायक और मित्रों की हैं, साक्षी कथाए तो एक दो ही हैं।

ये सभी कथाए कथाओं के रूप में तो महत्त्वपूर्ण हैं ही, पर इनके अध्ययन के कितने ही पक्ष है। ये कहानियाँ मानव की प्रतीक भाषा मानी जा सकती हैं। विद्वानों ने कहानियों के प्रतीकों की तिलस्म को तोड़ने के कितने ही प्रयत्न किये हैं। विश्व भर में ऐसी गाथाएँ-कथाए प्राचीनतम काल से मिलती चली आयी हैं—विविध युगों में विविध क्षेत्रों में इन कहानियों को विविध अर्थों के प्रतीकों के लिए काम में लिया है और लेते चले जा रहे हैं। लोक-साहित्य विज्ञान इनके अर्थों को वैज्ञानिक ढंग से खोजने का प्रयत्न कर रहा है। वह अभी भी अपने शैशव में है। नृतत्ववेत्ता अपनी तरह से इनकी व्याख्या करना चाहते हैं और सामाजिक विकास की साक्षियाँ पाते हैं, इतिहास अलग अपनी तरह से इनको समझना चाहता है, इधर मनोविज्ञान भी इनके माध्यम से मन के अवचेतन की गहरी अन्धकारपूर्ण गुफा में प्रकाश कर वहां के विविध मार्गों को हृदयगम करना चाहते हैं, और धर्मगाथाविज्ञ अलग ही तरह से इनका रहस्य खोलना चाहते हैं। निहालदे-सुलतान की इन कहानियों में भी ये सभी स्तर और पार्श्व विद्यमान हैं। आगे इनके अध्ययन में अवश्य ही विद्वान प्रवृत्त होंगे और इनका रहस्योद्घाटन करेंगे या पुन. इन्हें रहस्यावृत्त कर देंगे।

जिस प्रकार परहितार्थ दूसरे के लिए स्थानापन्न होकर बलि देने की कथा वेदों में शुनःशेप के आख्यान में आयी है, पुराण साहित्य में जीमूतवाहन, और बक को वध करने वाले भीम की कथा बन कर आयी है। और विश्व भर में अनेकों रूपों में मिल जाता है। पर, हमारी गाथा में अपने वैशिष्ट्य के साथ है। इसी प्रकार सम्पूर्ण निहालदे-सुलतान की कथा [illegible] है। एक तो गोरखनाथ, शिव, देवी, हनुमान और सूर्य नक्षत्रों की कथा के

रूप में यह हमारे समक्ष आती है। इन सिद्धों और देवी-देवताओं की माहात्म्य-कथा जैसी लगती है। पर, इन सब में होड़ नहीं है ये सभी अपने भक्तों के माध्यम से संकटों में कार्य साधते हैं—एक ओर इनसे भक्ति का माहात्म्य हमें प्रभावित करता है, दूसरी ओर कहानियों में चमत्कार आता है, तीसरी ओर इनके कारण नायकों में एक विशेष चारित्रिक सत्त्व का ओज भी प्रकट होता है। 'कान्तासम्मिततयोपदेश युजे' की भावना भी पद-पद पर है। समस्त कथा का अंतरंग 'परहितार्थ पराक्रम' से ओत प्रोत है।

यह गीत लोकगाथा है, धर्मगाथा नहीं। यह उसी प्रकार जोगियों द्वारा लोगों की भीड़ एकत्र कर गांव-गांव में गाया जाता होगा, जैसे ब्रज में ढोला गाया जाता है। या जगदेव का पँवाड़ा गाया जाता है। यह कल्पना की जा सकती है कि लोकगायक सुलतान के ५२ साकों को मंत्रमुग्ध जनता को कई सप्ताहों तक सुनाता होगा। इसका क्या प्रभाव पड़ता होगा ? क्या मनोरंजक कहानियां सुनकर और अंत में अपने पल्ले झाड़कर लोग अपने घर चले जाते होंगे। गोरखनाथ ने सुलतान को यह उपदेश दिया—

'पर की तिरिया नैं हे चेला, माता समझिये,
पर धन नैं धूल समान।
रण मे की जावें उलटा मतना भागिये,
मूडा की सेती झूठ की वोलिये नाथ।'

लोकगाथा में गायक स्थान-स्थान पर सुलतान के सामने प्रलोभन, संकट, भय और रोमांचकारी स्थितियां खड़ी करता है, पर सुलतान बारबार इन उपदेशों का स्मरण करता है—

'पर की तिरिया नैं हे चेला माता समझिये,
पर धन नैं धूल समान।
रण में की जावें उलटा मतना भागिये,
मूडा की सेती झूठ की बोलिये नाथ।'

फिर, एक मन-ग्रासी घटना और उचित अवसर पर ये ही जगमगाती पंक्तियां—'Example is better than precept' उदाहरण सुलतान की कहानियों का, उपदेश गोरख के-देवी, हनुमान और शिव की सहायक, श्रोताओं में पल-पल यह आस्था उत्पन्न करते हुए कि सिद्ध हैं, देवता हैं—आपकी पीठ पर हर संकट में सहायता करने के लिए। कथागायकों की प्रभावात्मक गायन शैली श्रोताओं पर कितना प्रभाव न डालती होगी। क्या यही वीरों के लिए वह पाठशाला नहीं थी, जिसमें वे महान मानवीय आदर्शों को जीवन में ग्रहण करते होंगे और सुलतान की भांति अपने भी जीवन में उन्हें उतारते होंगे—यह समझ कर कि यह मात्र आदर्श नहीं, यथार्थ है और जीवन में ढाला जा सकता है। क्या आज भी ऐसी लोकपाठशालाओं की आवश्यकता नहीं है ?

वास्तविक बात यह है कि लोकगाथा या भी प्रभावोत्पादक होती है, जैसे इस कथा सार से ही सिद्ध होता है। पर इसके साथ इसका छन्द या गीत, जो स्वयं एक वैशिष्ट्य रखता है—इसके स्वरो का उतार-चढ़ाव मानव के अवचेतन तक चोट करता है, फिर गुरु परंपरा के सीखे गायक के कौशल पर परवान चढ़ा हुआ स्वर यथार्थों को श्रोताओं के मनश्चक्षुओं के लिए यथार्थ रूप में प्रत्यक्षीकरण कराता है। और गोरख के वे शब्द भी जाते हैं श्रोता की भावना को भी, वह चाह कर भी उन्हे निकाल कर नही फेंक सकता वे कथा गीत म छन्द कर गायक के द्वारा पढ़े गये मन्त्र की तरह प्रभावशाली हो ही जाते हैं इस संभावना का मूल्य आँकना क्या आज अपेक्षित नही ?

कथा तो कथा है, पर उस कथा को यथावश्यक प्रभाव और वातावरण से आवृत तो गायक ही करता है। यदि यह लोकगाथा गायक के शब्दो में पूरी की पूरी प्रकाशित की जाय तो गायक का कौशल भली प्रकार समझा जा सकता है। इस कथासार में ही यह कौशल स्थान-स्थान के दिये गये विवरणो में झाँकता है। ऐम० आई० एक्ट्र एम० ए० का यह कथन ठीक है कि "So in the hero-legends of our nation we may find traces of the thoughts and religions of our ancestors many centuries ago" पृ० XVIII-XIX Hero-Myths and Legends of The British Race.

यथार्थ यह है कि यह लोकगाथा सभी पार्श्वों से ध्यान आकर्षित करती है, और अध्येता को प्रेरित करती है कि लोक-साहित्य विज्ञान की दृष्टि से अध्ययन किया जाय यो भी यह अत्यन्त रोचक है।

इस कथा-सार को पुस्तक रूप मे प्रकाशित करने का सकल्प शुभ है। मैं इसका हार्दिक अभिनन्दन करता हू।

गणतन्त्र दिवस,
२६ जनवरी, १९७२

डॉ० सत्येन्द्र
हिन्दी विभाग,
राजस्थान विश्व विद्यालय,
जयपुर (राज०)।

———

संदर्भ-ग्रंथ

१. कथा सरित्सागर–बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्, पटना ।
२. Ocean of Story by Tawny and Penzer.
३. Types of Indian Oral Tales by Stith Thompson and Roberts,
४. The Golden Bough–by Frazer Part I Vol. II.
५. गोरखबानी–संपादक डॉ० पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ।
६. नाथ-संप्रदाय–लेखक डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ।
७. लखमसेन पद्मावती–ले. दामो ।
८. The legends of the Panjab–By Temple.
९. The Folk-tale by Stith Thompson.
१०. Encyclopaedia of Religion and Ethics.
११. ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन—डॉ० सत्येन्द्र ।
१२. मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन—ले० डॉ० सत्येन्द्र ।
१३. The standard Dictionary of Folklore etc. by Maria Leach.
१४. Hero Myths and Legends of the British Race by M. I. Abbott M.A.
१५. शब्द कल्पद्रुम—ले० राजा राधाकान्त देव, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी ।
१६. हिन्दी शब्दसागर—ना० प्र० सभा, काशी, प्रथम संस्करण ।

आमुख

पिलानी म लोक रजन-समिति की स्थापना के सबध मे सन् १९५३ मे स्वनामधन्य श्री घनश्यामदासजी बिरला के निमत्रण पर मैं मसूरी गया हुआ था। सयोग से महापडित राहुल साकृत्यायन भी उन दिनो वही थे। मैं उनके मसूरीस्थित आवास पर चार-पाच घण्टे उनके साथ ही रहा। उन्होंने बातचीत के सिलसिले म निहालदे-सुलतान की चर्चा चलाई और कहा कि मैंने तो निहालदे के गीत की एक बडी ही सुनी थी जिसने मुझे आकर्षित किया था। राजस्थान तो पवाडो का देश है, वहाँ के जोगियो को तो निहालदे-सुलतान की कथा कण्ठस्थ होगी। उस समय तक निहालदे-सुलतान के कुछ ख्याल मैंने अवश्य पढे थे, सम्पूर्ण कथा की मुझे भी जानकारी नही थी। श्री राहुलजी ने सुझाव दिया कि मै निहालदे-सुलतान की सम्पूर्ण कथा जोगियो से सुनकर एकत्रित करूँ। मसूरी से लौटकर मैंने श्री राहुलजी की *'आदि हिन्दी की कहानियाँ और गीतें'* शीर्षक पुस्तक पढी। इसमे जो कहानियाँ, गीतें सग्रहीत हुई हैं, वे सब एक व्यक्ति रामन माई की कही हुई है। इसमे 'कवर निहालदे' से सबधित निम्नलिखित दो पक्तियाँ दी हुई है—

लिखि-लिखि परवाना भेजै, सती हो रई कवर निहालदे।
भैया भले बसत पै आये, सिर का बाल जलण ना पाये॥

उक्त पुस्तक की भूमिका म श्रीमती होमवती देवी (मेरठ) के निम्नलिखित विचार भी पढने को मिले—

"कँवर निहालदे गीत मेरठ जिले मे बहुत गाया जाता है और इसकी पुराने ढग की छपी हुई पुस्तकें भी बाजार मे बिकती हैं। रामन माई का उक्त गीत की केवल दो ही पक्तियाँ याद रही, पर मुझे यह सारा गीत याद है। निहालदे का प्रेमी नर सुलतान कितनी झझटो के बाद निहालदे को पा सका। ... इन दोनों का प्रथम परिचय निहालदे के बाग मे झूलने के समय हुआ था। यह कथा बडी लम्बी है, और उसके सबध मे जोडे हुए अनेक गीत है। जिस गीत की चर्चा राहुलजी ने की है, उसे हमारे यहा 'कवर निहालदे का बारहमासा' कहते हैं। यह सावन मे गाया जाता है। इसकी कथा सक्षेप मे इस प्रकार है कि नर सुलतान युद्ध म जाने लगा, तो निहालदे ने उसे वचनबद्ध कर लिया कि वह सावन की तीज (हरियाली तीज) तक अवश्य लौट आयगा, अन्यथा निहालदे सती हो जायगी और समझ लेगी कि सुलतान अब इस ससार मे नही है। अस्तु, ऐसा ही हुआ। पूरे बारह मास

निहालदे ने प्रतीक्षा म काटे, पर सुलतान नही लौटा। इसी पर यह बारह मासा जोड़ा गय प्रतीत होता है। निहालदे सखियो से विनती करके अपने प्रिय नर सुलतान के पास सदेश भेजन को कहती है और बादी को आदेश करती जाती है—

बांदी ऐसा खत लिखवइयो, मेरे मरम की सुनके आवें,
रोय-रोय कह रई कवर निहालदे।
सखि, यो आया सावन महिना, सब सब पाट रगावें–सब-सब
डोर बटावें, बैठी झुरवे कवर निहालदे।
राजा भले बसत प आए, सिर के केस जलन नहीं पाए,
सत्ती हो रई कवर निहालदे।
सखि, या आया भादों महिना, बिजली चमक डरावै, झुक रई,
रैन अधेरी, बैठी झुरवै कवर निहालदे।
बादी ऐसा खत लिखवइयो, मेरे मरम की सुनके आवें
रोय-रोय कह रई कवर निहालदे।
सखि यो आया क्वार महिना सब-सब चौक पुरावे-सब-सब
तिलक सजोवे, बैठी झुरवै कवर निहालदे।
सखि, यो आया कातक महिना, सब सब दिवले बलावें,
बैठी झुरवै कवर निहालदे।
सखि यो आया अघन महिना, सब-सब हार गु थावें–सब-सब,
माग भरावें, बैठी झुरवै कवर निहालदे।
सखि, यो आया पूस महिना, सब सब सौड भरावें सब सब,
पलग बिछावे, बैठी झुरवे कवर निहालदे।
सखि, यो आया माह महिना, सब-सब गींठी तपावें, तत्ते,
जल से नहावें बैठी झुरवे कवर निहालदे।
सखि, यो आया फागण महिना, सब-सब रग घुलावें–सब सब,
फगुवा चढावे, बैठी झुरवै कवर निहालदे।
सखि, यो आया चैत महिना सब सब खिडकी झकावे, सब सब,
चादनी लखाव बैठी झुरवे कवर निहालदे।
सखि यो आया बैसाख महिना, सब सब बिजन डुलावें,
बैठी झुरवै कवर निहालदे।
सखि यो आया जेठ महिना, बन की कली मुरझावे, खस के
बगले छवावें, बैठी झुरवे कवर निहालदे।
सखि, यो आया साढ महिना सब सब तपन बुझावें बन के
मोर चिंघाडे, बैठी झुरवै कवर निहालदे।
स्वामी भले बसत पै आए, सिर के केस जलन नहीं पाए
सत्ती हो रई कवर निहालदे।"

राहुलजी की बात मुझे लग गई और मैं एक ऐसे जोगी की तलाश में लगा जिसे निहालदे सुलतान की सम्पूर्ण कथा कंठाग्र हो। संयोग से एक दिन एक बर्फ बेचने वाला मेरे यहां आया। बच्चे बर्फ खरीद रहे थे। मैं भी वहां पहुँचकर बर्फ बेचने वाले से बात करने लगा। बातचीत के सिलसिले में पता लगा कि उसे सम्पूर्ण निहालदे-सुलतान कंठाग्र है और वह लिखवा भी सकता है। बर्फ बेचने वाले का नाम जयदयालनाथ था। दूसरे ही दिन मैंने उसे घर बुलाया। एक लिपिक की नियुक्ति की और कथा का लिखवाया जाना प्रारम्भ हो गया। कथा लिखवाने में कई महीने लगे और कथा १० बड़े सजिल्द रजिस्टरों में पूरी हुई जो आज बी. आई टी. एस के पुस्तकालय में सुरक्षित है।

एक बार मन में विचार आया कि सम्पूर्ण कथा का गद्यात्मक पाठ (मरु-भारती) में क्रमशः प्रकाशित कर दिया जाय। मरु-भारती के एक अंक में थोड़ा-सा मूल पाठ प्रकाशित भी हुआ किन्तु बाद में इसे अव्यावहारिक समझकर छोड़ दिया गया। अतः मैंने निश्चय किया कि मूल पद्यात्मक कथा के आधार पर 'मरु भारती' में उसका गद्यात्मक रूप क्रमशः प्रकाशित किया जाय। इस निश्चय के पीछे व्यावहारिकता थी। अतः सपूर्ण कथा तीन खण्डों में क्रमशः मरु-भारती में प्रकाशित हो गई। राहुलजी के जीवन-काल में ही निहालदे-सुलतान की सपूर्ण कथा मरु भारती में निकल चुकी थी। जब मैंने जिल्द बंधवाकर संपूर्ण कथा उनके पास भेजी तो १२-८-१९६१ का लिखा हुआ उनका निम्नलिखित पत्र मुझे मिला—

"निहालदे सुलतान का भाग मुझे सिंहल में ही मिल गया था। सन् १९५० में उसकी कुछ पंक्तियां जब मुझे पहले-पहल सुनने को मिली, तभी से मैं उसकी तरफ आकृष्ट हुआ था। उसके अनेक टेप रिकार्ड होने चाहिए, यही क्यों, राजस्थान के सभी पवाड़ों को सुरक्षित करने की आवश्यकता है। आपका ध्यान इधर गया है, यह शुभ लक्षण है।"

मरु-भारती में प्रकाशित निहालदे-सुलतान की कथा को पढ़कर महापंडित राहुल सांकृत्यायन के अतिरिक्त डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ० सत्येन्द्र, डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय आदि लोकवार्ताशास्त्र के विशेषज्ञ विद्वानों ने भी उसकी प्रशंसा की और मेरे उत्साह को बढ़ाया। सुप्रसिद्ध उद्योगपति और लेखक श्री लक्ष्मीनिवासजी बिरला ने भी इस कथा को पढ़कर नवीन पद्धति पर अंग्रेजी में सुलतान निहालदे शीर्षक उपन्यास लिखा जो भारतीय विद्या-भवन बंबई से प्रकाशित हुआ और विद्वानों में भी जिसका समादर हुआ।

सुलतान के ५२ साके प्रसिद्ध हैं और निहालदे-सुलतान की कथा इतनी बृहत्, अद्भुत और रोमांचक है कि जिसके आधार पर उपन्यास, नाटक, एकांकी आदि साहित्य की अनेक विधाओं पर कुशल कलाकार अपनी लेखनी की करामात दिखला सकते हैं। इतना ही क्यों, कोई चित्रपट-लेखक इसके आधार पर फिल्म-कथा भी तैयार कर सकता है।

निहालदे-सुलतान की कथा राजस्थान और हरयाणा में तो विशेष रूप से प्रचलित है ही किन्तु जान पड़ता है कि मेरठ आदि अन्य प्रदेशों में भी इस कथा ने यात्रा की होगी और जहां-जहां यह कथा पहुँची होगी, वहीं अपनी पकड़ने वाली धुन, संगीत, कथा प्रसंग

आदि की रमणीयता के कारण यह कथा लोकप्रिय हो गई होगी। पुरुषों की यात्राओं की भांति कथाएँ भी घुमक्कड़ प्रवृत्ति की होती है और यदि स्वयं कथाओं में बड़ा आकर्षण हुआ तो उनके फैलने में देर नहीं लगती।

यद्यपि मरु-भारती में प्रकाशित होने के बाद इस कथा की कुछ अनुमुद्रित प्रतियां विद्वानों की सम्मति प्राप्त करने के लिए तैयार करवाली गई थीं तथापि सम्पूर्ण कथा पुस्तकाकार में अद्यावधि प्रकाशित नहीं हुई थी। श्री हलवासिया ट्रस्ट ने निहालदे-सुलतान के प्रकाशनार्थ जब १५००) रुपये की सहायता प्रदान करदी तब उक्त पुस्तक के मुद्रण का कार्य भी सरल हो गया। मैं हलवासिया ट्रस्ट के अधिकारियों को इस सहायता के लिए हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

लोकवार्ता विज्ञान के सुप्रसिद्ध विशेषज्ञ डॉ० सत्येन्द्र से जब मैंने इस पुस्तक की भूमिका लिखने के लिए आग्रह किया तो उन्होंने अपने सहज सौजन्यवश मेरे आग्रह की रक्षा की और भूमिका लिखना स्वीकार कर लिया। कहना न होगा कि डॉ० सत्येन्द्र हमारे देश में लोक-साहित्य विज्ञान के 'पथिकृत्' विद्वानों में सुप्रतिष्ठित हैं और उन्होंने जिस अध्यवसाय, लगन और निष्ठा से यह भूमिका लिखी है, उससे मैं अत्यन्त उपकृत हुआ हूँ। निश्चय ही लोक-वार्ता शास्त्र का वैज्ञानिक अध्ययन हमारे देश में अधिकाधिक बढ़ता रहेगा। उस समय निहालदे-सुलतान जैसी इस विलक्षण कथा पर प्रकाश डालने वाली इस भूमिका को भी लोक-साहित्य विज्ञान के अध्येता अपनी तत्स्पर्शिनी दृष्टि से पढ़ेंगे और यह भी संभव है कि इसके परिणामस्वरूप इस कथा के अन्य अनेक रूप भी विद्वानों के समक्ष आएंगे।

बी. आई टी एस पुस्तकालय के ग्रन्थपाल श्री हेमन्त मेहता तथा उनके सहयोगी भी हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इस काम में लेखक की सहायता करने में सदा तत्परता दिखाई है।

अन्त में फ्रेंड्स प्रिंटर्स एण्ड स्टेशनर्स के श्री पोद्दारजी के प्रति भी मैं अपना आभार प्रकट किए बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने सुन्दर साज सज्जा के साथ इस ग्रंथ को यथासमय प्रकाशित करने में अपना पूर्ण सहयोग दिया है। ग्रंथ के अंदर जो चित्र दिए गए हैं, उनके लिए मैं श्री सूरतसिंह जी शेखावत तथा श्री मातूरामजी वर्मा का हृदय से आभारी हूँ।

पिलानी
रामनवमी, वि० सं० २०२६

कन्हैयालाल सहल

विषय सूची निहालदे-सुलतान

भाग-१

आदि की रमणीयता के कारण यह कथा लोकप्रिय हो गई होगी। पुरुषों की यात्राओं की भाँति कथाएँ भी घुमक्कड़ प्रकृति की होती है और यदि स्वयं कथाओं मे बड़ा आकर्षण हुआ तो उनके फैलने मे देर नही लगती।

यद्यपि मरु-भारती मे प्रकाशित होने के बाद इस कथा की कुछ अनुमुद्रित प्रतियाँ विद्वानो की सम्मति प्राप्त करने के लिए तैयार करवाली गई थी तथापि सम्पूर्ण कथा पुस्तकाकार मे अद्यावधि प्रकाशित नही हुई थी। श्री हलवासिया ट्रस्ट ने निहालदे-सुलतान के प्रकाशनार्थ जब १५००) रुपये की सहायता प्रदान करदी, तब उक्त पुस्तक के मुद्रण का कार्य भी सरल हो गया। मैं हलवासिया ट्रस्ट के अधिकारियो को इस सहायता के लिए हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

लोकवार्ता विज्ञान के सुप्रसिद्ध विशेषज्ञ डॉ० सत्येन्द्र से जब मैंने इस पुस्तक की भूमिका लिखने के लिए आग्रह किया तो उन्होंने अपने सहज सौजन्यवश मेरे आग्रह की रक्षा की और भूमिका लिखना स्वीकार कर लिया। कहना न होगा कि डॉ० सत्येन्द्र हमारे देश मे लोक-साहित्य-विज्ञान के 'पथिकृत्' विद्वानो में सुप्रतिष्ठित है और उन्होंने जिस अध्यवसाय, लगन और निष्ठा से यह भूमिका लिखी है, उससे मे अत्यन्त उपकृत हुआ हूँ। निश्चय ही लोक-वार्ता शास्त्र का वैज्ञानिक अध्ययन हमारे देश मे अधिकाधिक बढ़ता रहेगा। उस समय निहालदे-सुलतान जैसी इस विलक्षण कथा पर प्रकाश डालने वाली इस भूमिका को भी लोक-साहित्य विज्ञान के अध्येता अपनी तलस्पर्शिनी दृष्टि से पढेंगे और यह भी संभव है कि इसके परिणामस्वरूप इस कथा के अन्य अनेक रूप भी विद्वानो के समक्ष आएगे।

बी. आई टी एस पुस्तकालय के ग्रन्थपाल श्री हेमन्त मेहता तथा उनके सहयोगी भी हार्दिक धन्यवाद के पात्र है जिन्होंने इस काम मे लेखक की सहायता करने मे सदा तत्परता दिखाई है।

अन्त मे फ्रेंड्स प्रिंटर्स एण्ड स्टेशनर्स के श्री पोद्दारजी के प्रति भी मै अपना आभार प्रकट किए बिना नही रह सकता, जिन्होंने सुन्दर साज-सज्जा के साथ इस ग्रंथ को यथासमय प्रकाशित करने मे अपना पूर्ण सहयोग दिया है। ग्रंथ के अंदर जो चित्र दिए गए है, उनके लिए मैं श्री सूरतसिंह जी शेखावत तथा श्री मादूरामजी वर्मा का हृदय से आभारी हूँ।

पिलानी
रामनवमी, वि० सं० २०२६

कन्हैयालाल सहल

विषय सूची निहालदे-सुलतान

१

निहालदे-सुलतान

१. सुलतान का जन्म

चकवे बैन के पुत्र मैनपाल के सात रानियां थी, किन्तु उनमे से संतान किसी के भी नही थी। राजा के पंडितो ने भी जब उससे कहा कि तुम्हारे सन्तान का कोई योग नहीं है तो राजा बड़ा दु:खी हुआ। एक दिन राजा घोड़े पर चढ कर शिकार के लिए गया और आगे भगते हुए एक हरिण पर उसने बाण चलाया। हरिण एक पहाड की गुफा मे घुस गया। राजा ने भी उसका पीछा किया किन्तु गुफा मे प्रवेश करने पर राजा क्या देखता है कि उस हरिण ने तो गोरखनाथ का रूप धारण कर रखा है। राजा ने गोरखनाथ के चरणो मे अपना शीश झुकाया किन्तु गोरखनाथ की समाधि लगी हुई थी, इसलिए राजा उनके पास बैठा रहा। राजा को वहाँ बैठे हुए जब कई दिन हो गये और उसकी क्षुधा जाग्रत हो उठी, तो उसके मन में आया कि इस समय रानी करणावती मुझे भोजन कराती तो कितना अच्छा होता! राजा के मन में इस भावना के उत्पन्न होते ही रानी करणावती उसके वामाग के पास आकर बैठ गई। राजा ने पलक उठा कर देखा और सोचने लगा कि यह कैसी माया है! जो मन मे इच्छा की, वही पूरी हो गई! इतने मे गोरखनाथ की पलकें खुली और उन्होंने अपने झोले से एक जौ का दाना निकाल कर रानी को दिया। रानी ने जौ खा लिया और उसी दिन उसके गर्भ रह गया। गोरखनाथ से जब राजा ने कहा कि मैं यहाँ कई दिनो का बैठा हुआ हूँ, मुझे भी कुछ भोजन मिलना चाहिए तो गोरखनाथ ने उत्तर दिया—'हे राजन! तुमने मेरे पैर मे बाण मारा था जिससे मेरा जी बड़ा दु:खी हुआ था। ऐसे दुष्ट को भोजन नहीं मिल सकता, मेरे 'धूणे' से भी तू उठ जा। तू अपनी रानी करणावती को लेजा और उसी के हाथ से महलो मे भोजन जीम।' गोरख के इन वचनो को सुनकर राजा ने रानी को अपने घोड़े पर बिठलाया और दोनो चलकर कीचलगढ आ पहुँचे।

कीचलकोट के महलो मे जीमते समय राजा ने अपनी रानी करणावती से पूछा कि यह कैसी माया थी कि स्मरण करते ही तू मेरे पास पहुँच गई थी। रानी ने कहा कि यह तो मुझे भी पता नहीं किन्तु इतनी बात अवश्य थी कि जब मैं आपके पास आई, उस समय मुझे सन्तान की इच्छा थी। उस साधु ने मुझे जौ का दाना दिया था, वह मैंने खा लिया किन्तु वह साधु कौन था, इसका मुझे पता नहीं।

भोजनोपरान्त जब रानी सो गई तो उसे स्वप्न में गोरखनाथ दिखलाई पड़े। गोरखनाथ ने कहा— बेटी ! तू किसी बात से मत घबरा, नवें महीने तुम्हारी कोख से एक ऐसा करामाती पुत्र उत्पन्न होगा जो सातों पीढ़ियों को उज्ज्वल कर देगा।" इतने में रानी जग गई। दासी भेज कर उसने राजा को बुलाया और स्वप्न का सब हाल कह सुनाया। राजा भी यह जानकर बड़ा प्रसन्न हुआ कि उस पर गोरखनाथ की कृपा हो गई है।

यथासमय राजा के पुत्र उत्पन्न हुआ। कीचनकोट में सर्वत्र आनन्द-उछाह की लहर दौड़ गई। पंडितों ने राजा से कहा कि आपके संतान का योग तो नहीं था, इस पुत्र का जन्म तो किसी असाधारण माया के प्रभाव से ही हुआ है। पुत्र का नाम सुलतान रखा गया।

२. देश निकाला

सात वर्ष का होने पर उसे पढ़ने के लिए भेजा गया। सुलतान अपने तीर-कमान से साथियों को लेकर खेला करता था। पनिहारिनें कुएँ पर पानी भरने आतीं, तीर का निशाना लगा कर वह उनके घड़े फोड़ डालता। जब राजा के पास फरियाद पहुँची तो राजा ने सब पनिहारिनों के लिए तांबे के कलश बनवा दिये। कुँवर ने भी अपने धनुष-बाण पक्के बनवा लिये। एक दिन तीर चलाकर सुलतान ने एक ब्राह्मणी की लड़की के कलश को फोड़ डाला। लड़की राजा की कचहरी में पहुँची और सारा हाल कह सुनाया और कहा कि दण्ड-स्वरूप कुँवर को १२ वर्ष का देश निकाला मिलना चाहिए, अन्यथा मैं उसे शाप दूँगी। दीवान ने कहा कि १२ वर्ष के बजाय कुँवर को १२ घड़ी का देश निकाला मिलना चाहिए क्योंकि राजा के एक ही लड़का है और उसका वियोग राजा के लिए असह्य होगा। ब्राह्मण की लड़की ने दीवान की बात मान ली किन्तु राजा जब हुक्म लिखने लगा तो १२ घड़ी के स्थान में १२ वर्ष की कलम बह गई। काला घोड़ा और काले वस्त्र कुँवर के लिए मंगवाये गये। सर्वत्र उदासी छा गई। माता करणावती से विदा लेकर कुँवर देशाटन के लिए चल पड़ा। चलते चलते वह गोरखनाथ के 'धूणे' के पास पहुँचा। घोड़े से उतर कर सुलतान ने गोरख के चरणों में शीश नवाया और अपना सारा हाल कह सुनाया। गोरख ने कहा—"इस १२ वर्ष की तपस्या को तू पूरा कर। पर स्त्री को माता समझना और पराये धन को धूल। मुँह से झूठ न बोलना, युद्ध में पीठ न दिखाना। ५२ 'साके' तुमसे होंगे, उनकी सिद्धि का वरदान तुम्हें दे रहा हूँ। भीड़ पड़ने पर मेरा स्मरण करना, मैं तेरे सब संकट काट दूँगा।" घोड़ा धूणे के बांध दिया गया, काले वस्त्र उतरवा दिये और भगवां पहनवा दिये, सारे शरीर में विभूति रमवा दी और सुलतान के हाथ में भिक्षा-पात्र देकर गोरख ने कहा कि सीधे ईडरकोट चले जाना। वहाँ सवा पहर तो तुम दाने माँगोगे, बाद में कष्ट नहीं पाओगे। ईडरकोट पहुँचने पर जब सुलतान को दान माँगते हुए सवा पहर बीत गया तो कमधज राव की सवारी सदर बाजार से निकली घोड़े की 'फेट' से दाने बिखर गये और सुलतान रोने लगा। कमधज राव ने घोड़े से उतर कर सुलतान का हाथ पकड़ा और उससे अपने माता पिता का हाल पूछा। सुलतान ने

कहा कि मेरे कोई माता पिता नहीं, आसमान ने मुझे नीचे गिरा दिया और धरती माता ने मुझे झेल लिया इस पर कमधज राव ने सुलतान से कहा—"तुम घबराओ नहीं, तुम मेरे आज से धर्म के पुत्र हुए।" कमधज राव के पुत्र का नाम था फूलकुँवर। उसको लक्ष्य करके सुलतान ने कहा—"हे राजन्! फूलकुँवर मुझ से मन मे भेद रखेगा, उसकी माता उसे बहका देगी।" किन्तु कमधज राव ने उत्तर दिया—"तुम किसी बात की चिन्ता न करो, फूलकुँवर तो पाप का पुत्र है और तुम हुए मेरे धर्म के पुत्र।" जब सुलतान ईडरगढ पहुँचा तो उसके सौदर्य और तेज को देखकर सब मुग्ध हो गये। उसके पैरो मे पद्म और मस्तक में मणि थी। कमधज राव सुलतान को लेकर रानी के पास पहुँचा और सुलतान से कहा कि यह तुम्हारी धर्म की माता है और रानी से कहा कि हे रानी! इसे फूलकुँवर से भी अधिक मानना। रानी ने उत्तर दिया कि यदि मैं 'दुभाँत' करूँ तो आप मुझे 'दुहाग' दे दें। राजा ने कहा—'रानी! पराये पूत का रखना बडा दुष्कर कार्य है—हो सकता है, छोटी-सी बात पर तुम्हें क्रोध आ जाय।' रानी ने कहा—'यदि मैं अपने वचन का पालन न कर सकूँ तो आप धड से मेरा शीश अलग करवा दें।' इस प्रकार सुलतान बडे सुखपूर्वक कमधज राव के यहाँ रहने लगा। फूलकुँवर के साथ ही उसे राजनीति की शिक्षा दी जाने लगी। घुडसवारी करना भी वह सीखने लगा।

एक बार फूलकुँवर और सुलतान शिकार के लिए गये। एक कृष्ण मृग का पीछा करते करते वे केलागढ के पास आ पहुँचे। मृग केलागढ के बाग मे छलांग मार कर चला गया। सुलतान का घोडा भी मृग के पीछे-पीछे बाग में कूद गया, परन्तु फूलकुँवर का घोडा न कूद सका। बाग के दरवाजे पर रानी निहालदे की सवा सवा लाख कीमत की मोचडी (जूती) रखी हुई थी। मोचडी लेकर फूलकुँवर ईडरगढ वापिस चल दिया। जिस समय सुलतान बाग मे पहुँचा, रानी निहालदे अपनी बहिन के साथ झूला झूल रही थी। सुलतान को देख कर दोनो बहिनो का कलेजा धक-धक करने लगा कि यह घोडे का सवार कहाँ से आ गया! किन्तु उस समय वर्षा होने लगी थी। इसलिए वे भाग कर न जा सकी। निहालदे के दिल की बात जान कर सुलतान कहने लगा—"हे लडकी! क्या कारण है कि तू इतने समय तक अविवाहित रह गई? क्या तुझे अपनी जोडी का स्वामी नही मिला? अथवा पिता के अर्थाभाव के कारण तेरी शादी नही हुई अथवा किसी राजा ने तुम्हारे यहाँ से गया हुआ टीका स्वीकार नही किया?" इस पर निहालदे ने उत्तर दिया—"मैं मध राजा की पुत्री हूँ और हमारे यहाँ धन की कोई कमी नही। मैनपाल के पुत्र सुलतान के लिए टीका भेजा गया था, किन्तु मैनपाल ने अपने पुत्र को देश निकाला दे दिया था, इसलिए वह टीका स्वीकार नही किया गया। फिर मेरे पिता ने कमधज के लडके फूलकुँवर के साथ मेरी सगाई कर दी। किन्तु तुम यह बताओ, इस बाग मे कैसे आ गये? यदि मेरे पिता को तुम्हारी खबर लग गई तो तुम्हारी जान खतरे मे है।' यह सुनकर सुलतान मुस्करा कर बोला—'कीचलकोट मे जिस ढोल सुलतान के साथ तुम्हारे सम्बन्ध की चर्चा चली थी, वह मैं ही हूँ, मुझे ही १२ वर्ष का देश निकाला दिया गया है—अब

भी हम दोनो का सम्बन्ध हो सकता है, यदि तुम अन्न-जल ग्रहण न करने की प्रतिज्ञा करो, केलागढ मे स्वयवर रचवा दो, मत्स्य को ऊँचा टँकवा दो, नीचे तेल का कडाह भरवाओ और यह कहो कि तेल मे प्रतिबिम्ब देखकर जो मत्स्य-वेध कर सकेगा, उसी के साथ म विवाह करूँगी।' निहालदे और सुलतान का परस्पर प्रेम हो गया। निहालदे ने सुलतान को बहुत रोकना चाहा, किन्तु वह घोडे पर सवार होकर ईडरगढ के लिए रवाना हो गया।

जब सुलतान लौट कर आधी रात को ईडरगढ पहुँचा तो कमधज राव और उसकी रानी उसे देखकर बहुत प्रसन्न हुए। फूलकुँवर के लौटने के बाद बडी उत्कण्ठा से वे उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उधर निहालदे जब महलो म देर से पहुँची तो उसकी माता ने उससे विलम्ब का कारण पूछा। छोटी बहिन ने घुडसवार (सुलतान) और निहालदे के आकस्मिक मिलन का सब हाल माता से कहा। माता निहालदे से बहुत रुष्ट हुई और कहने लगी कि पर-पुरुष से बातचीत करके तू हमारे कुल को कलक लगायेगी। निहालदे ने यह सुनकर अपनी माता से कहा कि मै उसी सुलतान से बात कर रही थी, जिसके साथ मेरी सगाई निश्चित हुई थी। हे माता! मैने तो दृढ प्रण कर लिया है कि मैं तभी अन्न-जल ग्रहण करूँगी जब सुलतान के साथ मेरे सम्बन्ध की तू स्वीकृति दे दे।

३ स्वयवर और विवाह

निहालदे के प्रण को सुन कर उसकी माता ने उत्तर दिया—"बेटी! तुम्हारी सगाई तो पहले ही हो चुकी है। अब यदि तुम्हारा पिता अपने वचन को तोड देता है तो समाज मे उसकी क्या प्रतिष्ठा रह जायगी।" इस पर निहालदे कहने लगी—"सूर्य चाहे पूर्व से पश्चिम मे उदित होने लगे, चाहे पिता धड से मेरा सिर अलग कर दें, चाहे मुझे विष भक्षण ही क्यो न करना पड़े, मैने जिस सुलतान को अपना पति स्वीकार कर लिया है, उसे छोड कर अब मै किसी अन्य पुरुष का स्वप्न मे भी ख्याल नही कर सकती।" यह सुन कर निहालदे की माता ने अपने पति से सब हाल कह सुनाया। इस पर राजा ने निहालदे को अपने पास बुला कर सच्ची-सच्ची बात कहने के लिए कहा। निहालदे कहने लगी—"पिताजी! पहले-पहल आपने मेरी सगाई सुलतान से की थी। फिर जब उसके पिता ने उसे देश-निकाला दे दिया, तब आपने मेरी सगाई ईडरगढ कर दी किन्तु पिताजी! उस सुलतान को आज मैंने आँखो देख लिया, एक बार जिसमे मेरा सम्बध हो चुका उसे छोड क अब मैं किसी दूसरे पुरुष को वरण नही कर सकती।" निहालदे का पिता केलागढ क अधिपति बडी दुविधा मे पड गया और कहने लगा—"बेटी! एक बार जिसे मैं वचन दे चुका, अब मैं कैसे मुकर जाऊँ? क्या तू नही जानती कि वचन और बाप तो एक ही होते है।

"वचन बाप की है बेटी! दुनिया मे एक है।" इस पर निहालदे कहने "पिताजी! इस सकट से निकलने का एक उपाय मै आपके सामने रख रही हूँ। केलागढ मे मेरा स्वयवर रचवा दें, ऊँचे बाँस पर मत्स्य टँकवा दें, नीचे तेल का

भरवा दें और यह घोषणा करवादें कि तेल में प्रतिबिम्ब देख कर जो मत्स्य-वेध कर सकेगा, उसी के गले में निहालदे वर-माला डाल देगी।" पुत्री द्वारा बतलाई हुई इस युक्ति से मघपतराव बड़ा प्रसन्न हुआ।

निहालदे के स्वयवर के सम्बन्ध में सब राजाओं को परवाने भेज दिये गये। एक परवाना ईडरगढ़ भी पहुँचा। परवाना पढ़ कर फूलकुँवर क्रोध से आगबबूला हो गया और कहने लगा—'ऐसा कौन राजा है जो मेरी 'माँग' से विवाह करेगा? उस मैं युद्ध में परास्त कर दूँगा। साथ ही मघपतराव को मिट्टी में मिला दूँगा जिसने एक बार अपनी लड़की की मेरे साथ सगाई करके अब स्वयवर रचाने की ठानी है।" फूलकुँवर के पिता ने कहा—'इस प्रकार युद्ध मोल लेना राजनीति नहीं। निहालदे के हठ के कारण मघपतराव को विवश होकर स्वयवर की तैयारी करनी पड़ी है इसमें उसका कोई दोष नहीं। तुम्हारा कर्तव्य है कि मत्स्य-वेध करके तुम निहालदे को प्राप्त करो।" पिता की बात सुन कर फूलसिंह कुछ शान्त हुआ।

कमधजराव ने केलागढ़ चलने की तैयारी की। फूलकुँवर ने वर का बाना धारण किया और सजधज कर वह हाथी के हौदे में बैठ गया। फूलकुँवर की बहिन ने आरती उतारी। सुलतान भी एक घोड़े पर सवार हुआ। ५०० अन्य योद्धा साथ ले लिये और बड़े गाजे-बाजे के साथ फूलकुँवर की बरात केलागढ़ पहुँची। केलागढ़ में जो विवाहार्थी राजा इकट्ठे हुए थे, उन्होंने जब सुलतान को पहले पहल देखा तो देखते ही सबके सब हतप्रभ हो गये। सुलतान के माथे पर पदमणि दीप्त हो रही थी उसके सौंदर्य और प्रताप को देख कर चित्त उल्लसित और विस्मय विमुग्ध हो उठता था, नौ लाख ताराओं में जिस प्रकार चन्द्रमा अपना प्रकाश फैलाता है, उसी प्रकार सब राजाओं में सुलतान सुशोभित हो रहा था। सब राजाओं ने मन ही मन में सोचा—"सुलतान निश्चय ही मत्स्य-वेध करेगा और निहालदे इसी के गले में जय माला डालेगी।"

फूलकुँवर की सगाई निहालदे के साथ हुई थी। इसलिए निहालदे के पिता ने घोषणा की कि मत्स्य वेध का सबसे पहला अवसर फूलकुँवर को दिया जायेगा। वह यदि इसमें असफल रहा तो अन्य राजा अपना अपना भाग्य आजमायेंगे। फूलकुँवर ने तीर-कमान हाथ में लिये और अपने गुरु तथा इष्टदेव का स्मरण किया। अपने घोड़े पर सवार होकर उसने कहा— हे घोड़े! मेरी लज्जा रखना, कहीं ऐसा न हो कि हम दोनों कड़ाह में जाकर गिर पड़ें।" इतना कहकर फूलसिंह ने घोड़े के चाबुक लगाया। घोड़े ने लम्बी 'कड़छाल' भरी, उधर फूलकुँवर ने तीर चलाया किन्तु तीर निशाने से चूक गया। गनीमत यह हुई कि घोड़ा कड़ाह के दूसरी तरफ जाकर कूदा जिससे घोड़े ने अपने और फूलकुँवर के प्राण बचा लिये।

फूलकुँवर का मान भंग हो गया। कमधजराव को भी नीचा देखना पड़ा। किन्तु कमधजराव ने कहा कि मेरा धर्म का पुत्र बली सुलतान है। मैं चाहता हूँ कि अब उसे मत्स्य वेध का अवसर दिया जाय। इस पर बली सुलतान को डेरे से बुलाया गया। वह

घोडे पर सवार हो, तीर-कमान से सुसज्जित हो चल पडा। उसने गोरखनाथ का स्मरण किया और कहा—"एक दिन कजली वन मे आपने मुझे दर्शन दिये थे और कहा था कि विपत्ति पडने पर मेरा स्मरण करना। हे बाबा ! आज वह घडी आ पहुँची है। यहाँ ५२ गढा से गढपति और ५६ किलो के सरदार एकत्र हुए हैं। मेरी लाज आज आपके हाथ है।"

मत्स्य-वेध करने के लिए सुलतान सब राजाओ के बीच जा पहुँचा। मणिधारी सुलतान का घोडा नृत्य कर रहा था। तेल म मत्स्य को छाया पड रही थी। प्रतिबिम्ब को देखकर सुलतान ने तीर चला दिया। तीर मत्स्य के पेट म जाकर स्थिर हो गया और घोडा कूद कर दूसरी ओर पार हो गया। सभी ने सुलतान को धन्य धन्य कहा। अमघजराव और मघपतराव दोनो ही सुलतान की सफलता से बहुत प्रसन्न हुए। रानी निहालदे ने सुलतान के गले मे वरमाला डाल दी।

निहालदे और सुलतान के विधिवत् विवाह की तैयारियाँ होने लगी। मण्डप ताना गया, वेदी बनाई गई। बडे बडे पडित इकट्ठे हुए। सुलतान सजधज कर हाथी के हौदे पर बैठा। उस पर चँवर डुलाया जा रहा था। हाथी सदर बाजार मे बडी शान से चल रहा था। छत्तीसो जाति के लोग वर को देख कर उसे सराह रहे थे। सुलतान के जगमगाते हुए भाल को देख कर ऐसा लगता था मानो सूय रश्मिया न भी उसी से ज्योति ग्रहण की हो। सुलतान को देख कर सब यही सोच रहे थे—निश्चय ही यह कोई अवतारी पुरुष है। कोई कहता—यह गोपीचन्द का अवतार है, कोई उसे भरथरी बतलाता, कोई अजनी-पुत्र हनुमान बतलाता, कोई कुन्ती-पुत्र अर्जुन अथवा भीम बतलाता, कोई उसे राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न मे स एक बतलाता। कोई कहता—

'एक भी भाण तो ऊग्यो आकाश में,
आज यो दूजो ऊग्यो केलागढ़ माय।"

अर्थात् एक सूर्य तो आकाश म उदित हुआ है और आज यह दूसरा भूमण्डल का सूर्य केलागढ मे उदित हुआ है।

अमघजराव ने अशर्फिया और मोहरो की बौछार की। सारे शहर म उत्साह और उमग की लहर दौड गई।

सुलतान ने तोरण मारा। आरती उतारी गई। फिर भाँवर की तैयारियाँ होने लगी। सुलतान के मुकुट बाँधा गया, जामा पहनाया गया, लाल जरी का पेचा सिर पर बाँधा गया। सजधज कर सुलतान मडप के नीचे बैठा, अन्य सरदार जाजिम पर बैठे। विवाह के गीत गाये जाने लगे। सखी-सहेलियाँ निहालदे के भाग्य को सराहने लगीं। पडित मन्त्रोच्चार पढ़ने लगे। भाँवरो की विधि सम्पन्न होने लगी।

४. बरात की विदाई

विवाह के बाद बरात विदा हुई। सरदारों की परस्पर 'राम-रमो' हुई। मघपत ने अमघजराव स हाथ जोड कर कहा—"हम लोगों के सब अपराध आप क्षमा करियेगा।

आप जैसे नरेश का जैसा स्वागत-सत्कार होना चाहिए था, वह हमसे नहीं बन पड़ा है। हमें तो आपकी उदारता का ही पूरा भरोसा है।" ममपत के इन विनम्रता-भरे वचनों को सुन कर कमधजराव का हृदय भी पसीज उठा।

हाथी-घोड़ों पर सवार होकर बरात के लोगों ने केलाकोट से ईडरगढ की ओर प्रस्थान किया। ईडरगढ पहुँचने पर गाजे-बाजे से बरात ने शहर में प्रवेश किया। छत्तीसों जाति के लोग इस सुन्दर बरात को देखने के लिए एकत्रित हुए। बली सुलतान की सवारी सदर बाजार में से होकर निकली। सुलतान के पीछे हाथी घोड़ों की कतारें चल रही थी। सुलतान के देवोपम सौन्दर्य को देखकर सभी नर-नारी मुग्ध हो गये।

५. रानी का क्षोभ

सुलतान की सवारी चल कर जनाने महल पहुँची। रानी आरती उतारने के लिए आई किन्तु जब उसने सुलतान को हाथी के हौदे पर बैठे देखा और पीछे बैठी हुई देखी कुँवर निहालदे को, तो फूलसिंह की माता के तन बदन में आग लग गयी। नाइन ने दो पाटे डलवा दिये, चौक पूर दिये गये। हाथी से उतर कर एक पाट पर निहालदे खड़ी हो गई और दूसरे पर खड़ा हो गया बली सुलतान। कमधज की लड़की आरती उतारने लगी। पास में अनेक दासियाँ खड़ी थी। घूघट उठा कर जब कमधज की लड़की ने निहालदे के मुख को देखा तो उसके अप्रतिम लावण्य और भव्य सौन्दर्य को देख कर वह चित्र लिखी-सी रह गई।

उधर फूलसिंह को उदास देख कर उसकी माता अत्यन्त दुःखी हुई और अपने पति कमधजराव से कहने लगी—"हे पतिदेव। निहालदे तो मेरे पुत्र फूलसिंह की 'माँग' थी, इस सुलतान से जो हमारे सेवक के तुल्य है, आपने उसका विवाह कैसे होने दिया?" यह सुनकर कमधजराव ने उत्तर दिया—"हे रानी। सुलतान को नौकर मत कहो, फूलसिंह पाप का, और यह मेरे धर्म का पुत्र है। बावन गढपतियों में इसी सुलतान ने मेरी लाज रखी थी। मत्स्य-वेध का सबसे पहला अवसर फूलसिंह को दिया गया था किन्तु वह मत्स्य-वेध में असफल हुआ जिससे मुझे नीचा देखना पड़ा और हमारे कुल की वीरता को भी दाग लगा। केलाकोट में यदि उस समय सुलतान उपस्थित न होता तो कौन मत्स्य वेध करता और कौन मेरी बात रखता? इसलिए हे रानी! सुलतान पर नाराज होने का कोई कारण नहीं है, उसे तो गले से लगाना चाहिए। मैं तो इसे फूलसिंह से भी इक्कीस मानता हूँ।

इतना कह कर कमधजराव तो वहाँ से चला गया किन्तु फूलसिंह की माता वैसे ही क्रोध की आग में जलती रही। पास में ही निहालदे और सुलतान खड़े थे किन्तु उसको फूटी आँखों भी नहीं सुहाते थे। उनसे बातचीत करना तो दूर, वह उनकी ओर देखती भी न थी। इस पर फूलसिंह की बहिन ने अपनी माता से कहा—"तुम्हारे फूलसिंह के सत्रह रानियाँ हैं किन्तु उनमें से कोई निहालदे के पैरों के बराबर भी नहीं है।" यह सुन कर तो

रानी की क्रोधाग्नि और भी प्रज्वलित हो उठी। अब वह सुलतान की ओर उन्मुख होकर कहने लगी—'अरे भिखारी! यह निहालदे तो मेरे फूलसिंह की माँग थी। तूने किस प्रकार इससे विवाह करने की हिम्मत की? जिस दिन तू मेरे ईडरकोट में आया था, तू दाने माँग कर किसी प्रकार अपना निर्वाह किया करता था। अरे भिक्षुक! क्या तू इस बात को भूल गया कि जब मेरे पतिदेव की सवारी निकली थी, तेरा भिक्षा-पात्र फूट गया था और तू आठ आठ आँसू रोने लगा था? तब मेरे पति ने दया कर तुझे उठा लिया था। वह भिक्षा पात्र आज भी महल में पड़ा है। उसे लेकर पहले की तरह भीख माँग। मेरे शहर में तेरे लिए कोई स्थान नहीं, अब पानी की तलाक है जो मेरे शहर में रहे।"

६. सुलतान और निहालदे का वार्तालाप

यह सुन कर निहालदे और सुलतान दोनों अत्यन्त उदास हो गये। सुलतान तुरन्त पाट से उतर गया और कहने लगा—"हे माता! जब तुमने सौगन्ध दिलवादी है तो मैं यहाँ का अन्न जल ग्रहण नहीं करूँगा। भगवान् जिस तरह रखेगा, उसी प्रकार जीवन बसर करूँगा। सुलतान के इन वचनों को सुनकर मघराज की लाडली दुहिता निहालदे सिसकियाँ भर-भर कर रोने लगी। सच है उफला समुद्र नहीं रुकता। निहालदे का हृदय रूपी समुद्र अपनी सीमाओं के बन्धन को तोड़ कर नेत्रों के मार्ग से बहने लगा। आँखों में आँसुओं का समुद्र उमड़ाते हुए वह सुलतान से कहने लगी—'हे पतिदेव! मुझ अकेली छोड़ कर आप कहाँ जा रहे हैं? यहाँ न तो मेरा ससुराल है न पीहर। बिराने लोगों के बीच आप मुझे छोड़ रहे हैं और फिर अभी तो विवाह के अवसर पर किया जाने वाला देवी-देवताओं का पूजन भी सम्पन्न नहीं हुआ, न अभी रात्रि-जागरण (रातीजगा) ही हो पाया है। हे पतिदेव! मेरे दिल की तो दिल में ही रह गई। अभी तो मेरे हाथों की मेहँदी भी वैसी की वैसी रची हुई है। हे मेरे जन्म-जन्म के स्वामी! इस अवस्था में मुझे अकेली छोड़ कर क्या अन्यत्र चला जाना आपको शोभा देगा?"

सुलतान ने उत्तर दिया—"रानी! धर्म की माता के वचन मैं नहीं टाल सकता हूँ, तुम्हारी व्यवस्था मैं किये जाता हूँ। उदाँ नामक भाट की लड़की तुम्हारी टहल करती रहेगी। तुम जो काम उसे सौंपोगी, उसकी तामील वह करती रहेगी। कमधजराव मेरे धर्म के पिता हैं। उन्हें सौंप कर तुमसे विदा लूँगा। वे तुम्हें अपनी लड़की की भाँति रखेंगे हे रानी! तू धैर्य धारण कर। तीजा के बड़े त्योहार पर मैं तुमसे फिर मिलने आऊँगा। मैं तुझे वचन देता हूँ।

७ सुलतान और कमधजराव की बातचीत

निहालदे से इतना कह कर सुलतान अपने धर्म पिता कमधजराव के पास पहुँचा और कहने लगा—"हे पिताजी! अब मैं आपसे विदा लेता हूँ। माता ने मुझे यहाँ का अन्न जल ग्रहण करने की शपथ दिला दी है, इसलिए मेरा अब यहाँ ठहरना नहीं हो सकता

हाँ, निहालदे मैं आपको अवश्य सुपुर्द किये जाता हूँ। इसके निवास के लिए भी एक अलग महल की व्यवस्था आप करवा दें।"

यह सुन कर कमधजराव ने कहा—"हे पुत्र ! जो तुम्हारी माता ने कह दिया है, उसका तू दुख न कर। मैं अपना आधा राज्य तुझ दे दूँगा, तुम्हारे साथ कोई भेद-भाव नही रखूँगा। मै तुम्हे वचन देता हूँ, मैं पीछे नही हटूँगा। प्राण देकर भी मैं अपने वचनों का पालन करूँगा। और हे पुत्र ! क्या तुम नही जानते कि वचन और बाप तो दुनिया मे एक होते हैं ?"

इस पर सुलतान कहने लगा—"हे पिता ! माता के वचनों की अवहेलना मैं नही कर सकता। आधा राज्य मुझे नही चाहिए। मुझे एक घोडा आप दे दें, धन-द्रव्य किसी की मुझे आवश्यकता नही। मेरी एक मात्र प्रार्थना आप से यही है कि निहालदे को आप अपने पास रख, उसका सम्पूर्ण भार मैं आप पर ही छोडे जाता हूँ।"

सुलतान के इन वचनो को सुन कर कमधज ने उत्तर दिया—"हे मेरे धर्म के पुत्र ! निहालदे की तुम तनिक भी चिन्ता न करो। उसके रहने के लिए एक अलग महल की व्यवस्था रहेगी, सभी आवश्यक वस्तुएँ उसके पास पहुँचा दी जायेंगी। निहालदे को मैं अपनी पुत्री से भी बढ कर मानूँगा।"

८ सुलतान की विदाई

सुलतान के लिए घोडा मँगवा दिया गया। उधर निहालदे के लिए अलग महल का प्रबन्ध हो गया। भाट की लडकी ऊदा उसकी सेवा मे रहने लगी। सुलतान ने जाते समय ऊदा से कहा—"निहालदे अपने पिता की लाडली पुत्री है। उसने अपने जीवन मे कोई दुख नही देखा है। हे ऊदा ! तू इसकी पूरी सार-सम्हाल रखना।"

ऊदा ने उत्तर दिया—"आप चिन्ता न करें; मेरे रहते रानी निहालदे को किसी वस्तु का अभाव नही खटकेगा।" इसके बाद सुलतान ने अपने धर्म-पिता से विदा ली। पिता ने अपना वरद-हस्त सुलतान के सिर पर रखा। सुलतान को जाते देख कमधजराव के नेत्र भी डबडबा आये।

९. नरवलगढ़ की ओर प्रस्थान

सुलतान ईडरगढ़ से नरवलगढ के रास्ते चल पडा। चलते-चलते वह नरवलगढ के एक पनघट पर पहुँचा जहाँ पनिहारिनें पानी भर रही थी। सुलतान ने पनिहारिनो से पूछा—"इस शहर का क्या नाम है? यहाँ का गढाधीश कौन है? यहाँ नौकर को कैसी नौकरी मिलती है ? रोजगार यहाँ का कैसा है ?" पनिहारिनो मे से एक ने उत्तर दिया—"हे घोडे के सवार ! हमारे इस शहर का नाम नरवलगढ है, यहाँ ढोलकुँवर नामक नरेश शासन करता है। यहाँ अच्छी नौकरी मिल जाती है, रोजगार की यहाँ कमी नही है। ढोलकुँवर की रानी मारू का यहाँ हुक्म चलता है।" 'सुलतान इस उत्तर को सुन कर बडा प्रसन्न

हुआ। पानी पी कर सुलतान वहाँ से रवाना हुआ और चलते-चलते वह किसी सेठ के एक जनाने बाग म पहुँचा। वहाँ उसने अपना घोड़ा बाँध दिया और आप आराम करने लगा। सुलतान थका हुआ तो था ही, बाग की शीतल छाया में उसे नींद ने आ घेरा उधर कुछ देर बाद सेठ की लड़की अपनी सखी-सहेलियों के साथ उस बाग में पहुँची लड़की किसी परदेशी को सोया देख कर कहने लगी—"हे घोड़े के सवार। क्या तू बात को नहीं समझ सका कि यह बाग तुम्हारा नहीं, पराया है? फिर तूने यहाँ सो का दुःसाहस कैसे किया? अब भी कुशल इसी में है कि तू शीघ्र ही उठ कर यहाँ से चल जा।" जिस दुपट्टे को ओढ कर सुलतान सोया हुआ था, उस दुपट्टे को भी सेठ की लड़की ने सुलतान के शरीर से अलग कर दिया।

इससे सुलतान की निद्रा भंग हो गई और वह तुरन्त हड़बड़ा कर उठ बैठा। फि सेठ की लड़की की ज्योंही सुलतान से आँखें चार हुई, वह उसके सौन्दर्य पर मुग्ध हो उठी और कहने लगी—"हे घोड़े के सवार! मैं तुझे अपने महल पर पहरा देने के लि रख लूँगी और वेतन जो तुम चाहोगे, वही मिलेगा। औरों की दृष्टि में तुम सेवक सम जाओगे किन्तु मैं पति की भाँति तुम्हे रखूँगी। उज्ज्वल चावल और मूँग की दाल तुम्हा लिए तैयार करवाऊँगी, घी के 'टोकणे' भर-भर कर तुम्हें खिलाऊँगी, साथ में बूरे क रैलम-ठेल रहेगी, उसका किंचित् भी अभाव यहाँ नहीं रहेगा।"

यह सुन कर 'शांत पापम्' कहते हुए सुलतान कहने लगा—"बहिन! ऐसी बा मुँह से न निकाल। ऐसा कहने से मेरा ब्रह्मचर्य कलंकित होगा। पाँच वर्ष तक की सभी लड़कियाँ मेरी पुत्री के समान हैं, दस वर्ष से बीस वर्ष तक की सब लड़कियों को मैं अपनी बहिन समझता हूँ। तीस वर्ष के ऊपर की अवस्था वाली जितनी स्त्रियाँ हैं, वे मेरी मात के तुल्य हैं।"

यह सुन कर सेठ की लड़की ने त्रिया-चरित दिखलाना प्रारम्भ किया। उसकी सहेलियाँ कचहरी में पहुँची और जाकर फरियाद की—"हम तो अपने बगीचे में गई हुई थी। एक घोड़े के सवार ने आकर हमे अनुचित जबान कही और हमारी मोती जैसी आब को धूल में मिला दिया।" ढोलसिंह ने यह सुन कर हलकारे से कहा—"फौज को खबर कर दो कि बाग के चारों ओर घेरा डाल दिया जाय। घोड़े का सवार बाग से निकलने न पावे।" हलकारे ने जाकर सेनापति को राजा का हुक्म सुना दिया। हथियारबन्द होकर ५०० सैनिक तैयार हो गये। उनके घोड़ों पर जीन पड़ गई और वे शीघ्र ही सवार होकर बाग के पास पहुँचे और उसके चारों ओर घेरा डाल दिया। यह देख कर सुलतान मन में विचार करने लगा—"आज अच्छी आफत में फँसा।" किन्तु उसने धैर्य नहीं छोड़ा। गुरु गोरखनाथ का स्मरण करते हुए सुलतान मन ही मन कहने लगा—"हे गुरुजी! मैं तो आज तक आपके वचनों का ही पालन करता आया हूँ। आज मुझ पर जो संकट आ गया है, उसमें हे गुरुवर्य! आप ही मेरी सहायता करें।"

उधर ढोलसिंह घोडे पर सवार होकर चला। बडे-बडे सरदार, महाजन और पंडित उसके साथ थे। चल कर सब सेठ के बाग मे पहुँचे जहाँ फौज ने पहले से ही घेरा डाल रखा था। बाग के भीतर पहुँचते ही जब उनकी सुलतान पर दृष्टि पडी तो सभी उसके दिव्य और भव्य रूप को देख कर मुग्ध हो उठे। उसके सौन्दर्य और तेज ने सब के क्रोध को हवा कर दिया। सब महाजन आपस मे बातें करने लगे—"यह बडे गढ का गढपति दिखलायी पडता है। *ऐसा कुलीन व्यक्ति किसी भी लडकी से ऐसी-वैसी ओछी बात नही कर* सकता। जान पडता है, लडकियो ने ही कुछ बदमाशी की है जिसके कारण सुलतान ने उन्हें डाँट दिया है। मालूम होता है, यह किसी सकट मे फँस गया है और अपनी विपत्ति के दिनो को किसी प्रकार काट रहा है। ऐसे व्यक्ति से लडकियो के विषय की चर्चा ही नहीं करनी चाहिए।"

तब ढोलसिंह ने हाथ जोड कर बडे विनम्र भाव से पूछा—"आप कौन से गढ के गढपति है और कहाँ जाने की तैयारी कर रहे हैं? मुझे कचहरी मे आपके यहाँ पधारने की खबर मिली तो मैं तुरन्त ही अपने सरदारो सहित आपसे मिलन के लिए बाग मे आ पहुँचा।" यह सुन कर सुलतान ने उत्तर दिया—'मैं बडी दूर से चला आ रहा था। जब चलते-चलते थक गया तो मैंने इस बाग मे डेरा डाल दिया। अब दाना-पानी मुझे जिधर ले जायेगा, उधर ही मै चला जाऊँगा।" सुलतान के शब्दो मे कुछ ऐसा जादू था कि सब उसकी ओर आकृष्ट हो गये। बाग म महफिल लग गयी। पान-सुपारी की मनुहार होने लगी। राग-रग के कारण एक अद्भुत समा बँध गया।

उधर ढोलसिंह की धर्मपत्नी मारू दासी से कहने लगी—"कचहरी मे जाकर पता लगा कि आज ढोलसिंह का थाल कहाँ लगेगा?" दासी चल कर वहाँ पहुँची जहाँ महफिल लग रही थी। उसने हलकारे स मारू का सदेशा कह सुनाया। हलकारे ने कहा—"आज इस बाग मे एक ऐसा शख्स आया है जिसके सौन्दर्य को देख लेने पर नेत्र सार्थक हो जाते हैं, आँखें तृप्त हो जाती हैं। ऐसा सुन्दर व्यक्ति मैंने तो अपने जीवन मे कभी देखा नहीं, और न भविष्य मे देखने की कोई उम्मीद ही है। उसके दर्शन मात्र से शरीर का पाप कट जाता है। महाराज की आज उसी के साथ महफिल जमी है, इसलिये हे दासी! महाराज का थाल भी आज वहीं लगेगा।"

दासी ने लौट कर मारू को सब हाल कहा। मारू ने कहा—"यदि ऐसा शख्स बाग म आया है तो मैं भी उसे देख कर आऊँगी। हे दासी! शीघ्र ही मेरी डोली सजवा दे।"

मारू के आदेश को पाकर दासी ने डोली सजवा दी, कहार बुलवा लिए गये। मारू बाग मे चलने के लिए तैयार होने लगी, उसके सोलह शृगार करने पर मारू इस प्रकार दिखलाई पडने लगी मानो वह सुन्दरता को भी सुन्दर बना रही है। दासी को साथ लेकर वह डोले मे बैठी और शीघ्र ही बाग मे जा पहुँची। हलकारे को बुला कर मारू ने कहा—"महाराज को खबर करवा दे कि रानी सुलतान को देखने के लिए आई है।" महाराज ने

रानी के लिए एक अलग तबू तनवा दिया और सुलतान से कहा कि थोडी देर के लिए आप तम्बू मे पधारिये। रानी आपसे बातचीत करना चाहती हैं।"

सुलतान मारू के तम्बू मे पहुँचा। सुलतान के सौन्दर्य को देखकर मारू मूर्च्छित हो गयी। उससे कुछ कहते-सुनते न बना। सुलतान तम्बू से निकल कर फिर ढोर्लासिह की महफिल मे पहुँचा और कहने लगा—"मुझे अब देर हो रही है, अधिक समय तक मैं यहाँ नही रुक सकता।" इतना कहकर सुलतान घोडे पर सवार हो गया किन्तु ढोर्लासिह के सवारो की बडी इच्छा थी कि सुलतान उनके साथ रहे। इसलिये वे सुलतान के घोडे के चारो तरफ इकट्ठे हो गये और कहने लगे—'अभी रात का समय है, आप यही विश्राम कीजिये। प्रात काल आपको यहाँ से विदा कर देंगे।' ढोलसिंह ने भी बडे आग्रह और अनुनय-विनय के साथ कहा—'आज आप ही के कारण बाग मे भोजन की व्यवस्था की गयी है। आप भोजन करके विश्राम कीजिये।'

१० पनिया पठान से मुलाकात

किन्तु सुलतान ने किसी की एक न सुनी और वह सब को छोड, घोडे पर सवार हो, नरवलशहर के बाजार मे चलने लगा। जब वह चलते चलते समदबुर्ज पहुँचा, तब तक सूर्य अस्त हो चुका था। वहाँ उसे पनिया पठान मिला जिससे सुलतान ने कहा—"मुझे लाल भोपाल का मार्ग बता दे ताकि मैं वहा चला जाऊँ।" पठान ने कहा—"हे घुडसवार! यह जाने का समय नही है, मार्ग म १२ कोस का वीरान जगल पडता है जिसमे बहुत से सिह, बघेरे और चीते रहते हैं। उनके कारण रास्ते म बडा खतरा है।" सुलतान ने कहा–'सिह बघेरो से तो मैं नहीं डरता। इसलिए मेरे रुकन का कोई कारण म नही समझ पा रहा हू।' किन्तु पनिया पठान अपनी बात पर तुल गया। उसने घोडे की लगाम अपने हाथ मे ले ली, सुलतान को घोडे पर से उतरवा दिया और घोडे को घुडसाल म बँधवा दिया। पठान और सुलतान मे परस्पर बातचीत होन लगी। पठान के पूछने पर सुलतान ने अपनी 'आप बीती' कह सुनायी। भोजन तैयार होने पर पठान के बहुत आग्रह करने पर सुलतान ने रात का भोजन वही किया।

११. सुलतान का पहरे पर जाना

पनिया पठान ५६५ जवानो पर अफसर था। कुछ जवानो को साथ लेकर वह रात को पहरा दिया करता था। उसने सुलतान से कहा—'अब आप तो विश्राम करें, मैं पहरे पर जाता हूँ।' सुलतान ने उत्तर दिया—'मैंने तुम्हारा अन्न खाया है, आज तुम्हारे बदले पहरे पर मैं जाऊँगा।' पनिया पठान नही चाहता था कि उसका अतिथि उसके बदले पहरे पर जाय किन्तु जब सुलतान ने यहाँ तक कह दिया कि या तो मुझे पहरे पर जाने दे या मुझे अपने रास्ते जान के लिए इजाजत दे तो पठान उसे पहरे पर भेजने के लिये राजी हो गया।

१२. चन्दबली दानव

नरवलगढ मे चन्दवली नामक एक दानव रहता था। शहर मे प्रत्येक परिवार से बारी-बारी से एक आदमी उस दानव की भेंट के लिए प्रतिदिन जाया करता था तथा राज्य की ओर से १२ बकरे, १२ बोतल शराब तथा १२ मन पूआ—पपडी उसके आहार के लिए भेजे जाते थे। उस दिन रतना सेठ के परिवार की बारी थी।

मुलतान कुछ आदमियो के साथ घोडे पर सवार होकर पहरे के लिए निकला। गश्त लगाते-लगाते जब वे रतना के महल के पास पहुँचे तो वहाँ उन्हे रतना की बहिन मेदा के रोने की आवाज सुनाई पडी। मेदा कह रही थी—

"नरवल शहर पै या थी पडियो बीजली।
तो जाणीं ढोल कँवर नै डसियो वासिक नाग।
बुरी लाग तो अठै दाना की लगवा दई।
आज जामण-जायो जा रहयो दाना की भेंट।"

'बिजली गिरे इस नरवलगढ पर और उस ढोलकुवर को वासुकि नाग डस ले जिसने दानव के लिए भेंट भेजने की यह बुरी रीति चलाई। आज मेरा भाई दानव की भेंट के लिए जा रहा है। बारह वर्ष पहले मेरा पिता इसी प्रकार दानव की भेंट के लिए गया था, उस समय मेरे भाई की अवस्था १२ वर्ष की थी, आज वह २४ वर्ष का हो गया है। दुर्भाग्यवश अब तक उसके कोई सन्तान नही हुई, न भावज अभी गर्भवती ही है। आज नरवलगढ से मेरा भाई हमेशा के लिए विदा हो रहा है। भाई बिना जन्मभूमि के पेडो का दर्शन मुझे कौन करायेगा? कौन मुझे दक्षिणी चीर पहनायेगा?'

१३ मेदा और मुलतान का वार्तालाप

महल के नीचे खडा हुआ मुलतान मेदा के इन शब्दो को सुन रहा था। उसने कहा—"बहिन! तू बडी दुखियारी जान पडती है। दरवाजा खोल, तेरा दुःख दूर मैं करूँगा। तेरे भाई के बदले दानव की भेंट के लिए मै जाऊँगा। तू तनिक भी न घबरा, तेरे भाई का बाल भी बाँका न हो सकेगा।"

यह सुन कर मेदा ने अपनी भावज से सब हाल कह सुनाया। भावज ने कहा—"बाईजी! कौन पराया पूत कभी किसी के बदले दानव की भेंट गया है? बाहर खडा व्यक्ति केवल धन लेने के लिए ऐसी बातें बना रहा है।"

मुलतान को इन शब्दो पर हँसी आ गई किन्तु उसने भावज के शब्दो को बुरा करके नही माना। उसने फिर रतना की बहिन से कहा—"तुम किसी प्रकार अन्यथा न समझो, मैं अवश्य तुम्हारे भाई के प्राण बचाऊँगा और स्वय दानव को भेंट के लिए जाऊँगा।"

मेदा ने यह सुन कर दरवाजा खोल दिया। मुलतान ने जब महल के अन्दर प्रवेश किया, मेदा उसके रूप को देख कर हतप्रभ हो गयी। फिर कहने लगी—"घोडे के सवार! घोडे के लिए दाने का प्रबन्ध करवा देती हूँ और जितना धन तुम चाहो, उसकी व्यवस्था

करवाये देती हूँ।" सुलतान ने कहा—"न घोड़े के लिए मुझे दाना चाहिए और न मेरे लिए कोई द्रव्य ही। मैं कुछ समय तक मंच पर विश्राम करता हूँ। जब दानव की भेंट के लिए जाने का समय हो जाय, मुझे जगा देना। अपने भाई से तुम कह दो कि वह निश्चिन्त हो कर सोता रहे।" इतना कह कर सुलतान मंच पर सो गया।

१४ मेदां को भाई तथा भावज से बातचीत

उधर मेदा हर्षित-पुलकित होकर अपनी भावज के कमरे में गयी और कहने लगी-"आज हमारे भाग्याकाश में सोने का सूर्य उदित हुआ है। हमारे महलों में जो वीर आया है, वह तो कोई अवतार जान पड़ता है। उसके चरणों में पद्म है और मस्तक पर मणि दीप्त हो रही है, उसके तेज का तो कहना ही क्या। लगता है जैसे कश्यप—सुत सूर्य का ही उदय हो गया हो। प्यारी भावज! भगवान् आज हमारा बेड़ा पार लगायेगा, सतियों के सत् की रक्षा होगी, यह वीर निश्चय ही दानव को भेंट के लिए जायेगा, इसे ऐसा वैसा कोई साधारण व्यक्ति मत समझो।"

"मेरी भावज महला में हे आ गयो वीर कोई औतार हे,
पाय पदम हे मेरी भावज माथै मरण दीपे,
हे भावज जाणो हे उग आयो कासिव-सुत भान,
च्यानणो आज हो रहयो म्हारा म्हैल में,
हे भावज म्हे जाणा पी लगादे बेड़ो पार,
सतिया का सत की आगै मालिक म्हारा राख दे,
मनै जातो भी दिसै अलबत यो दाना की भेंट।।"

इसके बाद मेदां अपने भाई के पास गयी और अथ से इति तक उसे सारा हाल कह सुनाया। सुन कर वह अपनी बहिन से कहने लगा—"क्या तुम किसी स्वप्न की बात मुझे सुना रही हो? मैंने तो अपने जीवन में ऐसा कोई आदमी नहीं देखा जो बिना धन-द्रव्य की इच्छा किये किसी दूसरे के लिए अकारण प्राण देने के लिए तैयार हो जाय?'

मेदा ने कहा—"भाई, हाथ कंगन को आरसी क्या? हमारा उद्धारक हमारे ही महल में सोया हुआ है। तुम मेरे साथ चल कर अभी उसे अपनी आँखों से देख लो। आँखों से देख लेने पर तो विश्वास करोगे न? सत्य तो कभी झूठ नहीं हुआ है।' रतना ने सुलतान को जब सोते हुए देखा तो उसके मन में धीरज बंधा। रतना, उसकी स्त्री तथा मेदा भगवान् को मनाते हुए कहने लगे कि हे त्रिलोकीनाथ! हे अंतर्यामिन्! हमारी लाज रखना।

१५ दानव के पास जाने की तैयारी

उधर जल्लादों के आने का समय हो गया। वे रतना के महल के द्वार पर पहुँच कर कहने लगे, "रतना तैयार हो जाओ, आज तुम्हें दानव की भेंट के लिए जाना है।" जल्लादों के शब्द सुन कर रतना के होश हवास ठंडे पड़ गये, मुख से बोल नहीं निकला,

इस तरह काँपने लगा मानो जूडी बुखार ने उसे घर दबाया हो। उधर मेदा सुलतान जगाने के लिए बर्तनों को बजाने लगी। जब सुलतान जगा तो उसने पूछा, "क्या दानव पास जाने का समय हो गया?" मेदा ने कहा, "जल्लाद मेरे भाई के लिए बाहर से आज लगा रहे है और में उसे ही भेजने की तैयारी कर रही हूँ। तुम मेरे भाई के बदले ओगे तो तुम्हारी परिणीता पत्नी का सुहाग लुट जायगा, वृद्धा जननी भूर-भूर कर हारे लिए रोती-बिलखती रहेगी। तुम भी मेरे भाई तुल्य ही हो, मैं तुम्हे दानव की भेंट लिए कैसे जाने दूँ?" यह सुन कर चक्वे वंश के पोते सुलतान ने उत्तर दिया, "बहिन! मेरी चिन्ता न करो, मैं पहले ही वचन दे चुका हूँ कि तुम्हारे भाई के प्राण सुरक्षित गे, मैं ही दानव की भेंट के लिए जाऊँगा।" मेदा यह सुनकर अपनी भावज के पास गी। भावज ने जब सारा हाल सुना तो वह हर्ष से फूली न समायी। वह बार-बार अपनी नद की बलैया लेने लगी और बोली—'बाईजी, आज आपने ही प्राणनाथ के प्राण बचाये।' उधर रतना को भी जब इस बात का पता लगा कि सचमुच ही सुलतान उसके बदले नव की भेंट के लिये जा रहा है तो उसे तो मानो दूसरा जन्म मिल गया, उसके जी मे आ गया। हर्षित-पुलकित होकर वह कहने लगा, 'मेरे धन्य भाग्य बहिन! कि आज गवान् ने मेरा रक्षक अपने आप भेज दिया!'

उधर जल्लाद जल्दी कर रहे थे। मेदा ने महल का द्वार खोलकर कहा-'जल्लादो! तनी भी क्या जल्दी है? मैं अभी भाई को भेंट मे जाने के लिए तैयार किये देती हूँ।'

दानव की भेंट के लिये जो व्यक्ति भेजा जाता था, वह वर का वेश धारण करके जाया करता था। मेदा ने बली सुलतान को भी यथोचित परिधान पहनाया। मणिधारी सुलतान के सिर पर लाल 'पेचा' बाँधा गया, शरीर पर 'जामा' पहनाया गया, पैरो मे 'बिनोटे' धारण करवाये गये, हाथो मे मेहँदी लगायी गयी, कगन-डोरे (कांगरा डोरडा) बाँधे गये। तात्पर्य यह है कि उसे वर के वेश मे भली प्रकार सुसज्जित कर दिया गया।

१६. सुलतान और जल्लाद

तत्पश्चात मेदा सुलतान को दरवाजे के बाहर ले आयी और जल्लादो को सम्हलाते हुए कहने लगी, मेरे भाई के बदल दानव की भेंट मे आज यह व्यक्ति जायेगा।' यह सुनकर जल्लाद बोल उठे, 'हमे तो केवल एक आदमी चाहिए, फिर वह भले कोई भी क्यो न हो। तुम चाहो तो किसी को मोल लेकर भी हमारे साथ कर सकती हो। हमे इससे कोई सरोकार नहीं कि वह आदमी कौन है।'

जल्लादो म से एक ने सुलतान का हाथ पकडा और दूसरे ने दूसरा। इस पर सुलतान ने कहा—"जल्लादो! इस प्रकार मेरे हाथ पकडने की क्या आवश्यकता है? मैं तो अपने आप ही खुशी-खुशी तुम्हारे साथ चला चलूँगा।" यह सुनकर जल्लादो ने उसके हाथ छोड दिये और उससे कहने लगे—"भाई! क्या तुम्हे पता नही कि आज दानव तुम्हे खा जायगा? हमारा तो यह नित्यप्रति का काम है। जिसकी बारी होती है, उसे हम घसीट कर दानव के पास ले जाते हैं। कोई भी दानव के पास खुशी-खुशी जाना नही चाहता।

लड़ते सुलतान ने गोरखनाथ का स्मरण किया जिससे उसकी शक्ति में वृद्धि हो गयी। अब दानव का बल घटने लगा। कभी वह गिर पड़ता और कभी गिर कर फिर खड़ा हो जाता। दानव को भी विश्वास होने लगा कि आज निश्चय ही मेरा काल आ पहुँचा है और वास्तव में हुआ भी यही। मल्ल-युद्ध में अन्त में सुलतान ने दानव को पछाड़ दिया और उसने दोनों हाथों से दानव की गर्दन को धर दबाया और वह उसकी छाती पर सवार हो गया। अब दानव को सांसों के भी लाले पड़ने लगे, उसका जी घेरे में आ गया। अन्त में हताश होकर दानव ने सुलतान से कहा—"मुझे पक्का विश्वास हो गया है कि तुम्हारे हाथों मेरा प्राणान्त होगा, किन्तु मरने से पहले मैं अपने दिल का धोखा मिटा लेना चाहता हूँ। तुम मुझे बतलाओ, तुम आखिर हो कौन? इस संसार में केवल दो ही व्यक्ति मुझे मार सकते थे। किसी तीसरे की कोई ताकत नहीं कि वह मेरे प्राणों की होली खेले।" इस पर सुलतान ने पूछा—"कौन है वे दो व्यक्ति जिनके हाथों तुम्हारी मृत्यु हो सकती है?"

दानव ने उत्तर दिया—"एक है कीचकोट का प्रतिहार वंशीय क्षत्रिय और दूसरा है जगदेव पँवार।" यह सुनकर सुलतान को हंसी आ गई और उसने कहना शुरू किया—"कीचलगढ़ के गढ़ाधिपति मैनपाल का बाल गोपाल मैं ही हूं। जान पड़ता है, भवितव्यता ही मुझे यहाँ खींच लाई है। पिता ने मुझे १२ वर्ष का देश-निकाला दे दिया था। उस अवधि को पूरा करने के लिए ही मैं नरवलकोट आ गया था।"

सुलतान के शब्द सुनकर दानव को पक्का विश्वास हो गया कि सुलतान के रूप में मेरा काल ही आ पहुँचा था। उसका अन्त समय आ गया, उसके प्राण-पखेरू उड़ गये।

मणिधारी सुलतान ने दानव के नाक-कान काट लिये और पूँछ की निशानी भी अपने साथ ले ली। दानव को उसने घसीट कर बाड़े के बाहर औंधा करके डाल दिया।

सुलतान घोड़े पर सवार होकर रतना सेठ की कोठी पहुँचा। किन्तु सेठ और रतना सब सोये हुए थे, इसलिए सुलतान घोड़े पर सवार होकर पनिया पठान के यहां पहुँचा। पठान ने सुलतान के लिए पलंग डलवा दिया, बिस्तर बिछवा दिये और तकिये लगवा दिये। सुलतान निश्चिन्त होकर पलंग पर सो गया। थका हुआ तो वह था ही, सोते ही उसे निद्रा ने आ घेरा। जैसा पहले कहा जा चुका है, सुलतान ने दानव को मार कर उसे बाड़े से बाहर डाल दिया था। प्रातःकाल होने पर जब लोगों ने दानव को बाड़े के बाहर पड़े हुए देखा तो सब अत्यंत भयभीत हो उठे। उसके भय से कोई भी उस ओर पांव नहीं धरता था। ढोलसिंह को भी जब यह खबर पहुँची तो उसने जल्लादों को बुलाकर पूछताछ की। जल्लादों ने सब हाल कह सुनाया।

उधर नादान बच्चे दानव की तरफ पत्थर फेंकने लगे। पत्थर मारते-मारते वे दानव के पास भी जा पहुँचे। पहुँचने पर उन्होंने देखा कि दानव के मुँह में चींटियां प्रवेश कर रही हैं। बच्चों को दानव के पास गया देख, बड़ी अवस्था के लोग भी धड़कते दिल से वहां जा पहुँचे, किन्तु वहां पहुँच कर उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब उन्होंने देखा

कि दानव तो काल का ग्रास बन चुका । वे सोल्लास आपस मे कहने लगे—"आज भगवान् की कृपा से हमारा नगर का सौभाग्य-सूर्य उदित हुआ है । आज हमारे दिन फिरे हैं ।"

किन्तु प्रश्न यह था, दानव को मारा किसने ? कोई कहता था—दानव पेट के दु:ख से मर गया । कोई कहता था—विषधर नाग ने दानव को डस लिया । दानव के मरण की खबर ढोलसिंह तक भी जा पहुँची ।

रूमी और घूमी शहर के दो पहलवान थे । उन्होंने मरे हुए दानव की अ गुलिया काट लीं और सरदारो से लगे कहने—"दानव को हमी ने मौत के घाट उतारा है ।"

नरवलगढ के नर नारियो का एक मेला सा लग गया । मरे हुए दानव को देखने के लिए सारी जनता उमड पडी । महाराज ढोलसिंह भी मरवण सहित देखने के लिए आ पहुँचे । शहर के प्रतिष्ठित पडित महाजन सभी खड़े-खड़े दानव को देख रहे थे । दानव को मरा देख कर ढोलसिंह के हर्ष का ठिकाना न रहा । उसने हुक्म दिया कि दानव के लिए एक चिता तैयार करवायी जाय और उसमे दानव को फूक दिया जाय ।

२१. रूमी-घूमी की विफलता

ढोलसिंह ने हुक्म दिया कि दानव को अब चिता पर सुलवादो । यह सुनकर शहर के लोग कहने लगे—"महाराज । जिन व्यक्तियो ने इस दानव को मारा है, वे ही उठाकर इसे चिता पर भी सुला देंगे । हम भी उनकी करामात देखेंगे ।" यह सुन कर ढोलसिंह ने रूमी घूमी को हुक्म दिया कि वे दानव का चितारोहण करवादें । इस पर रूमी घूमी ताल ठोक कर दानव के पास जा पहुँचे । दोनो हाथो से उन दोनो ने दानव को उठाने की भरपूर चेष्टा की, किन्तु दानव का एक हाथ भी व न उठा सके । इस पर उपस्थित जन-समूह मे तालियों की गडगडाहट होने लगी । छत्तीसो जाति के लोग हँस पडे और कहने लगे—"जो दानव का एक हाथ भी नही उठा सकते, हरगिज वे दानव के मारने वाले नही हैं । दानव को मारने वाला तो कोई दूसरा ही है ।"

२२. दानव का वध-कर्ता कौन ?

ढोलसिंह महाराज ने भी रूमी-घूमी को सबोधित करते हुए कहा—'दानव को तुमने मारा है तो कोई निशानी दिखलाओ ।" इस पर रूमी घूमी ने अँगुलियो की निशानी दिखलाई, किन्तु पडित-महाजन, सरदार सभी ने निशानी देखकर कहा कि इनके पास निशानी नहीं है । यह सुनकर ढोलसिंह ने रतना सेठ को बुलाने की आज्ञा दी । तुरन्त ही हलकारा भेज दिया गया जो रतना को लेकर हाजिर हुआ । ढोलसिंह ने रतना से कहा—"तुम्हारी बारी मे दानव के पास जो मनुष्य गया था, उसे हाजिर करो अन्यथा तुम्हे शूली पर चढा दिया जायगा ।" रतना ने उत्तर दिया कि मेरी बारी मे जो आदमी गया था, उसे मैंने आँखो से देखा तक नही । हाँ, मेरी बहिन मेदा उसके बारे मे जो कुछ जानती है, वह मैं उससे मालूम करूँगा और आपकी सेवा में निवेदन करूँगा ।

रतना अपने महल मे गया और अपनी बहिन से सारी जानकारी प्राप्त करके ढोलसिंह की सेवा मे हाजिर हुआ ।

रतना ने कहा—'मेरी बहिन ने मुझे सूचना दी है कि दानव को मारने वाला नरवलगढ का आदमी नहीं है, वह तो कोई परदेशी था।" इतना सुनते ही शहर में डौंडी पिटवा दी गयी कि छत्तीसों जाति में यदि किसी के यहाँ कोई मेहमान आया हुआ हो तो उसे अविलम्ब कचहरी में हाजिर किया जाय। यदि किसी ने उसे छिपा रखा तो छिपाने वाले को बाल-बच्चों सहित कोल्हू में पिलवा दिया जायगा।

पनिया पठान ने जब यह घोषणा सुनी तो उसने वली सुलतान से कहा—"यदि तुम ढोलसिंह से बिना मिले चले जाओगे तो मेरे परिवार पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ेगा।' इतना सुनते ही सुलतान पठान के साथ हो लिया।

रतना की बहिन मेदा ने ढोलसिंह महाराज से यह कहलवा दिया था कि यदि आप एक मकान में आदमियों को इकट्ठा करलें और मेरे सामने से निकलवादें तो मैं दानव को मारने वाले को पहचान लूंगी। ऐसा ही किया गया और जब सुलतान कई आदमियों के साथ मेदा के सामने से गुजरा तो मेदा ने उसे पहचान कर महाराज से कहा—' यह है वह वीर पुरुष जिसने दानव का वध किया है।"

यह सुनते ही एकत्रित जन समुदाय सुलतान की ओर कौतूहल भरी दृष्टि से देखने लगा। ढोलसिंह भी सुलतान को देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने सुलतान को अपने बराबर आसन दिया और हँस-हँस कर उससे सब बात पूछना प्रारम्भ किया।

ढोलसिंह ने सुलतान से पूछा—"मुझे सच-सच बतलाओ, क्या तुम्ही ने दानव का वध किया है?" यह सुनकर सुलतान ने उत्तर दिया—' मैं तो एक ही बात कहता हूँ, झूठ से मेरा क्या सरोकार? दानव का और मेरा द्वन्द्व युद्ध हुआ। भगवान् की कुछ ऐसी माया हुई कि दानव मेरे हाथों मारा गया। सच तो यह है कि मैं तो केवल निमित्त मात्र हूँ, ईश्वरीय प्रेरणा से ही दानव का वध हुआ है।"

सुलतान के उक्त शब्दों को सुन कर ढोलसिंह बहुत प्रसन्न हुआ और कहने लगा—"तुमने जो बात कही है, उस पर मुझे पक्का विश्वास है, किन्तु फिर भी दानव को मारने की कोई निशानी तुम दिखला सको तो उपस्थित जन-समूह को भी तुम्हारी बात का पूरा विश्वास हो जाय।" सुलतान ने यह सुनते ही ढोलसिंह के आगे निशानी उपस्थित कर दी। निशानी देखते ही शहर के सब नर-नारी अत्यन्त प्रसन्न हुए। ढोलसिंह ने सुलतान को लक्ष्य करके कहा—"धन्य है तुम्हारा पिता और धन्य है वह वीर प्रसविनी माता जिसने सुलतान जैसे योद्धा को जन्म दिया! दानव को मार कर जो लोकोपकारी काम तुमने किया है, उसके लिए जो पुरस्कार तुम चाहो, माँगो।" सुलतान ने उत्तर दिया कि किसी भी प्रकार के पुरस्कार की इच्छा से मैंने दानव का वध नहीं किया था। वास्तव में मुझे किसी भी चीज की आवश्यकता नहीं है। यह सुनते ही ढोलसिंह और उसके सरदार फिर 'धन्य धन्य' कह उठे। उन्होंने कहा—'सुलतान के व्यक्तित्व में कोई कोर-कसर नहीं है।'

२३. सुलतान का परीक्षण

तब ढोलसिंह ने कहा—"हे सुलतान ! शहर के बाहर दानव के लिए चिता बनायी गई है । रूमी धूमी दोना पहलवान पचपच हार गये, किन्तु पूरा बल लगाने पर भी वे दानव का एक भी हाथ नही उठा सके । हे वीरवर ! यदि दानव तुम्हारे हाथो मारा गया है तो तुम्ही उसे उठाकर चिता पर रख दो । यदि लाश यो ही पडी रही तो वह सड उठेगी और शहर मे अनेक रोग फैल जायेंगे । इसलिए जल्दी से जल्दी लाश का भस्म कर दिया जाना आवश्यक है । उसके भस्म हो जाने पर सभी नगर-वासियो को आराम हो जायगा । इतना ी नही, यदि लाश उठाकर तुमने चिता पर रख दी तो सभी को तुम्हारे बल विक्रम का वश्वास हो जायगा ।"

इतना सुनते ही बली सुलतान नगरवासियो के साथ चल कर वहाँ पहुँचा जहाँ दानव ी लाश पडी हुई थी । सारा शहर तमाशा देखने के लिए उमड पडा । मरवरण भी डोले मे ैठ कर चली । सुलतान ने लाश को देख कर गोरखनाथ का स्मरण किया और कहा— 'बाबा ! अब तक तुम्ही मेरी लज्जा रखते आये हो, आज भी मेरी लज्जा तुम्हारे हाथ है ।" इस प्रकार गोरखनाथ का ध्यान कर सुलतान ने पलक मारते ही लाश को उठा कर चेता पर रख दिया । लोग देखते ही रह गये, उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा । तालिया की गडगडाहट के बीच सभी सुलतान को धन्य-धन्य कह उठे । ढोलसिंह भी विस्मय विमुग्ध हो गया । मारू के दिल म भी अब यह बात पक्की हो गई कि जो व्यक्ति बाग म मुझे मिला था, वह यही बली सुलतान है । 'लापा' लगवा दिया गया और धू-धू करती हुई दानव की चिता जल उठी ।

२४ सुलतान का जुलूस

दानव के भस्म हो जाने के बाद सुलतान का जुलूस निकाला गया । चक्रवर्ती वंश का पौता हाथी के होदे पर बिठलाया गया । मधुर स्वर मे मागलिक वाद्य बजने लगे । मोहरें-अशर्फिया न्योछावर की जाने लगी । मिठाइयाँ और पान की मनुहारें होने लगी । जुलूस जब सदर बाजार मे से निकला तो छत्तीसो जाति के नर-नारी क्षत्रिय सुलतान के सौदर्य को देख कर निहाल हो गये, उन्हे अपने नेत्रो का फल मिल गया ।

२५ प्रशासन-कार्य का प्रारम्भ

जब हाथी मारू के महल के नीचे से गुजरने लगा, मारू ने दासी भेज कर कहलवाया कि एक बार बली सुलतान को मैं अपने महल मे बुलाना चाहती हूँ । सुलतान ने कहा कि जनाने महल मे मेरा क्या काम ? मैं वहाँ नही जाना चाहता । किन्तु अत मे ढोलसिंह के बार-बार आग्रह करने पर सुलतान महल मे जाने के लिए राजी हो गया । हाथी से उतर कर सुलतान जब महल मे पहुँचा तो उसे बडे आदर-सम्मान के साथ आसन पर बिठलाया गया । परस्पर कुछ समय की वार्तालाप के बाद मारू ने कहा कि तुम मेरे यहाँ नौकरी करने लगो तो मुझे बडी प्रसन्नता होगी । इस पर सुलतान ने उत्तर दिया, "नौकरी तो मैं

रतना ने कहा—"मेरी बहिन ने मुझे सूचना दी है कि दानव को मारने वाला नरवलगढ़ का आदमी नहीं है, वह तो कोई परदेशी था।" इतना सुनते ही शहर में डोंडी पिटवा दी गयी कि छत्तीसों जाति में यदि किसी के यहाँ कोई मेहमान आया हुआ हो तो उसे अविलम्ब कचहरी में हाजिर किया जाय। यदि किसी ने उसे छिपा रखा तो छिपाने वाले को बाल बच्चों सहित कोल्हू में पिलवा दिया जायगा।

पनिया पठान ने जब यह घोषणा सुनी तो उसने बली मुलतान से कहा—"यदि तुम ढोलसिंह से बिना मिले चले जाओगे तो मेरे परिवार पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ेगा।" इतना सुनते ही सुलतान पठान के साथ हो लिया।

रतना की बहिन मेदा ने ढोलसिंह महाराज से यह कहलवा दिया था कि यदि आप एक मकान में आदमियों को इकट्ठा करलें और मेरे सामने से निकलवादें तो मैं दानव को मारने वाले को पहचान लूँगी। ऐसा ही किया गया और जब सुलतान कई आदमियों के साथ मेदा के सामने से गुजरा तो मेदा ने उसे पहचान कर महाराज से कहा—"यह है वह वीर पुरुष जिसने दानव का वध किया है।"

यह सुनते ही एकत्रित जन समुदाय सुलतान की ओर कौतूहल भरी दृष्टि से देखने लगा। ढोलसिंह भी सुलतान को देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने सुलतान को अपने बराबर आसन दिया और हँस-हँस कर उससे सब बात पूछना प्रारम्भ किया।

ढोलसिंह ने सुलतान से पूछा—"मुझे सच-सच बतलाओ, क्या तुम्ही ने दानव का वध किया है?" यह सुनकर सुलतान ने उत्तर दिया—"मैं तो एक ही बात कहता हूँ, झूठ से मेरा क्या सरोकार? दानव का और मेरा द्वन्द्व-युद्ध हुआ। भगवान् की कुछ ऐसी माया हुई कि दानव मेरे हाथों मारा गया। सच तो यह है कि मैं तो केवल निमित्त मात्र हूँ, ईश्वरीय प्रेरणा से ही दानव का वध हुआ है।"

सुलतान के उक्त शब्दों को सुन कर ढोलसिंह बहुत प्रसन्न हुआ और कहने लगा—"तुमने जो बात कही है, उस पर मुझे पक्का विश्वास है, किन्तु फिर भी दानव का मारने की कोई निशानी तुम दिखला सको तो उपस्थित जन-समूह को भी तुम्हारी बात का पूरा विश्वास हो जाय।" सुलतान ने यह सुनते ही ढोलसिंह के आगे निशानी उपस्थित कर दी। निशानी देखते ही शहर के सब नर-नारी अत्यन्त प्रसन्न हुए। ढोलसिंह ने सुलतान को लक्ष्य करके कहा—"धन्य है तुम्हारा पिता और धन्य है वह वीर प्रसविनी माता जिसने सुलतान जैसे योद्धा को जन्म दिया! दानव को मार कर जो लोकोपकारी काम तुमने किया है, उसके लिए जो पुरस्कार तुम चाहो, माँगो।" सुलतान ने उत्तर दिया कि किसी भी प्रकार के पुरस्कार की इच्छा से मैंने दानव का वध नहीं किया था। वास्तव में मुझे किसी भी चीज की आवश्यकता नहीं है। यह सुनते ही ढोलसिंह और उसके सरदार फिर 'धन्य धन्य' कह उठे। उन्होंने कहा—'सुलतान के व्यक्तित्व में कोई कोर-कसर नहीं है।'

२३. सुलतान का परीक्षण

तब ढोलसिंह ने कहा—"हे सुलतान ! शहर के बाहर दानव के लिए चिता बनायी गई है। रूमी घूमी दोनों पहलवान पचपच हार गये, किन्तु पूरा बल लगाने पर भी वे दानव का एक भी हाथ नहीं उठा सके। हे वीरवर ! यदि दानव तुम्हारे हाथो मारा गया है तो तुम्ही उसे उठाकर चिता पर रख दो। यदि लाश यो ही पडी रही तो वह सड़ उठेगी और शहर मे अनेक रोग फैल जायेंगे। इसलिए जल्दी से जल्दी लाश का भस्म कर दिया जाना आवश्यक है। उसके भस्म हो जाने पर सभी नगर-वासियो को आराम हो जायगा। इतना ही नही, यदि लाश उठाकर तुमने चिता पर रख दी तो सभी को तुम्हारे बल विक्रम का विश्वास हो जायगा।"

इतना सुनते ही बली सुलतान नगरवासियो के साथ चल कर वहाँ पहुँचा जहाँ दानव की लाश पडी हुई थी। सारा शहर तमाशा देखने के लिए उमड पडा। मरवण भी डोले मे बैठ कर चली। सुलतान ने लाश को देख कर गोरखनाथ का स्मरण किया और कहा—"बाबा ! अब तक तुम्ही मेरी लज्जा रखते आये हो, आज भी मेरी लज्जा तुम्हारे हाथ है।" इस प्रकार गोरखनाथ का ध्यान कर सुलतान ने पलक मारते ही लाश को उठा कर चिता पर रख दिया। लोग देखते ही रह गये, उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। तालियो की गडगडाहट के बीच सभी सुलतान को धन्य-धन्य कह उठे। ढोलसिंह भी विस्मय विमुग्ध हो गया। मारू के दिल म भी अब यह बात पक्की हो गई कि जो व्यक्ति बाग म मुझे मिला था, वह यही बली सुलतान है। 'लापा' लगवा दिया गया और धू-धू करती हुई दानव की चिता जल उठी।

२४ सुलतान का जुलूस

दानव के भस्म हो जाने के बाद सुलतान का जुलूस निकाला गया। चक्रवर्ती बैण का पोता हाथी के होदे पर बिठलाया गया। मधुर स्वर मे मागलिक वाद्य बजने लगे। मोहरें-अशर्फिया न्योछावर की जाने लगी। मिठाइयाँ और पान की मनुहारें होने लगी। जुलूस जब सदर बाजार मे से निकला तो छत्तीसो जाति के नर-नारी क्षत्रिय सुलतान के सौंदर्य को देख कर निहाल हो गये, उन्हे अपने नेत्रो का फल मिल गया।

२५ प्रशासन कार्य का प्रारम्भ

जब हाथी मारू के महल के नीचे से गुजरने लगा, मारू ने दासी भेज कर कहलवाया कि एक बार बली सुलतान को मैं अपने महल मे बुलाना चाहती हूँ। सुलतान ने कहा कि जनाने महल मे मेरा क्या काम ? मैं वहाँ नही जाना चाहता। किन्तु अत मे ढोलसिंह के बार-बार आग्रह करने पर सुलतान महल मे जाने के लिए राजी हो गया। हाथी से उतर कर सुलतान जब महल मे पहुँचा तो उसे बडे आदर-सम्मान के साथ आसन पर बिठलाया गया। परस्पर कुछ समय की वार्तालाप के बाद मारू ने कहा कि तुम मेरे यहाँ नौकरी करने लगो तो मुझे बडी प्रसन्नता होगी। इस पर सुलतान ने उत्तर दिया, "नौकरी तो मैं

कर सकता हूँ किन्तु नौकरी शुरू करने के पहले मैं अपनी शर्तें रख देना चाहता हूँ। पाँच वर्ष की लड़की को मैं अपनी पुत्री तथा १० वर्ष से ऊपर की लड़की को अपनी बहिन समझता हूँ, तीस वर्ष से ऊपर की अवस्था वाली स्त्री को मैं अपनी माता समझता हूँ। दूसरी बात यह है कि जहाँ स्त्री का हुक्म चलता है, वहाँ मैं नौकरी नहीं कर सकता। मुझे यदि सेवा का अवसर देना चाहती हो तो मैं समदबुर्ज मे नौकरी कर सकता हूँ। तुझे मैं अपनी धर्म की बहिन समझूँगा, तू भी मुझे अपना धर्म-भाई समझ। पहले जहाँ तुम्हारा हुक्म चलता था, वहाँ अब ढोलसिंह का हुक्म चलना चाहिए।"

सुलतान की सभी शर्ते मारू ने स्वीकार करलीं। फिर मारू पूछने लगी, 'तुम अपना नाम-गाँव बतलाओ ताकि दफ्तर में विधिवत् हिसाब किताब रखा जा सके।" इस पर बली सुलतान ने कहा—"अपने गाँव को क्या बतलाऊँ? आसमान ने मुझे पटक दिया और धरती माता मुझे झेल रही है। किसी तरह मेरा गुजारा हो रहा है। नाम मेरा सुलतान है। इसके अतिरिक्त विशेष बतलाने योग्य मेरे पास कुछ भी नहीं है। वेतन के लिए मुझे अपनी ओर से कुछ नहीं कहना है।

सुलतान ने मारू के यहा नौकरी करना प्रारम्भ कर दिया। निश्चय हुआ कि प्रतिदिन लाख टके के हिसाब से सुलतान को वेतन दिया जाय। सुलतान की इच्छानुसार ही उसे समदबुर्ज का काम सम्हला दिया गया। मारू ने कहा—'भाई! अब शहर का न्याय तुम्हारे हाथ है। मुझे पूरा विश्वास है, तुम भली भाँति अपने उच्च पदोचित दायित्व का निर्वाह कर सकोगे।"

सुलतान ने कहा—'बहिन! क्षत्रिय-कुल की मर्यादा मैं समझता हूँ। आर्त त्राण परायण होना तथा अपने चरित्र को बनाये रखना, मेरी दृष्टि मे क्षत्रिय का सबसे बड़ा धर्म है। मेरी भगवान् से यही प्रार्थना है कि वह मुझे अपने कर्तव्य-पालन की शक्ति दे।"

यह सुन कर मारू अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसने पनिया पठान को निम्नलिखित परवाना लिखा—"हे पठान! मैं सुलतान को तुम्हारे पास भेज रही हूँ। तुम उसे समदबुर्ज का काम सम्हला देना। उसे जिस वस्तु की आवश्यकता हो, दे देना। मैंने सुलतान को अपने धर्म का भाई बनाया है। नौकर तो वह नाम मात्र का है, वस्तुत मैंने उसे नरवरगढ के न्याय इन्साफ का सारा काम सौंप दिया है। तुम्हारी भृत्ति मे भी मैं वृद्धि कर दूँगी।"

मारू ने उक्त परवाना लिख कर हलकारे को सौंप दिया। इधर सुलतान घोड़े पर सवार हुआ। हलकारा आगे आगे चला और उसके पीछे बड़ी सजधज से साथ सुलतान की सवारी चली। सुलतान के अनुपम सौंदर्य को देख कर सभी नर नारी मुग्ध हो उठे। सुलतान का तेज से देदीप्यमान ललाट, मनोरम मुख मण्डल तथा घुटनो तक विलम्बित बलिष्ठ भुजाएँ सभी को अपनी ओर आकृष्ट कर रही थी। सुलतान के रमणीय रूप को देख कर सभी नर-नारियों की इच्छा होती थी कि वह थोड़ी देर नरवरगढ मे ही ठहर जाय तो उसकी एक तसवीर उतार ली जाय।

सुलतान के समदबुर्ज पहुँचते ही हलकारे ने मारू का परवाना पनिया पठान को सौंप दिया। परवाना पढ कर वह और भी प्रसन्न हुआ। क्षत्रिय को बडे आदर-सम्मान के साथ उसने उच्चासन पर बिठलाया। छत्तीसो प्रकार के व्यजन तैयार करवाने का हुक्म रसोइयो को दे दिया गया। सुलतान और पठान की परस्पर हँस-हँस कर बातें होने लगी। भोजन तैयार होने पर दोनो ने बडे आनन्दपूर्वक भोजन किया। शहर मे घोषणा करवा दी गई कि समदबुर्ज का सारा काम-काज अब वलो सुलतान सम्हालेंगे। इस घोषणा से समस्त शहर मे आनन्द और उत्साह की एक लहर-सी दौड गई। पनिया पठान ने सुलतान के साथ एक दूसरे घोड़े पर सवार होकर सारा शहर सुलतान को भली-भाँति दिखलाया।

२६. रतना सेठ की भेंट

रतना सेठ ने जब यह समाचार सुना कि सुलतान नरवलगढ के प्रशासनाधिकारी के रूप मे नियत हुए हैं तो उसके हर्ष का ठिकाना न रहा। अपने साथ नगर के प्रतिष्ठित व्यापारियो को लेकर रतना सुलतान से भेंट करने के लिए चला। समदबुर्ज पहुँच कर उसने अशर्फियाँ सुलतान का भेंट स्वरूप दी। समदबुर्ज मे मिठाइयाँ बटने लगी। रतना ने क्षत्रिय से अपनी पगडी बदल ली और सुलतान को अपना धर्म-भाई बना लिया। रतना और सुलतान के परस्पर प्रेमालाप और हर्षातिरेक से समदबुर्ज मे आनन्द का सरोवर लहराने लगा।

रतना ने कहा—"हे सुलतान! १७ कोटिध्वजो जितनी सम्पत्ति मेरे पास है, उसे यथेच्छ व्यय करने का अधिकार मै तुम्हे सौंपता हूँ। तुम्हे जहाँ पानी चाहिए, वहाँ मैं अपना खून बहाने के लिए तैयार हूँ। आज जो मैं अपने को जीवित पा रहा हूँ, वह सब तुम्हारे ही कारण। अत. मैं अपना तन, मन, धन सब तुम्हारे अर्पित करता हूँ। यद्यपि मैं यह भली भाँति जानता हूँ कि अपना सर्वस्व अर्पित कर देने पर भी मैं तुमसे कभी उऋण नही हो सकूँगा।" सुलतान ने रतना के इन प्रेम-भरे शब्दो को सुन कर उत्तर दिया—"भाई! मैं नही समझता, मैंने तुम पर कोई एहसान किया है। मैंने तो वही किया है जो एक क्षत्रिय का कर्त्तव्य है। किसी आर्त्त की वाणी सुन कर जो उसकी रक्षा के लिए अपने प्राणो की बाजी नहीं लगा देता, वह कैसा क्षत्रिय है?"

इस प्रकार परस्पर वार्त्तालाप के बाद रतना ने सुलतान से विदा ली। उधर सुलतान ने बडे मनोयोग और तत्परता के साथ समदबुर्ज का काम सम्हाला। उसके न्याय और इन्साफ को देख कर सभी धन्य-धन्य कह उठे। उसके न्याय की समता यदि की जा सकती है तो विक्रमादित्य, हातिमताई, आदिलशाह और डेनियल जैसो से ही संभव है। उसको ईमानदारी और सत्यनिष्ठा का तो कहना ही क्या? प्रजा के सुख-दुःख का पता लगाने के लिए वह प्रतिदिन शहर मे घूमा करता था। नरवलगढ मे एक वस्तु का अभाव उसे बहुत खटकता था। सारे शहर मे एक ही कुआ था। प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक पानी भरने वालो की भीड़ कुएँ पर लगी रहती थी। सुलतान ने सबसे पहले इसी ओर ध्यान दिया। पानी का कष्ट दूर करने के लिए उसने जगह-जगह कुएँ खुदवाये और नागरिकों को

सुख-सुविधा तथा शहर की शोभा के लिए उसने अनेक बाग-बगीचे लगवाये। रतना से जो धन प्राप्त हुआ, वह उसने दीन दुखियों की सहायता में मुक्तहस्त होकर व्यय किया। सुलतान के प्रशासन-काल में तुलसीदास की निम्नलिखित पंक्ति सर्वथा सार्थक हो गई—

"दुखी दीनता दुखियन के दुख, जाचकता अकुलानी।"

२७. जानी का हृदय परिवर्तन

नरवरगढ में जानी नामक एक पक्का चोर था। उसे देवी का इष्ट था। एक बार चोरी करने के इरादे से वह मारू के महल में पहुँचा। वहाँ से उसने मारू के गले का हार और ढोलासिंह की रत्नमाला चुराली। संयोग से वह चोरी करते हुए पकडा गया। प्रातःकाल होते ही मारू ने हुक्म दिया कि जानी को शूली पर चढा दिया जाय। मारू ने सुलतान को भी बुला कर चोरी का सब हाल कह सुनाया। सुलतान ने आगा पीछा सोच कर उत्तर दिया, "बहिन। इस चोर को मुझे बख्श दे और इसके बदले मुझे शूली पर चढा दे।" सुलतान के इन शब्दों को सुनकर मारू हँस पडी और कहने लगी, "भाई। तुम जानते नहीं, यह जानी चोरों का भी चोर है। इसे यदि मुक्त कर दिया गया तो न जाने भविष्य में यह कितने उत्पात मचायेगा?"

किन्तु सुलतान ने मारू की एक बात न सुनी और आव देखा न ताव, सबके देखते-देखते अपने सिर की पगडी उतार कर उसने जानी के सिर पर रख दी और उसे अपना धर्म का भाई बना लिया। सुलतान के इस व्यवहार का बडा सुन्दर प्रभाव जानी के हृदय पर पडा। जानी ने देवी को साक्षी देते हुए कहा—"सुलतान! आज शूली से बचा कर तुमने मेरे साथ जो उपकार किया है, उसका बदला मैं इस जन्म में तो क्या, जन्म-जन्मान्तरों में भी नहीं चुका सकता। हाँ, अपनी ओर से केवल यही कहे देता हूँ कि जब कभी तुम्हें मेरी आवश्यकता हो, मेरा सिर तुम्हारे लिए हाजिर है।"

सुलतान ने जिस नीति को अपनाया उससे चोर और डाकुओं का भी हृदय परिवर्तन हो गया। सुलतान का विश्वास था कि शारीरिक विजय से भी बडी विजय हृदय की विजय है। चोर और डाकुओं को शारीरिक दण्ड देने से किसी का भला नहीं होता। सच्चा दण्ड तो वह है जिससे अपराधी का सुधार हो जाय, भविष्य में वह अपराध करना छोड दे। प्राय देखा जाता है कि जो डाकू अथवा चोर दण्ड भुगत कर जेल से निकलते हैं, वे फिर चोरी अथवा डाकेजनी में प्रवृत्त हो जाते हैं। किन्तु उन्हीं के साथ यदि अच्छा व्यवहार किया जाय, यदि उनकी सद्वृत्तियाँ सहानुभूति और स्नेह के द्वारा जागृत कर दी जायँ तो जो पहले चोर एवं डाकू थे, वे ही राष्ट्र के उपयोगी नागरिक बन जाते हैं। सत्य तो यह है कि आग से आग कभी बुझी नहीं। क्षमा और सहानुभूति के शीतल जल से ही अपराधियों के हृदय की ज्वाला शान्त होती है। हृदय में सोया हुआ देवता जब जगता है तभी अपराध का दानव स्थान खाली कर पाता है, अन्यथा नहीं।

सुलतान ने हृदय परिवर्तन की इसी नीति को अपनाया जिसके परिणामस्वरूप जानी जैसा कुख्यात चोर उसका पक्का दोस्त बन गया। इसी प्रकार उसने गोदू नामक एक जाट को भी अपना अभिन्न हृदय मित्र बना लिया। सुलतान के प्रशासन-कार्य और उसकी न्यायनिष्ठा को देख कर मारू अत्यन्त हर्षित हुई। सारे शहर में आनन्द की दुन्दुभि बजने लगी। मारू ने सुलतान से कहा—"तुम्हारे कार्य से मैं सर्वथा सन्तुष्ट हूँ। मैं चाहती हूँ, तुम्हारी वेतन-वृद्धि कर दी जाय। तुमने जिस तत्परता के साथ अपने दायित्व का भार-वहन किया है, वह निश्चय ही पुरस्कार के योग्य है।"

सुलतान ने कहा—"बहिन! मुझे अधिक वेतन नहीं चाहिए। जितना वेतन मुझे मिलता है, वह मेरे लिए पर्याप्त से भी अधिक है। रही पुरस्कार की बात, इस सम्बन्ध में बतला देना चाहता हूँ कि मैं केवल कर्त्तव्य-बुद्धि से अपना काम करता हूँ, पुरस्कार की इच्छा से नहीं। अपने कर्त्तव्य पालन में ही मुझे पुरस्कार की प्राप्ति हो जाती है।"

सुलतान के इन उदात्त विचारों को जान कर मारू गद्‌गद् हो गई।

२८ बावड़ी का निर्माण

उधर सुलतान ने एक बार रतना सेठ को बुलाया और कहा—"मेरी बड़ी इच्छा है कि नरवलगढ़ में एक बहुत सुन्दर बावड़ी बनवाई जाय।" सुलतान के इन शब्दों को सुन कर रतना ने तुरन्त 'हाँ' भरते हुए कहा—"इस बावड़ी के निर्माण में जितना भी रुपया लगेगा, वह सब मेरी ओर से खर्च होगा।"

बावड़ी के कार्य का शिलान्यास कर दिया गया और नौ लाख की लागत पर सभी दृष्टियों से सुन्दर एक बावड़ी यथासमय बनकर तैयार हो गई।

२९. पर्व स्नान की तैयारी

बावड़ी के तैयार होने पर मारू ने कहा—"भाई! इस बावड़ी में स्नान का श्रीगणेश मेरे द्वारा होगा। मेरे स्नान कर लेने के बाद ही छत्तीसों जाति के लोग उसमें स्नान करेंगे।"

सुलतान ने कहा—"बहिन! यह बावड़ी तो एक प्रकार का तीर्थ स्थान है। तुम चाहो तो अवश्य सबसे पहले स्नान कर लो, किन्तु मैं स्पष्ट किये देता हूँ कि जो भी इस बावड़ी में स्नान करने के लिए आयेगा, उसे बिना किसी रोक-टोक के स्नान करने दिया जायगा।"

सोमवती अमावस्या का पावन पर्व आने वाला था। मारू ने इसी पुण्य-पर्व पर स्नान करने का निश्चय किया। उसने ब्राह्मण की लड़की को बुलवाकर मुहूर्त दिखलाया। ब्राह्मण की लड़की ने ज्योतिष के ग्रंथों तथा ढोला और मारू की कुण्डलियों को देख कर कहा—"हे रानी! तुम पर आज कल राहु की तथा ढोलसिंह पर केतु की दशा चल रही है। इसलिए वापिका-स्नान अभी तुम्हारे लिए अनिष्टकर है। अगर तुम स्नान करने के

लिए गई तो तलवार से तलवार बज उठेंगी, बड़ा घमासान युद्ध होगा और नरवलगढ़ पर भी विपत्ति के पहाड़ टूट पड़ेंगे। भोर्मसिंह नामक बनजारा तुम्हें स्नान नहीं करने देगा। अगर तुम अपना भला चाहती हो तो सोमवती अमावस्या के इस स्नान को स्थगित कर दो, आगे फिर किसी शुभ मुहूर्त पर स्नान करने चली जाना।" यह सुनकर मारू आगबबूला हो उठी और कहने लगी—"यह असम्भव है कि इस पर्व पर स्नान करने मैं न जाऊँ। मेरे भाई सुलतान ने बावड़ी खुदवाई और मैं स्नान न करूँ? कौन है वह जो मुझे रोक सके? कौन है वह भोर्मसिंह बनजारा जिसका भय मुझे दिखाया जा रहा है? क्या मुलतान जैन वीर के प्रशासन में मेरी ओर कोई आँख उठा कर भी देख सकता है? तुम्हारे ज्योतिष के ग्रन्थ सब झूठे हैं। मुझे तो कहीं कोई विघ्न दिखलाई नहीं पड़ता।"

यह सुनकर ब्राह्मण की लड़की ने उत्तर दिया—प्रभुता के मद के कारण तुम शास्त्रों में जो श्रद्धा नहीं रख रही हो, वह कोई अच्छी बात नहीं। मैं भी तुम्हारे साथ पर्व-स्नान के लिए चलती हूँ। मैं तुम्हें प्रत्यक्ष दिखला दूँगी कि तुम विघ्नों का शिकार हो रही हो। यदि कदाचित तुम सकुशल स्नान करके लौट आई तो मैं अपने ग्रन्थों को आग के हवाले कर दूँगी और उसके बाद शकुन मुहूर्त देखना भी सदा के लिए छोड़ दूँगी।"

ब्राह्मण कुमारी के इन शब्दों पर रानी ने कोई ध्यान नहीं दिया। उसे तो बावड़ी में पर्व-स्नान करने की बड़ी उमंग थी, बड़ा चाव था। उसने ढोलसिंह महाराज के पास हलकारा भेजकर आज्ञा चाही कि मारू ५०० सैनिकों के साथ सूरत की बावड़ी में स्नान करने के लिए जाना चाहती है। ढोलसिंह ने ५०० सैनिकों को भेज दिया और मारू को पर्व स्नान की आज्ञा दे दी। आज्ञा पाकर मारू के मन का हर्ष छलक-छलक बाहर आ रहा था। शहर भर में मारू ने अपने पर्व-स्नान की घोषणा करवा दी। इधर मारू ने शृंगार करना प्रारम्भ किया।

कथाकार के शब्दों में—

"तो जाणे मारू करवा लागी बी हार सिंगार।
ढोली सिंगरयाथी मारू जिस घड़ी।
ढोला में बैठी थी मारूपत नार।
पानसै चढ़या था वै ढोला का जिण दिन बागिया।
तो जाणे ढाई सै खोजा बी ले लिया मारू साथ।
जात छत्तीसू वै नरवलगढ की चढ चली।
झंडा व फरक्या बी जरद निशान।
बाज्या नगारा वै मारूपत नार का।
न्हावा ने चल देई बी मारू नार।"

इस प्रकार बड़ी सजधज और गाजे-बाजे के साथ मारू पर्व स्नान के लिए चल

मारू के स्नान करने के लिए जाते समय बाये तरफ कोचरी तथा दाहिनी ओर जम्बुक और सियार बोलने लगे। उधर मोमसिंह बनजारे ने जब नगारे की आवाज सुनी तो उसने अपने सरदारो से पूछा, "आज क्या यह देवी बढी आ रही है अथवा तीजा का कोई बडा त्योहार है जिसके कारण मृदग ध्वनि हो रही है ?" यह सुन कर भोमसिंह के भाई प्रभातसिंह ने कहा, "न तो कोई देवी बढी आ रही है और न ही आजकल तीजा का त्योहार है। कल मैं दाने-घास के लिए नरवलगढ की ओर गया था। वहाँ यह घोषणा की जा रही थी कि सोमवती के पर्व पर मारू वापिका स्नान के लिए जायगी। उसी को लेकर आज यह नगारे की ध्वनि सुनाई पड रही है।"

भोमसिंह यह सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। मारू को प्राप्त करने की उसकी इच्छा अत्यन्त बलवती हो उठी। मारू के सौन्दर्य के बारे मे उसने बहुत कुछ सुन रखा था। उसका स्मरण कर उसके मन-महोदधि म आनन्द की तरगें उठन लगी। उसन अपनी फौज को हुक्म दिया कि मारू स्नान न करन पाए, उसके डोल के चारो ओर घेरा डाल दिया जाय। १७०० जवान उसने साथ लिये, घोडे पर जीनें कस दी गई, कमरो पर तलवारें बँध गई। घोडो की वागें ढीली छोड दी गई। हवा स बातें करते हुए घोडे बावडी के पास आ पहुँचे। सैनिको ने डोले के चारो ओर घेरा डाल दिया। छत्तीसा जाति के लोग जो मारू के साथ थ, इस अप्रत्याशित घेरे को देखते ही रह गये। सब नर-नारी किंकर्त्तव्य विमूढ हो गये।

भोमसिंह का घोडा मारू के डोले के चारो ओर चक्कर काटन लगा। अनमस्त घोडे का फटकारा लगा तो डोले का पर्दा भी दूर जा पडा। पर्दा हटते ही ज्यो ही बनजारे न मारू की लावण्यमयी मूर्ति देखी वह मुग्ध हो उठा और कहन लगा, "हे कामिनी! क्या तू इस धरती को फोड कर निकली है अथवा किसी दरिया से तुम प्रादुर्भूत हुई हो? क्या स्वर्ग से परियो का कोई झूमखा टूट पडा है अथवा आसमान की चचल बिजली ही पृथ्वी पर आकर स्थिर हो गई है? पश्चिम की हवा से ही तुम्हारा शरीर लचक-मचक जाता है। तुम्हारे दांत दाडिम के बीज की तरह हैं, पतले-पतले होठ हैं, नेत्र छुरी की धार के समान तीखे हैं। नासिका शुक की चोंच के समान है, शीश कच्चे नारियल के समान हैं। पेट पीपल क पत्ते की तरह है, अँगुलियाँ मूँगफली जैसी हैं। कहाँ तक गिनाया जाय, तुम्हारे जिस जिस अग पर दृष्टि जाती है, वह वही स्थिर हो जाती है। तुम मेरे साथ घोडे पर सवार हो जाओ, नत्रो की पुतली के समान मैं तुम्हे रखूँगा। तुम्हे देख कर मेरे प्राण शीतल हो जाते हैं चचल मन को विश्राम मिलता है। मेरे टाडे म सत्तर बनजारियाँ और है, तुम उन सबकी सिरमौर रहोगी, सब पर तुम्हारा हुक्म चलेगा। मेरे यहाँ रहने पर स्वर्णाभूषणो स तुम्हारा शरीर जगमगान लगेगा, उच्चासन पर तुम आसीन रहोगी, पान चबाने को मिलेंगे। गगा तथा गोमती मे तुम्हे स्नान कराऊँगा। अडसठ तीर्थ तुम मेरे साथ करना। किसी भी वस्तु का अभाव तुम्हे नही रहेगा। मेरे निवास स्थान को देख कर तुम ढोलसिंह को सदा के लिए भूल जाओगी।" बनजारे के इन शब्दो को सुन कर मारू क्रोध से तिलमिला उठी और बोली, "बनजारे की भी कोई जाति है? बोझ ढोन का

धाम वह मरता है। वह भीषण रात भी गम्ने चनने-चनने गुजार देता है। तुम्हारी यह विसात कि तुम मेरी ओर दृष्टि लगाये हो? अगर ढोलसिंह महाराज को पता चल गया तो तुम्हारे प्राण के लाने पड़ जायेंगे। मेरे साथ छत्तीसों जाति के लोग पर्व-स्नान के लिए आये हैं। तू स्नान में विघ्न न डाल। स्नान के बाद मैं सबको खैरात भी बाँटूगी।"

मारू के इन शब्दों को सुन कर बनजारे ने उत्तर दिया, "रानी! तू बनजारे की भर्त्सना न कर। मैं बोझ ढोने वाला क्या, हीरे-पन्नों का व्यापारी हूं। आज तो मैं इतना वैभवसम्पन्न और शक्तिशाली हूं कि राजा और बादशाह भी झुक-झुक कर मुझे सलाम करते हैं। ऐसा कौन है जो मेरे वीर-कृत्यों की कहानी नहीं जानता? मैंने शाकरगढ़ तोड़ा, कुम्भलगढ़ तोड़ा और स्यालकोट तोड़ कर अभी आया हूं। एक बार मैं बूंदी भी गया था और हाड़ा से मैंने युद्ध किया था। चार घड़ी तक भी वे मेरी तलवारों के वार को नहीं सह सके और अन्त में मुंह में घास लेकर वे मेरे सामने आये और मुझे भेंट अर्पित की और मेरा आधिपत्य स्वीकार किया। नरवलकोट में भी मैं कोई पहली बार नहीं आया हूं, इससे पूर्व भी तीन बार मैं यहां आ चुका हूं। जब-जब मैं नरवलकोट में आया, ढोलसिंह ने मुझे भेंट अर्पित की और सम्मान सहित मुझे विदा किया। उस ढोलसिंह का तू मुझे क्या डर दिखलाती है? वह तो स्वयं मुझसे आतंकित है, मेरा रोब वह मानता है। मैं ढोलसिंह को राई अथवा तिनके जितना भी नहीं समझता। उस ढोलसिंह पर तू क्या गर्व गुमान करती है?"

बनजारे के इन गर्व भरे शब्दों को सुन कर मारू कहने लगी, "हे बनजारे! पर-स्त्री को छेड़ना अपने लिए संकट का आह्वान करना है। पर स्त्री जहरीले काले नाग का पिटारा है, उससे छेड़ छाड़ करने पर संसार में आज तक कोई सुखी नहीं रहा। काले नाग की पूँछ दबाने पर वह फुङ्कार उठता है और डसे बिना नहीं रहता। सर्प के काटे का फिर भी इस संसार में गारुड़ी लोग इलाज कर देते हैं किन्तु स्त्री जिसे डसती है, उसका फिर इस दुनिया में कहीं कोई उपचार नहीं। अरे बनजारे! क्या तूने मेरे भाई बली मुलतान का नाम नहीं सुना? उसे यदि किसी भी प्रकार कानों-कान खबर हो गई तो वह तुम्हारे प्राणों का ग्राहक बन जायेगा। तू यदि अपना भला चाहता है तो अपने टाडे को लाद कर यहां से चला जा। अगर तुमने मुझसे छेड़ छाड़ की तो बनजारों को वैधव्य-दुःख भोगना होगा। काल तुम्हारे सिर पर नृत्य कर रहा है। अरे बनजारे! क्या तू नहीं जानता कि जो जहर खायगा, वह तो मरेगा ही?"

बनजारे ने उत्तर दिया, "हे मारू! मेरे बल और पराक्रम को यदि तू जानती होती तो इस तरह की बात न कहती। एक बार की बात है, मेरा टांडा जैसलमेर पहुँचा जहां तुम्हारे पिता बुधसिंह का राज्य है। तुम्हारे पिता ने मेरे लिए जो भेंट भेजी, उसे मैंने ठोकर से ठुकरा दिया था और पद्मिनी की मांग की थी। तभी मुझे पता चला था कि ढोलसिंह के साथ तुम्हारा विवाह हो चुका है।"

यह सुन कर मारू ने कहा, "व्यर्थ की झूठी बातें बनाने से क्या लाभ ? यदि तू मेरे पिता के यहा पहुँचा होता तो कभी का यम्लोक चला गया होता। तेरे जैसे सैकडो चरवादार मेरे पिता के यहा रहते है और अपने टाडे मे जैसी बनजारिया तू लादे फिरता है, वैसी हजारो बादिया जैसलमेर मे हैं।"

इन शब्दो को सुनकर बनजारा उत्तेजित हो गया। उसने अपने हाथ मे कोडा लिया और डोले की झूल—बनात उडाने लगा। यह देख कर छत्तीसो जाति के लोगो मे भगदड मच गई। ढाई सौ खोजे भी पीठ दिखा कर चलते बने। ५०० सैनिक जो साथ थे, वे भी बनजारे के सामने न टिक सके। ऐसी स्थिति म मारू ने युक्ति से काम लिया और वह बनजारे से कहने लगी, "मुझे सवा पहर की अवधि दो, मैं अपने भाई सुलतान से एक बार मिल कर तुम्हारे टाडे मे आ जाऊँगी। तुम से कौल-करार कर मैं जाती हूँ।"

बनजारा यह सुन कर मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ और कहने लगा, "सवा पहर की अवधि मैं तुम्हे देता हूँ। यदि इस अवधि का अतिक्रमण हुआ तो निश्चय समझना, मैं नरवलगढ की ईंट से ईंट बजा दूँगा। मैं तुम्हे जाने देता हूँ किन्तु डोले मे बैठ कर अब तुम नही जा सकती। अब तुम्हे पैदल जाना होगा।"

मारू डोले को वही छोड, दासी के साथ पैदल चल पडी। रतना की सेठानी का डोला मारू के साथ चल रहा था। सेठानी ने कहा, "रानी। यह नहीं हो सकता कि तुम पैदल चलो, मैं डोले मे बैठी रहूँ। जब छत्तीसो जाति के लोग यहा से भग गये, तब केवल तुम्हारे ही लिए तो मै यहा डटी रही।" सेठानी के शब्दो को सुनकर रानी अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसके आग्रह को अस्वीकार न कर सकी। मारू और सेठानी दोनों एक ही डोले मे बैठ कर चलने लगी।

नरवलगढ पहुँच कर सेठानी डोले मे बैठ कर अपनी कोठी मे चली गयी और मारू पैदल ही चल कर महल के द्वार तक पहुँची। ढोलसिंह ने बनजारे का सब हाल पहले ही सुन लिया था। उसमे इतनी शक्ति नहीं थी कि वह बनजारे से लोहा ले सके। उसने महल का द्वार बन्द करवा दिया और मारू को अन्दर नही आने दिया।

मारू की एक सपत्नी थी अमियादे रानी। वह भी मारू पर ताने कसने लगी और बोली, "तुम्हारा पिता बुधसिंह साधारण कोटडियो का सरदार है। उसके गढ के चारो ओर फोगों की बाढ है और तू ने भी जैसलमेर में केवल ऊँट चराये है। वह तुम्हारी पुरानी आदत अभी तक नही छूटी। तभी तो तू आज पैदल चल कर आई है, तू ने राज-रानी की सारी मर्यादा तोड दी। बनजारे के साथ ही तू क्यो न चली गई ?"

समूचे नरवलगढ मे जिस मारू का हुक्म चलता था, जिसकी भृकुटी टेढी होते ही सब थर-थर कांपने लगते थे, आज वही मारू असहाय और विवश है। एक सामान्य सपत्नी भी उसे जली-कटी सुना रही है। आज मारू का वश नही चलता। वह अपने दुर्भाग्य पर

आठ आठ आंसू रो रही है। किन्तु फिर भी मारू ने धैर्य से काम लिया। उसने अप
रतनादे दासी को पास बुला कर कहा, "तू शीघ्र ही मेरे भाई सुलतान को यहां बुला क
ला, अन्यथा कटारी खा कर इसी घड़ी में अपने प्राण त्याग दूंगी।"

इतना सुनते ही रतनादे दासी चल पड़ी और सदर बाजार होकर समदबुर्ज पहुँची
शीघ्र ही सुलतान के पास जाकर उसने निवेदन किया, 'आप यहां चौपड़ खेल रहे हैं औ
मारू शोक के सागर में निमग्न है। उसे पर्व स्नान के लिए आपने भेजा था। आगे भोमसि
बनजारा उसे मिल गया और उसके डोल को चारो ओर से घेर लिया।

मारू ने बनजारे से सवा पहर की अवधि अपने भाई सुलतान से मिलने के लि
मांगी। इधर ढोलसिंह ने महल के द्वार बन्द कर दिये हैं। मारू बिलख-बिलख कर र
रही है और आत्म-हत्या करने पर उतारू है। सुलतान जैसा भाई पाकर भी क्या उसकं
यही दशा बनी रहेगी?"

दासी के मुख से यह हाल सुनते ही सुलतान ने उसी क्षण चौपड़ खेलना बन्द क
दिया। जानी चोर, पनि पठान और गोदू बावलिया को साथ लेकर वह चल पड़ा औ
चल कर महल के दरवाजे पर जा पहुँचा जहां मारू दुःखी होकर विलाप कर रही थी।
सुलतान को देखते ही उसकी अश्रु-धारा का प्रवाह रोके नहीं रुकता था। स्नेही को देख
लेने पर जैसे हृदय के अवरुद्ध कपाट खुल गए हों।

"स्वजनस्य हि दुःखमग्रतो विवृतद्वारमिवोपजायते।"

मारू ने अथ से इति तक सब कथा सुलतान को कह सुनाई। सुलतान ने कहा—
"बहिन! ऐसे ही अवसरों पर तो मनुष्य की परीक्षा होती है। तुम किसी भी प्रकार की
चिन्ता न करो। मैं अभी हथियापोल का दरवाजा खुलवाये देता हूँ। सुलतान ने दरबान से
दरवाजा खोलने के लिए कहा। दरबान ने उत्तर दिया कि ढोलसिंह के हुक्म से दरवाजा
बन्द किया गया है। यदि मुझे अभय-दान आप दिलवा सकें तो मैं दरवाजा खोल दूँ।"
सुलतान ने उसी क्षण दरबान को अभय-दान दिया और शीघ्र ही दरवाजा खोल दिया गया।

मारू महल के अन्दर चली गई और भगवान् से प्रार्थना करने लगी कि मेरे भाई
बली सुलतान का बाल भी बांका न हो।

उधर सुलतान ढोलसिंह के यहां जा पहुँचा। ढोलसिंह उस समय गद्दे पर सो रहा
था। सुलतान को देखते ही उसके कँपकँपी छूटने लगी। सुलतान ने सारा हाल ढोलसिंह को
कह सुनाया और सलाह दी कि बनजारे से लोहा लेना ही इस समय हमारा परम धर्म है।
यदि हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहे तो हमारे क्षत्रियत्व पर कलंक लगेगा और सदा के
लिए दुनिया में हमारी बदनामी होगी।

ढोलसिंह बनजारे की शक्ति से परिचित था। इसलिए सहसा वह युद्ध को 'हाँ' न

कर सका। गोदू को हनुमान का इष्ट था। उसके द्वारा भय दिखलाने पर ढोलसिंह युद्ध के लिये सहमत हो गया और कहा कि युद्धार्थ बारह हजार फौज भेजने के लिए मैं तैयार हू।

युद्ध के लिए अनुमति मिलने पर सुलतान मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ और गोदू को धन्यवाद दिया कि उसने ढोलसिंह को युद्ध के लिए राजी कर लिया।

सुलतान ने कहा—"जब जानी, पनि पठान और गोदू मेरे मित्र हैं तो मैं बनजारे को क्या समझता हूँ ? उसे परास्त कर देना मेरे बाये हाथ का खेल है। मैं अभी उसके छक्के छुडाने का उपाय करता हूँ। सुलतान ने एक खाली कागज हाथ में लिया और कलम से बनजारे के नाम परवाना लिखा—

"घणी भी लिखी बिणजारे नै बदगी
लाखा ऊपर लिख रह्या जं हर नाव
सवा पहर को करार मारू जं कर लियो
कोई बी बात सैं भोमसिह मत घबरायजे
मारू नै भेजू मैं थारा साथ कै माय।
रात एक रात तो मांगो मनै देय दे
दिन उगता लेयर डोला आऊँ मैं टाडा कै माय
घू‍ँगा तनै जाफत घणा परेम सैं
तो जाऊँ ओर बी चढाऊँ थारै भेंट
राजा बा करकै भेजू बिणजारा भोमसिह
रावैंगो मनै तू बी सदा रै याद।"

हलकारा उक्त परवाना लकर यथाशीघ्र भोमसिह के पास पहुँचा। परवाना पढते ही भोमसिह अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसने हलकारे को २५ अशर्फिया इनाम मे दी। भोमसिह ने अपने सभी सरदारो को पत्र पढ कर सुनाया। सरदारा के भी जी मे जी आ गया। सभी इस बात से बडे खुश थे कि अब बिना युद्ध के ही काम बन जायगा।

बनजारे के यहा राग रग होने लगा। नर्तकियो का नृत्य प्रारम्भ हुआ। तबलची तबले बजाने लगे। सबने अपने-अपने साज सम्हाले। शराब की मनुहारें होने लगी। आपानक गोष्ठी का ऐसा रग जमा कि सब सरदार अपनी-अपनी सुध-बुध भूल गये।

उधर हलकारे ने वापिस लौट कर सारा समाचार बली सुलतान से कह सुनाया। सुलतान ने अपनी युक्ति की सफलता पर हलकारे को शाबाशी दी।

सुलतान ने फौज को हुक्म सुना दिया कि कल प्रात काल बनजारे के विरुद्ध युद्ध का अभियान प्रारम्भ होगा।

सायंकाल सुलतान ने हलकारा भेजकर रतना सेठ को बुलाया और उसे अपने बराबर आसन पर बिठलाया। सुलतान ने कहा—"रतना! तू मेरा पगडीबदल भाई है, बता, युद्ध मे मेरी क्या सहायता करेगा?"

रतना ने उत्तर दिया—"सुलतान! युद्ध करना तो दूर, मैंने कभी तलवार की मूठ के हाथ भी नही लगाया। हाँ, धन जितना तुम्हे चाहिए, मैं लगा देने के लिए तैयार हूँ। युद्ध मे फौज पर जो भी व्यय होगा, उसका सारा भार मैं उठाऊँगा।"

सुलतान ने कहा—"भाई! मैं तो केवल तुम्हारे दिल के भाव जानना चाहता था। न मेरे पास युद्ध करने वालो की कमी है और न धन-द्रव्य का ही कोई अभाव है, किन्तु फिर भी तुम्हे धन्य है कि तुम नरवलगढ की रक्षा के लिए अपना सारा धन लगाने के लिए तैयार हो गये।"

इसके बाद सुलतान ने पनि पठान से कहा—"इस नरवलकोट मे मैंने चार मित्र बनाये हैं। मुझे विश्वास है, ये चारो मित्र मेरी पूरी सहायता करेंगे। भाई पठान! तुम बताओ, किस रूप मे मेरा साथ दोगे?"

पठान ने उत्तर दिया—"पट्टेबाजी के काम म मे दक्ष हूँ। मेरे उस्ताद ने इसकी मुझे अच्छी शिक्षा दी है। मेरे तलवार के हाथो को देख कर तुम्हे निश्चय प्रसन्नता होगी।"

इस पर सुलतान ने हर्षित होकर उत्तर दिया—तुम्हारे माता पिता को धन्य है, जिन्होने तुझ-जैसा वीर पुत्र पैदा किया और धन्य हैं तुम्हारे वे उस्ताद जिन्होने तुम्हे पट्टेबाजी की कला सिखलाई।"

अब सुलतान ने गोदू की ओर उन्मुख होकर कहा—"भाई गोदू! एक काम तो तुमने मेरा कर दिया अर्थात् ढोलसिंह को युद्ध के लिए राजी कर लिया। किन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं है, मुझे तुमसे बडी बडी आशाएँ हैं। आज तुम जानते हो, मुझ पर भीड पडी है। बताओ, किस काम आओगे?"

गोदू ने उत्तर दिया—"मुझे बजरङ्गबली का इष्ट है। मेरी सेवा से प्रसन्न होकर जब बजरङ्ग ने मुझसे वरदान मागने के लिए कहा तो मन उनसे यही वरदान माँगा था कि मेरा शरीर वज्र का हो जाय। इस पर बजरङ्ग ने मुझे वरदान दिया कि भीड पडने पर सवा पहर तक मेरा शरीर वज्र का रहेगा तथा एक एक योद्धा के प्रहार करने पर दो-दो योद्धा एक साथ गिर पड़ेंगे और वज्राङ्ग हो जाने के कारण मेरे शरीर पर किसी भी प्रकार की चोट नहीं आयेगी। इसलिए हे सुलतान! सवा पहर तक बनजारे से लडने का काम मुझ पर छोड देना। मैं अकेला बनजारे के साथ युद्ध करूँगा। बाकी मैं कुछ छोड़ूँगा नहीं। मैं सवा पहर म ही सारी फौज का खात्मा कर दूँगा, किन्तु यह सच है कि सवा पहर के बाद मेरा कोई वश नही चलगा।"

सुलतान ने कहा—"भाई गोदू ! मुझे तुम्हारी इस करामात का अब तक पता नही था। बनजारे से भयभीत होने की अब कोई आवश्यकता नही। वह भी याद रखेगा कि गोदू जैसे वीर से भी कभी उसका पाला पड़ा था।"

अब जानी चोर की बारी थी। सुलतान द्वारा पूछे जान पर उसने उत्तर दिया—"दिन मे तो मैं कुछ कर नही सकता। हाँ, रात के समय अलबत्ता मैं वह दृश्य दिखलाऊँगा जिसे देवता भी देखन के लिए तरसेंगे। मुझे दुर्गा माई का इष्ट है। मेरे स्मरण करते ही वह मेरे सामने उपस्थित हो जाती है। बनजारे को अपनी ५२ तोपो का बड़ा गर्व है। मैं देखूँगा कि उसको बावन तोपें क्या करती हैं। मेरे सामन उसकी एक न चलेगी।"

इतना कह कर जानी ने सुलतान से कहा— 'भाई ! तुमने हम सब लोगो से अपनी-अपनी शक्ति के बाबत प्रश्न किये, अब तुम भी तो बताओ, तुम क्या करामात दिखलाओगे ?"

यह सुनकर सुलतान ने उत्तर दिया—'तुम सब तो अपना काम पूरा कर देना। इसके बाद जो भी बाकी बचेगा, उसे म सम्हाल लूँगा। मैं गोरखनाथ का चेला हूँ। भीड पड़ने पर जब मै बाबा का स्मरण करूँगा, वह मेरी सहायता के लिए उसी क्षण आ उपस्थित होगा। भोमसिंह मेरे पीछे गोरख का शिष्य बना है। यदि भोमसिंह को इस बात का पता लग जाय कि मैं गोरख का शिष्य हूँ तो वह मुँह म घास और गले म पगडी डाल कर मेरे चरणो म आ गिरेगा, किन्तु मै पहले उसे यह भेद नही देना चाहता।"

इतना सुन कर जानी ने कहा—"भाई ! अब मेरे जाने का समय होगया है। तुम्हारे दुख को मै अवश्य ही शान्त करूँगा।"

३० जानी की करामात

जानी ने दुर्गा का स्मरण किया और स्थिर चित्त से देवी का ध्यान करते हुए मन ही मन कहने लगा—"हे माता ! सुर, नर, मुनि, सभी तेरी शक्ति का गुणगान करते हैं। वह कौनसा कार्य है जो तुम्हारे प्रसन्न होने पर सिद्ध न हो सके ? हे सिंहवाहिनी ! सुलतान के सामने मैंने जो प्रतिज्ञा की है, उसकी लाज रखना। ५२ मन की कड़ाही मैं कर दूँगा, ५२ बकरे तथा ५२ फूल शराब की बोतलें मैं चढाऊँगा, तेरे नाम का 'जडूला' मैं बोल रहा हूँ, आश्विन के महीने म तेरी 'जात' देने मैं आऊँगा।"

जानी के इस प्रकार स्मरण करते ही दुर्गा माता ने उसको दर्शन दिये। देवी के दर्शन पाकर जानी के हर्ष का पारावार न रहा, वह अपने मे अतुल शक्ति का अनुभव करने लगा और शीघ्र ही बड़े उत्साह मे भरकर वह भोमसिंह बनजारे के टाँडे की ओर चल पडा। जानी के वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते रात के दो बज गये। टाँडे के पहरा लग रहा था, सगीनें लिए हुए सिपाही गश्त लगा रहे थे, किन्तु दुर्गा की माया तो देखिए, ज्योंही जानी पहरे के पास पहुँचा, सभी सिपाहियों को निद्रा न आ घेरा। ऐसा लगता था, जैसे किसी ने कोई जादू

कर दिया हो, मानो किसी मोहास्त्र का प्रयोग कर दिया गया हो। अभी एक क्षण पहले जहाँ पहरेदार पहरे पर जग रहे थे तथा सगीन लिए हुए सिपाही घूम रहे थे, वहीं अब पूर्ण निस्तब्धता और नीरवता का साम्राज्य छा गया।

जानी ने टाडे के अन्दर पहुँच कर ६०० बैलो की रस्सिया काट दी, १५०० ऊँटो की 'मुरिया' काट डाली, साढे सात सौ हाथियो की साकलें खोल दी। असख्य घोडो को सब प्रकार के आगे पीछे के पाशो से मुक्त कर, टाडे के बाहर कर दिया।

इतना कर चुकने के बाद जानी जनाने तम्बू म प्रविष्ट हुआ। वहा पर सत्तर बनजारिया शयन कर रही थी। वे झलमलाते हुए आभूषणो से देदीप्यमान हो रही थीं। उनकी वेणियो म पन्ने तथा जवाहरात लगे हुए थे। जानी ने कैंची से उनकी वेणियाँ काट डाली और अपनी गठडी भर ली।

इनके बाद जानी भोमसिंह के तम्बू मे पहुँचा। भोमसिह ढोलिये पर गहरी निद्रा म सोया हुआ था। जानी ने चुपके से जाकर कैंचो से भोमसिंह का दाढी-मूछ कतर ली। तम्बू म रखे हुए पाचो कपडे और हथियार भी हस्तगत कर लिये।

देवी की कुछ ऐसी माया व्याप्त थी कि भोमसिंह को कुछ भी पता न चल सका।

अब जानी किले की ओर चल पडा, जहा ५२ तोपो मे बारूद भरी हुई थी। जानी ने उन सब म डाट लगादी जिससे बारूद पानी जैसी ठडी पड गई।

इधर जानी द्वारा स्मरण किये जाने पर दुर्गा ने उसे दर्शन दिये और कहा—"जानी, तुम्हे घबराने की आवश्यकता नही है। इन सब तोपो को मैंने निष्फल कर दिया है।" यह सुनकर जानी के हर्ष का ठिकाना न रहा।

जानी मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न होकर नरवलगढ की ओर चल पडा। अपने कार्य की सफलता के कारण उसके पाव बडी तेजी से बढ रहे थे। जानी चल कर समदबुर्ज पहुँचा। उस समय सुलतान सो रहा था। जानी चुपचाप जाकर अपनी जगह पर सो गया फिर कुछ देर बाद जब सुलतान जगा तो उसने जानी को सोते हुए पाया। सुलतान यह देख कर हक्का बक्का-सा रह गया और जानी के पास जाकर क्षोभ के साथ कहने लगा—'अरे जानी। तू ने तो कहा था कि मैं रात का ही मर्द हूँ। तू तो खूटी तान कर सो रहा है। यदि तेरे मन म दगा था तो तुझे काम पूरा कर देने की 'हाँ' न भरनी चाहिए थी। यदि तू पहले ही साफ-साफ मुझे कह देता तो मैं और कुछ बन्दोबस्त करता। अब ऐन वक्त पर मै भी क्या करूँ? बनजारे के यहाँ अब युद्ध का नगाडा बजेगा और उसकी पूरी तोपें जब चलेंगी तो सारा नरवलगढ भस्म हो जायगा। अरे जानी। यह तूने क्या किया? मुझे स्वप्न म भी यह आशा न थी।"

इतना सुनना था कि जानी जोर-जोर से हँसने लगा और बोला—"भाई सुलतान! तू जरा भी चिन्ता न कर। मुझे जो काम सौंपा गया था, उसे मैं पूरा कर आया हू। बनजारे

के हाथी-घोडो तथा ऊँटो को मैंने टाडे मे बाहर निकाल दिया है, वे जगल मे कहीं भटक रहे होंगे। देवी की कृपा से ५२ तोपो को मैंने निष्फल कर दिया है। ७० वनजारियो की बेणिया मे काट लाया हूँ, उनके गहने और जेवर साथ ले आया हूँ। ओमसिंह की दाढी मूँछ काट लाया हूँ।"

इतना कह कर उसने अपनी गठरी खोली और सुलतान के सामने रख दी।

३१. बावडी की ओर प्रयाण

जानी की करामात देख कर सुलतान कहने लगा, "भाई जानी। तुम्हारे गुणों को मैं कभी नहीं भूलूँगा, जो काम तुमने कर दिखलाया है, वह दूसरे के लिए सर्वथा असम्भव था। तुम तो तुम्ही हो। तुम्हारी उपमा मैं किससे दूँ ? तुम्हारे जैसे मित्र को पाकर मैं अपने आपको अत्यन्त धन्य समझता हूँ।"

दूसरे दिन प्रात काल होते ही सुलतान ने हलकारे को भेज कर ढोलसिंह से कहलवाया कि वह १२ हजार फौज को तैयार हो जाने का हुक्म दे। १२ हजार फौज के लिए ढोलसिंह पहले से ही वचनबद्ध था। यथासमय फौज तैयार हुई और युद्ध का नगाडा बजने लगा। इस प्रकार गाजे बाजे के साथ १२ हजार फौज को साथ लेकर सुलतान बावडी की तरफ रवाना हुआ। दुर्गा का लाडला जानी, गोदू तथा पनि पठान—सुलतान के तीनो मित्र भी साथ-साथ चले। अपने चौथे मित्र रतना को साथ लेने के लिए सुलतान उसके पास पहुँचा। रतना ने कहा—"भाई सुलतान ! युद्ध का और मेरा ३६ का नाता है। मैं चाँदी के भाले चला सकता हूँ, लोहे के भाले चला कर युद्ध करना मेरे वश का रोग नही।"

सुलतान ने कहा—"रतना ! मैं तुम्हे भाले चलाने के लिए युद्ध मे नही ले चल रहा हूँ। भाले चलाने वालो की मेरे पास कोई कमी नहीं है। मैं तो तुम्हे केवल इसलिए ले चल रहा हूँ कि तुम हमारे युद्ध का तमाशा देखो, अन्यथा तुम्हारे मन मे धोखा रह जायगा कि [illegible]त तरह का अद्भुत युद्ध मैंने अपनी आँखो से नही देखा।"

यह सुनकर रतना अत्यन्त प्रसन्न हुआ और सजधज कर घोडे पर सवार होकर [illegible]लतान के साथ हो लिया।

३२. बनजारे की तैयारी

उधर युद्ध के नगाडो की ध्वनि बनजारे के कानो मे पडी तो वह क्रोध से आगबबूला [illegible] गया। अपनी दाढी-मूँछ तथा बनजारियो की बेणियो के काटे जाने एवं हाथी-घोडो आदि [illegible] भगा दिये जाने के कारण बनजारा क्षुब्ध तो पहले से ही था, अब तो उसके तन-बदन मे [illegible]ग लग गई। उसने अपनी ६० हजार फौज इकट्ठी की और ढोलसिंह से युद्ध की पूरी [illegible]यारिया कर ली। तोपचियो को उसने हुक्म दिया कि ५२ तोपो मे वे बत्तिया डाल दें।

तोपची किले पर जा चढे और तोपो मे वे वत्तिया डालने लगे किन्तु तोपा ने साफ जवाब दे दिया। जैसा पहले कहा जा चुका है, जानो ने पहले ही बारूद को बेकार कर दिया था।

भोमसिंह को खबर दी गई कि तोपें काम नही कर रही है। बनजारा स्वय देखने के लिए आया और सब हाल देखकर हक्का बक्का हो गया और कहने लगा, "आदमकद का यह काम नही है, जान पड़ता है, यहाँ कोई अलौकिक शक्ति काम कर रही है, अन्यथा ढोलसिंह मे आज इतनी शक्ति कहाँ से आ गई कि उसकी फौज मुझसे लोहा लेने की हिम्मत कर रही है।" किन्तु फिर भी भोमसिंह को अपना कर्तव्य निश्चित करते देर न लगी। उसने धैर्य नही खोया और अपनी सेना को प्रोत्साहित करते हुए कहने लगा, "मेरे वीर योद्धाओ! ढोलसिंह की सेना मे तो केवल बारह हजार सैनिक हैं, वे हमारे ६० हजार सैनिको के समक्ष कब तक टिक सकेंगे? ढोलसिंह की सेना हमारी सेना के मुकाबले मे आटे में नमक के बराबर है। हमारी विशाल वाहिनी के सामने ढोलसिंह की फौज कहाँ तक ठहर सकेगी? मेरे वीर योद्धाओ! शत्रु-सेना पर टूट कर उसका खातमा करदो। उसके बाद हम नरवलगढ लूटेंगे और मारू को महलो से निकाल लायेंगे। मुझसे झूठमूठ अवधि माग कर जो धोखा मुझे दिया गया है, उसका मजा हम चखा देंगे।"

३३ सुलतान और बनजारे की वार्ता

इतना कह कर भोमसिंह घोड़े पर सवार हुआ और सेना के आगे आगे चलने लगा। जब बनजारा अपनी विशाल सेना को साथ लेकर बावडी के पास पहुँचा तो उसे वली सुलतान दिखलाई पड़ा जिसने अपना १२ हजार सेना के साथ बनजारे से युद्ध करने के लिए मोरचा लगा रखा था। सुलतान ने भोमसिंह को देखकर कहा, हे बनजारे! लड़ाई दो तरह की हुआ करती है—एक सत् की और दूसरी असत् की। मुझे बतलाओ, तुम किस प्रकार का लड़ाई करना पसन्द करोगे?"

बनजारे ने पूछा, "सत् की और असत् की लड़ाई कैसे हुआ करती है? तुम स्पष्ट करके समझाओ।" इस पर सुलतान ने कहा, "सत् की लड़ाई वह है जिसमे एक सेना का योद्धा दूसरी सेना के योद्धा से युद्ध करे। असत् की लड़ाई वह है जिसमे अल्पसंख्यक सेना और बहुसंख्यक सेना का परस्पर युद्ध हो।"

३४ सत् की लड़ाई

भोमसिंह ने कहा, सत् का युद्ध करना ही मुझे पसन्द है।" सुलतान से यह कह कर भोमसिंह अपने सरदारो की ओर उन्मुख होकर कहने लगा, "सेना मे जो सबमे बड़ा सूरमा हो, जो पट्टेबाजी के हाथ दिखला सकता हो, वह दंगल मे उतरे। यदि हमारी सेना मे से कोई सूरमा तैयार न हुआ तो मेरी बात चली जायगी, मेरी मोती-जैसी आब के बट्टा लग जायगा।"

यह सुनकर भोमसिंह के भाई प्रभातसिंह ने कहा, "दगल मे उतरने के लिए मैं तैयार हूँ। मेरे उस्ताद ने पट्टेबाजी के जो दाव-पेंच मुझे सिखलाये है, उन्हे शत्रु पर ग्राजमाने का ग्रवसर ग्राज ग्राया है। शत्रु भी याद रखेगा कि किसी से पाला पडा था।"

भोमसिह ने यह सुनकर ग्रपने भाई को 'धन्य-धन्य' कहा ग्रौर उसे पट्टेबाजी के हाथ दिखलाने के लिए पूर्ण रूप से प्रोत्साहित किया। प्रभातसिह घोडे पर सवार हुग्रा ग्रौर दगल मे लजाकर ग्रपने घोडे को नचाने लगा।

उधर चक्वं बैण के पोते बली सुलतान ने पनि पठान से कहा, भाई पठान। पट्टेबाजी की कला में जो कमाल तुम्हे हासिल है, उसे दिखाने का ऐसा मौका ग्रौर कब ग्रायेगा?"

पनि पठान ने उसी क्षण उत्तर दिया, "सुलतान! पट्टेबाजी के जो हाथ मैं दिखलाऊँगा, उन्हे देखने के लिए बडे बडे योद्धा तरसेंगे।" ऐसा कह कर पनि पठान भी ग्रपने घोडे पर सवार होकर दगल मे उतर ग्राया।

३५ प्रभातसिंह की मृत्यु

ग्रब प्रभातसिह ग्रौर पनि पठान मे पैंतरेबाजी चलने लगी। दोनो ही पट्टेबाजी के जबरदस्त खिलाडी थे। दोनो फौजें ग्रामने-सामने खडी तमाशा देख रही थी। जब एक दूसरे पर वार करता तो दूसरा विद्युत् गति से बार को बचा जाता। दोना सेनाएँ ग्रपने-ग्रपने योद्धा को प्रोत्साहित कर रही थीं।

ग्रन्त मे जब एक दूसरे पर वार करते बडी देर हो गई तो पनि पठान को बडा गुस्सा ग्राया ग्रौर उसने प्रभातसिह के गले मे ऐसा प्रहार किया कि वह लटके घोडे पर से जमीन पर नीचे ग्रा गिरा।

प्रभातसिह को धराशायी होते देख भोमसिह ने लम्बी सास ली ग्रौर कहा, "बुरा हो तेरा, हे सूरमा! तुमने मेरी एक भुजा ही तोड डाली। ग्रगर मुझे पता होता कि सत् की लडाई मे मेरे भाई की मृत्यु हो जायगी तो यह सत् की लडाई मैं कभी मोल न लेता।"

भोमसिह को इस प्रकार दुखी होते देख उसकी सेना भी विचलित ग्रौर क्षुब्ध हो उठी।

उधर पनि पठान, जिसने प्रभातसिह को स्वर्गलोक पहुँचा दिया था, जब सुलतान के पास पहुँचा तो सुलतान ने उसके पट्टेबाजी के कौशल पर उसे शाबाशी दी। सारी सेना मे विजयोत्सव मनाया गया ग्रौर बधाई बाँटी गई।

ग्रपने भाई की मृत्यु देख भोमसिह ने बली सुलतान को कहलवाया, "ग्रब मैं सत् की लडाई नही करूँगा। मेरी विशाल वाहिनी तुम्हारी सेना से युद्ध करेगी। मै ग्रपने भाई की मृत्यु का निश्चय ही प्रतिशोध लूँगा।"

सुलतान ने कहा, "भीमसिंह! यदि सत् का युद्ध करने मे तुम असमर्थ हो तो तु अपनी पूरी सेना तैयार करलो किन्तु जहा तक हमारा सवाल है, हम अपनी सेना मे केवल एक योद्धा भेजेंगे तो तुम्हारी समस्त सेना से अकेला युद्ध करेगा।"

यह सुनकर बनजारा आश्चर्य से हैरान हो गया कि आखिर बनी सुलतान की फौज मे ऐसा कौन-सा योद्धा है जो मेरी सारी सेना से लोहा लेने की शक्ति रखता है।

बनजारे ने इस बार बड़े जोर शोर के साथ अपनी सेना तैयार को और योद्धाओ से कहा कि भाइयो! सुलतान का केवल एक योद्धा हमारी सम्पूर्ण सेना से लड़ने के लि आ रहा है। क्या उसके दुस्साहस का हम उसे मजा न चखायेंगे?

बनजारे के सैनिको ने जब यह सुना कि केवल एक योद्धा ६० हजार सिपाहियो के साथ युद्ध करने आ रहा है तो वे सब एक साथ बोल उठे, "उस योद्धा का हम कचूमर निकाल डालेंगे, उस योद्धा की हम बोटी-बोटी नोच लेंगे। सुलतान भी याद रखेगा कि केवल एक योद्धा को युद्धार्थ भेजने का क्या फल निकला करता है।"

३६. गोदू की वीरता

उधर सुलतान ने गोदू से कहा, "तुम जिस दिन की प्रतीक्षा कर रहे थे, वह दि आज आ पहुँचा है। आज अपने हाथ दिखाकर तुम अपनी अभिलाषा को पूरा करो।"

सुलतान के इन शब्दो को सुनते ही गोदू के चाव चढ गया। वह बजरगबली का ध्यान करके मन ही मन कहने लगा "मेरे इष्टदेव! आज मेरी प्रतिज्ञा की रक्षा करना सवा मन का रोट तुम्हारे लिए बनवाऊँगा।"

बजरगबली की कृपा से सवा पहर के लिए उसका शरीर वज्र का हो गया मचंगा उठाकर कूदता फादता गोदू बावलिया शत्रु सेना मे जा पहुँचा। एक पर वह मचगे से प्रहार करता तो दो एक साथ गिर पडते। उसका शरीर तो वज्र का था, उसके शरीर पर किया गया बडे से बडा प्रहार उसे पुष्पवत् जान पड़ता था। सवा पहर तक लडते लडते उसने बनजारे की बहुत-सी फौज का काम तमाम कर दिया।

अन्त में गोदू ने भीमसिंह से कहा, "तुम यह न समझना कि बनी सुलतान की सेना मे मैं ही एक अकेला योद्धा हूँ। मेरे जैसे हजारो योद्धा उसकी सेना म है। सुलतान की सेना से लोहा लेना मौत का आह्वान करना है।"

गोदू के वाक्य सुनकर बनजारा हतप्रभ हो गया। सुलतान की सेना के योद्धाओ का रोब उस पर गालिब हो गया, वह आतंकित हो उठा, कुछ समय के लिए वह किंकर्तव्यविमूढ-सा हो गया।

उधर जब गोदू सुलतान के पास पहुँचा तो सुलतान ने उसके कार्य को बहुत सराहा और कहा, "गोदू! धन्य है तुम्हारे माता पिता को जिन्होने तुम जैसे वीर पुत्र को जन्म दिया।"

गोटू ने उत्तर दिया, "सवा पहर तक अपने हाथ दिखाने की बात मैंने कही थी, वह मैंने पूरी कर दी। अब तुम जानो, तुम्हारा काम जाने।"

सुलतान ने कहा, गोटू! तुमने अपने कर्त्तव्य का पालन किया। अब मेरी बारी है। मैं भी अवश्य ही अपना काम पूरा करके दिखलाऊँगा।"

३७ सुलतान का अलौकिक पराक्रम

इतना कह कर सुलतान ने गोरखनाथ का स्मरण किया और कहा, "बाबा! तुमने मुझे खाडे का वरदान दिया था, तुमने कहा था कि मैं १२ साके पूरे करके दिखलाऊँगा। आज मुझ पर भीड पडी है। बनजारे के पास लगभग एक लाख फौज है। क्या तुम मेरी सहायता नही करोगे? हे बाबा! मुझे तो तुम्हारा ही पूरा भरोसा है।"

कदलीवन मे गोरखनाथ अपने आसन पर बैठे हुए थे। सुलतान के प्रार्थना करते ही उनका आसन हिला और वे तुरन्त समझ गये कि आज शिष्य पर भीड पडी है। उन्होने बिना एक क्षण का विलम्ब किये, खडाऊ पहनी और सोटा बगल मे दबाया। पवन वेग से चलकर वे सुलतान के पास आ पहुँचे और अपना वरद हस्त सुलतान के सिर पर उन्होने रखा। सुलतान बाबा के चरणो मे गिरा।

सुलतान ने कहा, "बाबा! आज बडे जोर का सकट उपस्थित है, मारू को मैने अपनी धर्म की बहिन बनाई है। उसकी इज्जत आज खतरे मे है।"

गोरख ने सुलतान से सारी कथा सुनकर उसे अभय वरदान दिया और कहा, "बनजारे की एक लाख फौज का भी वश नही चलेगा, वह तुम्हारी १२ हजार फौज से हार जायगा। किसी नारी की इज्जत लेने का जो मार्ग बनजारे ने अपनाया है, उसका फल उसे भुगतना होगा।"

बाबा के इन शब्दो को सुनकर सुलतान का युद्धोत्साह सौ गुना बढ गया। उसने अपनी सेना का तैयार होने का हुक्म दिया। उधर बनजारे की बची हुई फौज भी युद्धार्थ तैयार हो गई। दोनो सेनाएँ आमने-सामने आ डटी। घमासान युद्ध होने लगा। सुलतान के १२ हजार सिपाही कहर ढाने लगे। प्रात काल से लेकर सायकाल तक युद्ध होता रहा। बनजारे के असख्य योद्धा खप गये किन्तु सुलतान की सेना का बाल भी बाका न हुआ। मोर्मसिह यह दृश्य देखकर चकित हो गया। उसने सुलतान को लक्ष्य करके कहा, "भाई! सच बता, तू कौन है? क्या तू कोई देवता है जो मनुष्य की लीला कर रहा है? ढोलसिंह मे तो यह शक्ति न थी कि वह मुझ से लोहा लेता। मेरी सेना के नगाडे को सुनकर उसके देवता कूचकर जाते थे और आज भी, वह युद्ध मे उपस्थित नही है। मैंने गोरख की सेवा की थी। उसने मुझे वरदान दिया था कि खाडे की सहायता से चारो दिशाओ मे मेरी विजय-दुंदुभि बजती रहेगी। हाँ, गोरख ने मुझे यह चेतावनी अवश्य दी थी कि मैं बली सुलतान नाम के योद्धा से कभी लडाई मोल न लूँ। मेरी बुद्धि काम नही

कर रहो है। तुम सच-सच बताओ, क्या वही प्रतिहारवंशी वली मुलतान तो तुम नहीं जिसके सम्बन्ध में गोरख ने मुझे आगाह किया था ?"

सुलतान ने उत्तर दिया, "कोचलगढ के नरपति का मैं बालगोपाल हूँ, चकवै बें का मैं पोता हूँ, जाति का प्रतिहार वंशीय क्षत्रिय हूँ। मैंने सच्ची सच्ची बात तुम्हे बत दी है।"

बनजारा जानता था कि बली मुलतान को छोड कर वह अन्य योद्धाओ पर वि प्राप्त कर सकता था। गोरख ने ही उसे सचेत कर दिया था कि सुलतान से कभी युद्ध करना, अन्यथा तुम्हे प्राणो से हाथ धोना पडेगा। यही सोचकर बनजारे ने मुँह मे घ ले ली और क्षत्रिय के चरणो मे अपनी पगडी रख दी।

३८ बनजारे का आत्म समर्पण

बनजारा कहने लगा—"मुलतान ! बडी भूल हुई कि मैंने गुरु गोरख के आदेश भी पालन नही किया। अब मेरे प्राण हाजिर हैं, तुम चाहो तो भले ही मेरा सि उतार लो।"

मुलतान ने कहा—"भोमसिंह ! जब तुमने मुँह मे घास लेकर गाय का वेश धार कर रखा है तो गोहत्या का पाप कभी मैं अपने सिर पर न लूँगा। मैं तुम्हे गुरु गोरखन के पास ले चलता हूँ। वही तुम्हारा न्याय होगा।"

गोरख के पास पहुँचते ही बनजारा उनके चरणो म गिर पडा और कहन लगा- "बाबा ! मुझसे बडी भूल हुई, जो मैंने आपके आदेशो का पालन नहीं किया। मेरी सब बडी भूल तो यह थी कि मैंने पर-स्त्री पर कुदृष्टि डाली। मारू ने भी कहा था कि जिस सिर पर काल छा जाता है, वही पर-स्त्री से छेडछाड किया करता है। मारू के कहने प मैंने ध्यान नही दिया और उसके डोले पर कोडे से प्रहार किया। बाबा ! मुझ जैसा अध इस ससार मे और कौन होगा ? हे गुरुदेव ! धड से मेरा शीश अलग करके इस पापी शरी का अन्त कर दीजिये।"

इतना कह कर बनजारा रोने लगा। गुरु गोरख न कहा—"धड से शीश अल करने की कोई आवश्यकता नहीं। ग्लानि-पूर्ण जीवन व्यतीत करता हुआ तू अपने पाप का फल भोग।"

बनजारे ने कहा—"गुरुदेव ! मेरी आखें अब खुल गई हैं। मारू को मैं अपनी धम की बहिन बनाता हूँ, ढोलसिंह को मैं अपना जीजा करके मानूँगा और क्षत्रिय सुलतान क मैं सदा अपना भाई समझूँगा। बाबा ! मुझसे बडी भूल हुई। आप मुझे क्षमा करें। मारू ने ढोलसिंह और मुलतान का नाम तो लिया था, किन्तु उस समय वासना से मदान्ध होन के कारण मैं अपने विवेक से हाथ धो बैठा था। जब दुर्गा का लाड़ला जानो आकर मेरी

तोपो को बेकार कर गया, तब भी मैं कुछ समझ न सका। गुरुदेव! अब मैं आपकी शरण हू। अब या तो आप मेरा सिर उतार कर मेरे पापी जीवन का अन्त कर दें अथवा मेरी मृत फौज को पुनर्जीवित कर मुझे भी जन्म भर अपने पापो का प्रायश्चित्त करने दें, मुझे सुधरने का अवसर दें।"

बनजारे के इन अनुताप भरे शब्दो को सुनकर गोरखनाथ का हृदय पसीज उठा। महात्मा कब किसी का बिगाड करते हैं। उनका हृदय तो करुणा का अथाह समुद्र होता है। मनुष्य म जो देवता सोया रहता है, उस ही जगाने के लिए वे धरती पर अवतार लिया करते हैं। गोरख की माया म अमृत का एक बदला बरसी और हर हर करती हुई बनजारे की मृत फौज पुनर्जीवित हो उठी।

बनजारे की फौज न गोरखनाथ की प्रदक्षिणा की। बनजारा तथा उसके सभी सरदार अत्यन्त प्रसन्न थे। भीमसिंह तथा बनी सुलतान ने परस्पर पगडी बदली और दोनो म भाई चारा हो गया। बनजारे न सुलतान स कहा—"गुरु गोरखनाथ की कृपा से मेरे पिछले सब पाप धुल चुके हैं और भविष्य के लिए मैंने गुरु के समक्ष प्रतिज्ञा की है कि मैं कभी भी पर-स्त्री को कुदृष्टि से नहीं देखूँगा। मारू को मैंने अपनी धर्म-बहिन बनाया है। वह जैसे तुम्हारी बहिन है वैसे ही मेरी भी। उसे बुलाओ, ताकि उसे मैं चुनडी ओढाऊँ। इसी प्रकार ढोलसिंह जी को भी म 'सिरोपाव' भेंट करना चाहता हूँ।"

गुरु गोरखनाथ जिस उद्देश्य से आये थ वह पूरा हो चुका था। इसलिए वे शीघ्र ही अपने शिष्यो को आशीर्वाद देकर अन्तर्धान हो गये।

अब सुलतान ने हलकारे के हाथ मारू के पास निम्नलिखित सन्देश भिजवाया —

'बहिन! बनजारे ने मुँह म घास लेकर मेरा आधिपत्य स्वीकार कर लिया है और भविष्य के लिए उसने गुरु गोरखनाथ के सामने प्रतिज्ञा की है कि मैं किसी भी पराई स्त्री पर कुदृष्टि नहीं डालूँगा। तुम्हे उसने अपनी धर्म की बहिन बनाया है। मेरा वह पगडी बदल भाई बन गया है। वह तुम्हे चुनडी ओढाना चाहता है। तुम बिना किसी हिचकिचाहट और आशका के उससे चुनडी ओढो। ढोलसिंह को भी वह 'सिरोपाव' भेंट करेगा।

बहिन! पहले तुम सूरत की बावडी म स्नान करो और फिर तुम चुनडी ओढने के लिए आओ।"

हलकारा परवाना लेकर मारू के पास पहुँचा। मारू उसे पढकर अत्यन्त प्रसन्न हुई और मन ही मन कहने लगी—'सुलतान जैसा भाई इस ससार म दूसरा नहीं। मेरे कारण इसने कितनी मुसीबत उठाई। बनजारे की असख्य सेना से मुठभेड लेकर अपने प्राणो को जोखिम म डाला। भाई हो तो ऐसा हो।'

मारू ने पूरी उमग और चाव के साथ बावडी म स्नान करने की तैयारी की।

कर रही है। तुम सच-सच बताओ, क्या वही प्रतिहारवंशी बली सुलतान तो तुम नहीं हो जिसके सम्बन्ध मे गोरख ने मुझे आगाह किया था ?"

सुलतान ने उत्तर दिया, "कीचलगढ के नरपति का मैं वालगोपाल हूँ, बवर्वे वंश का मैं पोता हूँ, जाति का प्रतिहार वंशीय क्षत्रिय हूँ। मैने सच्ची-सच्ची बात तुम्हे बतला दी है।"

बनजारा जानता था कि बली सुलतान को छोड कर वह अन्य योद्धाओ पर विजय प्राप्त कर सकता था। गोरख ने ही उसे सचेत कर दिया था कि सुलतान से कभी युद्ध न करना, अन्यथा तुम्हे प्राणो से हाथ धोना पडेगा। यही सोचकर बनजारे ने मुँह मे घास ले ली और क्षत्रिय के चरणो मे अपनी पगडी रख दी।

३८. बनजारे का आत्म-समर्पण

बनजारा कहने लगा—"सुलतान ! बडी भूल हुई कि मैंने गुरु गोरख के आदेश का भी पालन नही किया। अब मेरे प्राण हाजिर हैं, तुम चाहो तो भले ही मेरा सिर उतार लो।"

सुलतान ने कहा—"भोमसिंह ! जब तुमने मुँह मे घास लेकर गाय का वेश धारण कर रखा है तो गोहत्या का पाप कभी मैं अपने सिर पर न लूँगा। मैं तुम्हे गुरु गोरखनाथ के पास ले चलता हूँ। वही तुम्हारा न्याय होगा।"

गोरख के पास पहुँचते ही बनजारा उनके चरणो मे गिर पडा और कहने लगा—"बाबा ! मुझसे बडी भूल हुई, जो मैने आपके आदेशो का पालन नहीं किया। मेरी सबसे बडी भूल तो यह थी कि मैंने पर-स्त्री पर कुदृष्टि डाली। मारू ने भी कहा था कि जिसके सिर पर काल छा जाता है, वही पर-स्त्री से छेड़छाड किया करता है। मारू के कहने पर मैंने ध्यान नही दिया और उसके डोले पर कोडे से प्रहार किया। बाबा ! मुझ जैसा अधम इस संसार मे और कौन होगा ? हे गुरुदेव ! धड से मेरा शीश अलग करके इस पापी शरीर का अन्त कर दीजिये।"

इतना कह कर बनजारा रोने लगा। गुरु गोरख ने कहा—"धड मे शीश अलग करने की कोई आवश्यकता नहीं। ग्लानि-पूर्ण जीवन व्यतीत करता हुआ तू अपने पापो का फल भोग।"

बनजारे ने कहा—"गुरुदेव ! मेरी आखें अब खुल गई हैं। मारू को मैं अपनी धर्म की बहिन बनाता हूँ, ढोलसिंह को मैं अपना जीजा करके मानूँगा और क्षत्रिय सुलतान को मै सदा अपना भाई समझूँगा। बाबा ! मुझसे बडी भूल हुई। आप मुझे क्षमा करें। मारू ने ढोलसिंह और सुलतान का नाम तो लिया था, किन्तु उस समय वासना से मदान्ध होने के कारण मैं अपने विवेक से हाथ धो बैठा था। जब दुर्गा का लाडला जानो आकर मेरी

तोपों को बेकार कर गया, तब भी मैं कुछ समझ न सका। गुरुदेव! अब मैं आपकी शरण हूं। अब या तो आप मेरा सिर उतार कर मेरे पापी जीवन का अन्त कर दें अथवा मेरी मृत फौज को पुनर्जीवित कर मुझे भी जन्म भर अपने पापों का प्रायश्चित करने दें, मुझे सुधरने का अवसर दें।"

बनजारे के इन अनुताप-भरे शब्दों को सुनकर गोरखनाथ का हृदय पसीज उठा। महात्मा कब किसी का बिगाड़ करते हैं। उनका हृदय तो करुणा का अथाह समुद्र होता है। मनुष्य में जो देवता सोया रहता है, उसे ही जगाने के लिए वे धरती पर अवतार लिया करते हैं। गोरख की माया से अमृत की एक बदली बरसी और हर हर' करती हुई बनजारे की मृत-फौज पुनर्जीवित हो उठी।

बनजारे की फौज ने गोरखनाथ की प्रदक्षिणा की। बनजारा तथा उसके सभी सरदार अत्यन्त प्रसन्न थे। भीमसिंह तथा बली सुलतान ने परस्पर पगड़ी बदली और दोनों में भाई-चारा हो गया। बनजारे ने सुलतान से कहा—"गुरु गोरखनाथ की कृपा से मेरे पिछले सब पाप धुल चुके हैं और भविष्य के लिए मैंने गुरु के समक्ष प्रतिज्ञा की है कि मैं कभी भी पर-स्त्री को कुदृष्टि से नहीं देखूंगा। मारू को मैंने अपनी धर्म-बहिन बनाया है। वह जैसे तुम्हारी बहिन है वैसे ही मेरी भी। उसे बुलाओ, ताकि उसे मैं चुनड़ी ओढ़ाऊँ। इसी प्रकार ढोलसिंह को भी मैं 'सिरोपाव' भेंट करना चाहता हूं।"

गुरु गोरखनाथ जिस उद्देश्य से आये थे, वह पूरा हो चुका था। इसलिए वे शीघ्र ही अपने शिष्यों को आशीर्वाद देकर अन्तर्धान हो गये।

अब सुलतान ने हलकारे के हाथ मारू के पास निम्नलिखित सन्देश भिजवाया :—

"बहिन! बनजारे ने मुंह में घास लेकर मेरा आधिपत्य स्वीकार कर लिया है और भविष्य के लिए उसने गुरु गोरखनाथ के सामने प्रतिज्ञा की है कि मैं किसी भी पराई-स्त्री पर कुदृष्टि नहीं डालूंगा। तुम्हें उसने अपनी धर्म की बहिन बनाया है। मेरा वह पगड़ी-बदल भाई बन गया है। वह तुम्हें चुनड़ी ओढ़ाना चाहता है। तुम बिना किसी हिचकिचाहट और आशंका के उससे चुनड़ी ओढ़ो। ढोलसिंह को भी वह 'सिरोपाव' भेंट करेगा।

बहिन! पहले तुम सूरत की बावड़ी में स्नान करो और फिर तुम चुनड़ी ओढ़ने के लिए आओ।"

हलकारा परवाना लेकर मारू के पास पहुँचा। मारू उसे पढ़कर अत्यन्त प्रसन्न हुई और मन ही मन कहने लगी—'सुलतान जैसा भाई इस संसार में दूसरा नहीं। मेरे कारण इसने कितनी मुसीबत उठाई। बनजारे की असंख्य सेना से मुठभेड़ लेकर अपने प्राणों को जोखम में डाला। भाई हो तो ऐसा हो।"

मारू ने पूरी उमंग और चाव के साथ बावड़ी में स्नान करने की तैयारी की।

उधर सुलतान ने ढोलसिंह को खबर दी कि बनजारा परास्त हो गया, उसने मुंह मे घास ले ली, मारू को धर्म की बहिन और आपको अपना जीजा बना लिया। आज वह आपको 'सिरोपाव' भेंट करेगा। कहाँ तो वह आपसे भेंट लेने के लिए आया था और कहाँ अब भेंट देकर जायगा। अब आप सज धज कर घोडे पर सवार हो इधर पधारें।

शीघ्र ही हलकारा ढोलसिंह के पास पहुँचा। परवाना पढ कर ढोलसिंह हर्ष से फूले न समाये। उन्होंने अपने सब सरदारो को तयार होने का हुक्म दिया। महावत को आदेश मिला कि वह सबसे अच्छे हाथी को पूरी तरह सजाये। उधर मारू ने भी कहला भेजा कि वह भी महाराज ढोलसिंह के साथ चलेगी। ढोलसिंह महाराज हाथी पर सवार हुए, सरदारो ने अपने अपने घोडे सम्भाल और मारू सुसज्जित होकर डोले म विराजी।

गाजे बाजे के साथ जब यह जुलूस रवाना हुआ तो छतीसो जाति के लोग जुलूस के साथ हो लिये। जुलूस जब चलता-चलता सूरत की बावडी के निकट पहुँचा तो ढोलसिंह महाराज हाथी से उतरे। वहा पहले से ही जाजिम बिछी हुई थी। बनजारे ने ढोलसिंह के लिए बहुमूल्य गलीचे और मसनद का प्रबन्ध कर रखा था। ढोलसिंह को बडे आदर के साथ गलीचे पर बिठलाया गया। भोमसिंह ने चरणो मे शीश नवाया और ढोलसिंह महाराज को हीरे-पन्नो की भेंट अर्पित की।

बनजारी ने भी बावडी म स्नान किया। बनजारी और मारू भी आपस मे प्रेम से मिली। भोमसिंह ने मारू को चुनडी ओढाई। सवा लाख को खैरात भिक्षुओ मे बाँटी गई। गाना बजाना होन लगा। कुछ समय बाद तम्बुओ मे थाल सज-सज कर आने लगे। सब सरदारो न साथ बैठ कर बडे प्रेम से भोजन किया। इसी प्रकार जनाने तम्बुओ मे :^ सब आयोजन विधिवत् सम्पन्न हुए।

अन्त मे हाथ जोडकर भोमसिंह ने बली सुलतान से कहा—"जो अपराध मुझ हो गया है, उसे आप क्षमा कर दें। भविष्य में आपका आदेश मेरे लिए शिरोधार्य होगा।

यह सुनकर सुलतान ने कहा—भोमसिंह! गुरु गोरख की कृपा से तुम्हारे हृदय सद्बुद्धि जगी है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि भविष्य म दप के वशीभूत होकर तुम किस राजा का अनिष्ट नही करोगे। पर-स्त्री के सम्बन्ध म भी अगर तुम्हारी धारणा मात के तुल्य रही तो निश्चय ही तुम्हारा कल्याण होगा।"

भोमसिंह अपने टाडे को लेकर आगे बढा। उधर सुलतान को १२ हजार फौज नरवलगढ की ओर प्रयाण करने के लिये तैयार हुई। ढोलसिंह महाराज हाथी के हौदे मे विराज। सुलतान घोडे पर पर सवार हुआ। मारू डोले म बैठी।

यह जुलूस चलकर नरवलकोट पहुँचा। मारू अपने महलो मे गई। ढोलसिंह कचहरी जा विराजे। सुलतान समदबुर्ज पहुँचा। जाभी तथा गोदू आदि भी सुलतान के साथ थे।

शहर मे सर्वत्र हर्ष और उल्लास की एक लहर दौड़ गई। सभी नर-नारी सुलतान की प्रशंसा करते नहीं अघाते थे। सभी के मुँह से यह बात सुनाई पड़ती थी कि दानव को मार कर तथा बनजारे को परास्त कर सुलतान ने दो बड़े साके किये है। इतना ही नहीं, वीरता के साथ-साथ सुलतान के व्यक्तित्व मे 'सत्' का सुन्दर *समन्वय* है। जैसा इन्साफ सुलतान करता है, वैसा इन्साफ करने वाला नरवलगढ़ मे पहले कोई नहीं आया था। उसका सारा समय प्रजा के हित चिन्तन मे व्यतीत होता है। प्रजा भी सुलतान के सुशासन के कारण चैन की वंशी बजाती है। पर-स्त्री को सुलतान माता के समान समझता है और पराये धन को धूल के समान।

सुलतान को नरवलगढ मे रहते ५½ वर्ष बीत गये। रानी निहालदे को वह ईडरगढ छोड़ कर आया था और श्रावणी तीज को लौटने का उसने कौल करार किया था। रानी को बाट देखते छठा वर्ष व्यतीत हो रहा था। सुलतान की प्रतीक्षा करते-करते रानी का मन धैर्य खो बैठा था। कमधजराव ने निहालदे को दुःखी देख कर ईडरगढ मे तीज का त्यौहार मनाना ही बन्द करवा दिया। फूलकुँवर को तीज के त्यौहार का बन्द करवा दिया जाना अच्छा नहीं लगा। फूलसिंह ने जब अपने पिता से तीज न मनाने का कारण पूछा तो कमधजराव ने उत्तर दिया—"सुलतान को मैंने धर्म का पुत्र मान रखा है। वह तीज पर लौटने का कौल-करार करके गया था, किन्तु आज तक नहीं लौटा। उसकी रानी भी वियोग मे अत्यन्त दुःखी है। ऐसी स्थिति मे तीज के त्यौहार का मनाना मुझे अच्छा नहीं लगता। अब तो जब सुलतान आयेगा, तभी सौ गुने उत्साह से ईडरगढ मे तीज का त्यौहार मनाया जायगा।"

इतना सुनना था कि फूलसिंह के हृदय मे ईर्ष्या की ज्वाला भभक उठी। अपने पिता को बिना सूचित किये, उसने सब राजाओ को इस आशय के परवाने भेज दिये कि पिछले ५ वर्षों तक तो तीज का मेला बन्द रहा, इस बार बड़े ठाट-बाट और शान-शौकत से तीज का मेला भरेगा और सवारी निकलेगी।

उधर रानी निहालदे ने चार चारणो को बुला कर कहा—"तुम नरवलगढ जाकर मारू के पास मेरा दिया हुआ संदेश पहुँचादो, मैं जन्म भर तुम्हारा गुण नहीं भूलूँगी। किन्तु यह ध्यान रखना कि मारू को छोड कर मेरा परवाना अन्य किसी व्यक्ति के हाथ मे न पड़े।"

३९. चारणो का प्रयाण

चारों चारणो ने रानी का यह कार्य अङ्गीकार कर लिया। उनके लिए चार घोडे मँगवाये और मार्ग-व्यय आदि की सुविधाएँ करदी गईं।

चारों चारण मंजिलें पार करते हुए कुछ दिनो मे नरवलगढ जा पहुँचे। जिस दिन नरवलगढ़ पहुँचे, उस दिन वर्षा का जोर था। श्रावण का महीना लग चुका था। मारू के

महल को ढूँढते-ढूँढते उनको सूर्यास्त हो गया। इन्द्र राजा ने झडी लगा रखी थी। सयोग से महल तलाश करते-करते मारू के महल के छज्जे का ओट म खड़े हो गये और आपस मे बात करने लगे कि रात तो किसी प्रकार यहीं काटनी चाहिए, सूर्योदय होने पर मारू के महल का पता लगायेंगे।

उधर मारू अपनी दासी रतनकुँवर से कहने लगी—"अरी। मन भावन सावन की आज अजब बहार है। शयन कक्ष को भली भांति सजा। शैया पर भांति भांति के इत्र छिड़क, झाड फानूस से कमरे को जगमगादे सुगन्धित पुष्पो की माला गूँथ दे। मोतीमहल की प्रणालिका प्रवाहित होने दे, बगीचे का फव्वारा चलने दे। मेरे हर्ष हुलास की आज कोई सीमा नही। मेरे मन की उमग आज उछली पडती है। मेरे शहर म आज कोई दुखिया न रहे, कोई दारिद्र्य से पीडित न हो।"

दासी ने मारू की इच्छानुसार शयन-कक्ष को सजाया।

उधर मोती महल के ऊपर का नाला जब बूदने लगा तो छज्जे के नीचे खडे चारण भीगने लगे। यह देखकर वे आपस म कहने लगे—' छज्जे के नीचे विश्राम कर रहे थ, अब यह आश्रय भी जाता रहा।"

चारणो की बातें सुनकर दासी मारू के पास जाकर कहने लगी—'रानी साहिबा। आपने अभी कहा था कि मेरे शहर म कोई दुखिया न रहे। इसी छज्जे के नीचे चार मुसाफिर दु खी है, वर्षा से उनके दांत कटाकट बज रहे है, उनके कपडे भीग रहे है, उनकी पचरग पाग भीग रही हैं, उनके घोडे भीग रहे हैं, तग च रहे है। वे बीजलसार' को दांतो से चबा रहे हैं। क्या इन मुसाफिरो और घोडो का दु ख दूर नही किया जा सकता ?"

मारू न यह सुन कर दासी से कहा—"इन मुसाफिरो के लिए अभी सूखे कपडो का प्रबन्ध कर, घोडो के लिए सूखे दाने घास की व्यवस्था कर, पथिको के लिए महल खोलकर उनके भोजन शयन आदि का बन्दोबस्त करवा दे।"

दासी महल म चलकर छज्जे के नीचे ठहरे हुए चारणा के पास पहुँची और पूछने लगी—"आप लोग कहां के रहने वाले है और कहां जा रहे है? नरवलगढ आप किस प्रयोजन को लेकर आये है ?'

चारणो न उत्तर दिया—' हम ईडरगढ से चल कर नरवलगढ आये है। मारू के महल को ढूँढते-ढूँढते सायकाल हो गया। इधर जब वर्षा की झडी शुरू हो गई तो हमने इस छज्जे के नीचे आश्रय लिया।"

दासी ने कहा—"जिस महल को तुम तलाश कर रहे हो वह महल तो यही है। तुम मेरे पीछे-पीछे आ जाओ। तुम्हारे तथा तुम्हारे घोडा के लिए सब प्रकार की व्यवस्था मैं अभी करवा दूँगी।"

चारणो ने उत्तर दिया—"हमे प्यास लगी है, पहले हम पानी पीकर दूसरा काम रेंगे। वर्षा का पानी हम पीते नही, कुएँ के जल से ही हमारी प्यास बुझेगी।"

दासी यह सुन कर मारू के पास आई और उसे सब समाचार कह सुनाया। मारू ो आज्ञा पाकर दासी ने झारी को रस्सी से बांधा और नीचे झारी लटकादी। चारणों ने ारी का पानी तो नीचे डाल दिया और निहालदे का दिया हुआ परवाना झारी के अन्दर गा दिया।

इतना कर चुकने पर चारो चारणो ने अपने अपने घोड़ा को एड़ लगाई और आगे ानते बने।

उधर दासी ने झारी को ऊपर खीच लिया। दासी ने देखा कि झारी के अन्दर रवाना लगा हुआ है। उसने तत्काल झारी से परवाना निकाल कर मारू की सेवा मे ेश कर दिया। मारू ने दासी से कहा कि जो मुसाफिर इन परवानो को लाये है उनका ता लगाओ। किन्तु दासी ज्योही बाहर पहुँची, उससे पहले ही चारो चारण घोड़ो पर सवार होकर निकल चुके थे।

४०. निहालदे के परवाने

मारू ने एक परवाना पढना प्रारम्भ किया, जिसमे यथोचित अभिवादन के अनन्तर लिखा था —

"साढ कै महीनैं मेरी सोकण।
बादल घटा वी छाई असमान।
सावण महीनें वी दादर मोर।
मरे भादवें मेरी सोकण कोकिला।
आसोजा में वी समदर सीप।
काती में कृत्तिका मगसर में मिरगली।
तो पोह कै महीनै भी जम्बू यो सयाल्।
माह में मंजारी फागण में गज तुरी।
चैत महीनैं भी सब बणराय।
बैसाखा में कोयल, काग।
जेठ कै महीनैं चन्दर सोकण हे जाणिये।
आपणी आपणी भी रुत ले ली सब जणा।
हे सोकण त्रिया हे कहिये छ भी रुत, बारै मास।
अब भी परवाणा मेरी सोकण बाँच कै।
विदा कर देना भी मेरो भरतार।"

अर्थात् आषाढ के महीने मे बादलो की घटा नभ मे छा गई है, श्रावण मे दादुर, मोर, भाद्र मे कोकिला, आश्विन मे समुद्र की सीपी, कार्तिक मे कृत्तिका, मार्गशीर्ष मे

मृगशिरा (कार्तिक मे श्वुनी, मार्गशीर्ष मे मृगी), पौष मे सियार, माघ मे मार्जारी, फाल्गु गज और तुरी, चैत्र मे सब वनस्पतियाँ, बैशाख मे कोकिल और काग तथा ज्येष्ठ के म मे बन्दर विशेष हर्षोन्मत्त रहते हैं। ऐसा लगा लगता है जैसे उक्त जीवो ने वर्ष के महीनो को आपस मे बाँट लिया है। किन्तु मैं विरहिणी तो छः ऋतुओं और बारह मा मे कभी चैन नहीं पाती। हे मेरी सौत ! परवाने पढ कर भी क्या तू मेरे बिछुडे प्रियतम विदा नही कर देगी ?

मारू ने दूसरा परवाना पढा जिसमे लिखा हुआ था :—

"श्रावण मास विरहिणियो के लिए कितना दु खदायी है। यह मास तो उस लिए सुखद है जिसके घर मे गोरस, गेहू, गौरी, हल, चतुर हाली, बोने के लिए बीज सफेद बैलो की पुष्ट जोडी हो। जहाँ गौरी छाक लेकर जाती हो, जहाँ दिन भर परि करके रात को सुख की निद्रा सुलभ हो, वह जीवन वास्तव मे धन्य है, स्पृहणीय है। प दुखियारी पहाड-सी रात कैसे बिताऊँ ? पिया बिनु साँपिनी कारी रात। मेरे प्रिय घर पर नही हैं, इसलिए लगता है, मानो सारा घर मुझे काटने के लिए दौड रहा है।"

इसके बाद मारू ने तीसरा परवाना उठाया जिसमे लिखा था :—

"बाग लगा कै हे बागां का माली उठ गया।
कोन्या हे कहिए वी सींचनहार।
पक पक कै निमवा हे मेरी सोकण रस भरया।
सुग्गो गैरी वी सुधारी चाच।
हे दाडू दाख वी तो ईं रुत सोकण आ रही।
तो जाणैं कोन्या यो कहिए वी चूसणहार।
यो वी परवाण हे मारू अब तू बाच के।
विदा हे करदे नां वी घर मेरो भरतार।
अब घर आज्या विरहिण कै अगनी लग रही जी।"

अर्थात् बाग लगा कर बागो का माली चला गया, पीछे से उसे कोई सींचने वा न रहा। नीबू पक-पक कर रस से भर गये, शुक ने भी अपनी चोंच सुधार ली है, दाडि दाख भी इस ऋतु मे खूब फले हैं, किन्तु दुर्भाग्य यही है कि आज रस का भोक्ता नहीं है तू भी नारी है, नारी की व्यथा को समझती होगी। मेरे प्रिय को तुमने अपने यहाँ बिला रखा है। क्या उसे विदा नहीं कर देगी ?

जायसी की विरहिणी नायिका ने भी इसी प्रकार के उद्गार प्रकट किये थे—

"कँवल जो बिगसा मान सर, बिनु जल गयउ सुखाइ।
अबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जौ पिय सीचहु आइ।"

अर्थात् जो कमल मानसरोवर मे खिला था, वह बिना जल के सूख गया। हे प्रिय ! यदि तुम आकर सींचोगे तो अब भी उसकी बेल मे फिर नये पल्लव निकलेंगे।

मारू ने चौथा परवाना उठाया जिसमे लिखा हुआ था—"हे मारू ! औरों के नगर मे सुल्टी रीति होती है किन्तु तुम्हारे नगर मे उल्टी रीति दिखलाई पड़ती है। मर्द दो-दो स्त्रिया रखते हैं, यह तो अन्य नगरो मे भी देखा-सुना गया है किन्तु तुम तो स्त्री होकर दो-दो भरतार रखती हो। किसे पीठ देकर शयन करती हो और किससे आलिंगन करती हो, तुम्हीं जानो। मालूम होता है, मेरे प्रिय को तुमने अपना प्रिय बना लिया है। तीज का कौल करके मेरा पति विदा हुआ था किन्तु आज छठा श्रावण बीता जा रहा है। किन्तु प्रिय अभी तक नहीं लौटा।"

मारू ने पाचवा परवाना उठाया और पढने लगी —

> *"रावण सरीखा ई जुग में तो मगता मरो।*
> *मगतो यो बण कै बी हड लई सीता नार।*
> *हे होलिका सरीखी ई जुग में तो भूआ मरो।*
> *ले कै भतीजा नै बी जलन गई थी आग।*
> *हिरणा बी कुश-सा जगत् में बावल मरो।*
> *आपका पुत्तर नैं बी ताता खभा कै दियो बाध।*
> *बाली सरीखा हे जुग में भाई मरो।*
> *छोटा भाई की बी इस्त्री लई थी घर में घाल।*
> *तेरी सरीखी या जुग में नणदल मरो।*
> *तो जाणं दुनिया कै भानें बी लियो भाई तैं बणाय।"*

अर्थात् इस ससार म रावण जैसा भिक्षुक मर जाय जिसने भिक्षुक का वेश बना र सीता का हरण किया था, होलिका-जैसा भुआ की, जो अपने भतीजे को गोद मे कर आग म जलन के लिए बैठी थी, मृत्यु हो। मर जाय वह पिता हिरण्यकशिपु जिसने पने पुत्र को ताते खभे से बँधवा दिया था और मर जाय वह बाली जिसने अपने भाई की त्री को अपनी पत्नी बना लिया था और मर जाय तेरो जैसी ननद जिसने मेरे पति को दुनिया की दृष्टि म भाई बना रखा है। यदि तेरे मन मे कुछ फर्क न होता तो तू मेरे पति को इतने वर्षों तक न बिलमाय रखती।

मारू न उत्सुकतावश छठा परवाना उठाया और पढन लगी—"बली सुलतान, जो तुम्हारे यहा रहता है, कोचलगढ का गढपति है, मैनपाल का पुत्र तथा चक्रवेण का पोता है, जाति का प्रतिहार वशीय क्षत्रिय है। उसके पिता ने उस देशनिकाला दे रखा है। विपत्ति म वह ईडरकोट पहुँचा और कमधजराव का वह धर्म का पुत्र बना। मै मघपतराव की दुहिता निहालदे हूँ। सुलतान की मैं परिणीता वधू हूँ। विवाह के बाद सुलतान ने मुझे ईडरकोट म छोड दिया। वह तीजो पर लौटने का कौल-करार करके यहाँ से गया था किन्तु आज छठा श्रावण व्यतीत हो रहा है। तूने मेरे पति को अभी तक मेरे पास नहीं भेजा। ईडरकोट, जहा मैं वियोग के दिन बिता रही हूँ न तो मेरा पीहर है न ससुराल।

बिराने लोगों के बीच में रह रही हूँ। इतने वर्ष बीत जाने पर भी मेरे प्रिय ने लौट कर मुझ से मेरे दिल की बात नही पूछी। विवाह के बाद रातीजगा न करवा सकी, देवे देवताओं का भी पूजन नहीं हो पाया, हाथो की मेहदी भी नही सूखी कि प्रिय मुझे छोड़ कर चला गया। झाड़ कर कभी मैंने प्रिय के लिए सेज भी नही बिछायी। मेरी जैसी दुखियारी इस ससार मे और कौन होगी? मुझे पूरा विश्वास है, मेरा परवाना पढ कर तुम मेरे प्रिय को अवश्य लौटा दोगी। नारी के हृदय मे जो विरह की ज्वाला जलती है उसे नारी हृदय ही भली भाति समझ सकता है। सभी चूल्हों मे इकसार आग जलती है। मैं तुमसे हाथ जोड, अचल पसार अनुनय विनय करती हूँ कि तू अब और अधिक मेरे पति को बिलमा कर अपने पास न रख।"

४१ सुलतान की बिदाई

मारू ने परवाने पढ कर दासी से कहा—"ये परवाने तो मेरे भाई सुलतान को लक्ष्य मे रख कर लिखे गये हैं। उसने तो मुझे कभी नही कहा कि वह निहालदे जैसी पत्नी को ईडरगढ छोड कर यहा रहा है। मैं अब एक क्षण का भी विलब नही सह सकती। मै सुलतान को ईडरगढ भेज देना चाहती हूँ। तू अभी जा और इसी घडी सुलतान को बुला कर ला।"

दासी ने कहा—रानी साहिबा! इस समय आधी रात बीत रही है, सुलतान सो रहा होगा, अभी उसे जगा कर बुलाना कहा तक उचित होगा? कल सुबह दिन उगने पर मैं सुलतान को, जल्दी से जल्दी आपके सामने हाजिर कर दूँगी।"

यह सुन कर मारू ने कहा—मरजाणी! तूने दिन उगने की बात भली बताई, यहा पल पल का बीतना मुश्किल हो रहा है। तू अभी—इसी क्षण, सुलतान को बुला कर ला।

दासी ने उत्तर दिया—"यदि मेरे सात गुनाह माफ हो तो मैं किसी चतुराई से सुलतान को अभी हाजिर कर सकती हूँ।" रानी ने कहा—तेरे सात गुनाह मैंने माफ किये, तू अवश्य अपनी चतुराई से सुलतान को अभी हाजिर कर। आज पडवा है, कल द्वितीया है और परसो है तीज। यदि तीज पर सुलतान न पहुँचा और मघपतराव की लाडली निहालदे यदि जल कर भस्म होगई तो सारा पाप मेरे सिर चढेगा।

हलकारे को साथ लेकर दासी अविलम्ब समदबुर्ज की ओर रवाना हो गई। जब वह समदबुर्ज पहुँची, सुलतान अपने अभिन्न मित्रो (पनि पठान, जानी चोर और गोदू जाट) के साथ चौपड खेल रहा था। दासी ने पहुँचते ही कहा—'आज आपने मारू के महल मे चोरी करवादी, उसके गले का हार चोरी हो गया, ढोलकुँवर के भी बहुत से जवाहरात चुरा लिये गये। गनीमत यही कि चारो चोर पकड लिये गये हैं, किन्तु वे चारो कह रहे हैं कि सुलतान के कहने से हमने चोरी की है। आपकी बहिन मारू अभी आपको बुला रही है।"

सुलतान ने जब यह सुना तो वह हक्का-बक्का-सा हो गया, अपने पैरों तले की जमीन उसे खिसकती हुई जान पड़ी, चौपड़ की गोटियाँ ज्यों की त्यों जमीन पर पड़ी रह गयी और सुलतान अपने मित्रों को साथ लेकर उसी क्षण दासी के साथ हो लिया। सुलतान तथा उसके तीनों मित्र शीघ्र ही चलकर मारू के महल के पास आ गये। सुलतान के तीनों मित्र महल के दरवाजे पर बैठ गये और सुलतान अकेला टग टग महल की सीढ़ियों पर चढ गया। मारू ने पीलसोत जलवा रखी थी। सुलतान के पहुँचने पर रानी ने उसे बैठने के लिये यथोचित आसन दिया। सुलतान के मुख पर हवाइयां उड़ रही थी, चेहरा अत्यन्त उदास था, चेहरे का सब पानी जाता रहा था। जिसकी आकृति से भाव टपकती थी, आज वही मारू के सामने हत-प्रभ-सा बैठा हुआ था।

बैठने के कुछ क्षण बाद सुलतान ने कहा—"हमारी वंश-परम्परा में कभी किसी ने चोरी नहीं की, आज मुझ पर यह चोरी का आरोप कैसा? यदि किसी कारणवश मैं तुम्हारे चित्त से उतर गया हूँ तो तू मुझे नौकरी से जवाब दे दे। मुझे नौकरी की कमी नहीं और तुम्हारी जैसी गुणग्राहिका के लिए और गुणियों का अभाव नहीं। और सच तो यह है कि देने वाला तो सहस्र-भुजाओं का धनी वह दीनदयाल है जो चींटी के लिये कण भर और हाथी के लिये मन भर जुटाता है। यदि मुझे नौकरी से हटाना ही चाहती हो तो प्रसन्नतापूर्वक मुझे विदा क्यों नहीं कर देती? मुझ पर झूठा आरोप लगाकर कलंकित करके निकालना तुम्हें कहां तक शोभा देगा?"

सुलतान के इन वचनों को सुनकर मारू जोर-जोर से हँसी और कहने लगी, "भाई! तुम्हीं सच-सच बताओ, क्या तुमने मुझसे चोरी नहीं की? क्या तुमने मुझसे छिपा कर बात नहीं रखी? जब से तुम नरवलकोट में आये, तब से आज तक तुमने अपने गांव का नाम नहीं बतलाया। दफ्तर में भी तुमने केवल यही लिखवाया कि अम्बर ने मुझे नीचे डाल दिया और धरती माता ने मुझे झेल लिया। आज तुम्हारे मां-बाप कहाँ से आ गये और कहां से आ गया तुम्हारा गाँव? लो, यह परवाना तुम्हें पढ़कर मैं सुना रही हूँ। इसके अनुसार कीचलगढ़ तुम्हारा गाँव है, प्रतिहार वंश में तुम उत्पन्न हुए हो, चकवे बैण के तुम बेटे हो, तुम्हारे पिता ने तुम्हें देश निकाला दे रखा है, ईडरगढ़ में तुम आकर रहे, केलागढ की पँवारवंशीया निहालदे से तुमने विवाह किया है, विवाह करने के बाद तुम उसे ईडरगढ में छोड़ आये हो, तुम्हारे वियोग में वह जलने के लिये तैयार बैठी है। हे भाई! इतनी बातें तुमने मुझसे छिपा रखी। अब तुम्हीं बताओ, यह चोरी नहीं तो और क्या थी? मेरे यहाँ कितने लोग चाकरी करते हैं किन्तु एक साथ छः महीने से अधिक मैं किसी को नहीं रखती। तुमने छ महीने तो दूर, छः वर्ष यहाँ बिता दिये। तुम्हीं सोचो, तुम्हारे वियोग में उस विरहिणी दुखिया नारी की क्या हालत हुई होगी?"

यह सुनकर सुलतान ने उत्तर दिया, "बहिन! यदि ये सब बातें मैं तुम्हें पहले ही बता देता—तो अपने विपत्ति के दिनों को मैं यहाँ न काट पाता। अब तुम मुझे इजाजत दो

जिससे में तीज पर ईडरगढ पहुँच सकूँ। यदि मघपतराव की लाडली वह निहालदे जल कर भस्म हो गई तो अनर्थ हो जायगा।"

सुलतान जैसे भाई की विदाई का विचार कर मारू का जी भर आया। उधर निहालदे के परवानों को पढकर वह यह भी चाहती थी कि सुलतान यथाशीघ्र निहालदे के पास पहुँच कर विरहिणी की वेदना को दूर करे। मारू को विवश होकर सुलतान की विदाई देनी पडी।

सारे शहर मे घोषणा करवा दी गई कि सुलतान अपने देश जा रहा है। सुलतान के सभी यार दोस्त उससे मिलने के लिये आये। मारू ने कहा—भाई! तुम कहो तो तुम्हारे लिये उडन-खटोला मँगवा दूँ, तुम कहो तो दरियाई घोडा मँगवा दूँ। सुलतान के कहने पर मारू ने हलकारा भेजकर एक अच्छा सा दरियाई घोडा मँगवा दिया।

सुलतान जब रवाना होने लगा तो उसके पास एक छदाम भी नही थी। यह देख कर मारू को बडा आश्चर्य हुआ और उसने पूछा, "भाई। प्रतिदिन एक लाख टके तुम्हे वेतन के मिलते थे, उनका आखिर क्या हुआ? क्या रतना ने तुम्हारा धन खाया अथवा पनि पठान ने तुम्हारे धन के बल पर ऐश किया? क्या कलाल तुम्हारा धन खा गया? क्या अपने यहाँ तुमने नर्तकियाँ नचवाई?"

सुलतान ने उत्तर दिया, "बहिन। जिस दिन मैं नरवलगढ आया था, उस समय सारे शहर म केवल एक कुआ था। आज गली-गली मे कुएँ दिखलाई पड रहे है। एक सूरत की बावडी मैन बनवाई जिसमे नौ लाख रुपये लगे। इसी प्रकार नरवलगढ म अनेक बाग मैने लगवाये। तुम लाख टके रोज की बात करती हो, सवा लाख की तो प्रति दिन मेरे हाथ से खैरात बँटती थी। मित्रो ने मेरा धन नही उडाया। मेरा सारा धन तो लोकोपकारी कार्यों म लगा है।"

यह सुन कर मारू फिर कहने लगी, "भाई। तुम्हे जब लाख टके रोज मिलते थे, तो सवा लाख की खैरात तुम कहाँ से बाँटते थे? लाख के ऊपर की रकम तुम कहाँ से लाते थे? क्या शेष रकम तुम रिश्वत से पूरी करते थे?"

सुलतान ने कहा, "बहिन। हमारी वंश परम्परा मे रिश्वत का तो कभी नामो-निशान ही नही रहा। रिश्वत लेकर मैं कभी अपने कुल को कलंकित नहीं कर सकता था। सच बात तो यह है कि शेष रकम रतना सेठ पूरी किया करता था। इतना ही नही, कुओं तथा बावडियों के निर्माण मे भी जो रुपया खर्च हुआ है, वह सब रतना सेठ के यहाँ से प्राप्त हुआ है।"

यह सुनकर मारू ने कहा कि यदि यही बात है तो रतना सेठ को अभी यहीं बुलवाये लेती हूँ जिससे वह सारा हिसाब-किताब मुझे दिखलादे। हलकारा भेजकर रतना सेठ को बुलवाया गया। रतना १५–२० साहूकारो तथा अपनी पुरानी बहियों को लेकर

मारू के महल की ओर रवाना हुआ। रतना की बहिन मेदा भी पालकी में बैठकर साथ चली।

४२. रतना और सुलतान का हिसाब किताब

रतना और मेदा तथा साथ के साहूकार चलकर मारू के महल में पहुँचे। सुलतान भी वहीं बैठा हुआ था। मारू ने रतना से कहा कि सुलतान से जो तुम्हें लेना है उसका हिसाब मुझे दो ताकि पाई-पाई तुम्हें चुका दी जाय। इस पर रतना ने सब साहूकारों को बहियों के खोलने का हुक्म दिया। इतने में मेदा बोल उठी, "भाई! क्या तुम्हें वह दिन याद नहीं जब इस सुलतान ने तुम्हारे बदले दानव के यहां जाकर तुम्हारी जान बचाई थी? तुम्हारे पास धन-सम्पत्ति की कोई कमी नहीं, ५२ ध्वजाएँ आज तुम्हारे महल पर फहरा रही हैं। यदि तुम अपना सिर उतार कर भी दे दो तो भी सुलतान के उपकारों का बदला तुम नहीं चुका सकोगे। मेरा कहना मानो तो फाड़ दो इन बहियों को और सुलतान के साथ हिसाब किताब रहने दो। यदि तुमने ऐसा न किया तो कटारी खाकर मैं अभी अपने प्राण त्याग दूँगी।" इतना कहकर मेदा ने कटारी अपने हाथ में ली। यह देखकर सुलतान ने कहा, "बहिन! यदि तुमने ऐसा किया तो मेरा क्षत्रियत्व कलंकित होगा। गोरखनाथ मेरे गुरु हैं। यदि उनको पता चला तो वे भी क्या कहेंगे? रतना अपने आप यहाँ हिसाब करने नहीं आया है। रतना का इसमें कोई दोष नहीं है, वह तो मेरे बुलाने पर ही यहाँ आया है।"

सुलतान के इन शब्दों को सुनकर रतना कहने लगा, "बहिन! तुम्हारे लिए कटारी खाकर मरने की नौबत नहीं आयेगी। मैं सुलतान से एक भी पाई लेने वाला नहीं। तुम्हारा यह कहना सही है कि यदि मैं सुलतान के लिए अपना सिर भी दे दूँ तो भी उसके उपकारों का बदला मैं नहीं चुका सकता। पगड़ी बदलकर मैं सुलतान का धर्म भाई बन गया हूँ। मेरे पास १७ ध्वजाओं की जो धन-सम्पत्ति थी, वह मैंने सुलतान की सेवा में यथेच्छ व्यय के लिए प्रस्तुत करदी थी। सुलतान का यहाँ ऐसा 'पगफेरा' (पद संचार) हुआ कि मेरे पास आज ५२ ध्वजाओं का माल है। रही बहियां के रखने की बात, उसे बहिन! बुरा नहीं मानना चाहिए। हम लोग हिसाब तो पाई-पाई का रखते हैं। सुलतान जब आज विदा हो रहा है तो उससे मिलकर उसके दिल की बात पूछना मेरा कर्तव्य था। अब भी सुलतान यदि हुक्म दे तो मैं उसके लिए हीरे-पन्नों के हौदे भरवा सकता हूँ।" इतना कहकर रतना ने हलकारे को हुक्म दिया कि वह बहिया को जलवादे। रतनादे दासी भी हलकारे के साथ हो गई। नीचे ले जाकर उन सब बहिया को जला दिया गया जिसमें सुलतान के कहने पर किये गये व्यय का लेखा-जोखा दर्ज था। यह देखकर मारू और सुलतान दोनों को अत्यन्त हर्ष हुआ।

अब सुलतान ने हाथ जोड़ कर कहा, "बहिन! मुझे शीघ्र विदा की आज्ञा दो, अधिक देर होने के कारण यदि वहाँ निहालदे जल गई तो समस्त पाप का भागी मैं बनूँगा।"

मारू ने कहा, "भाई ! तुम अपने जाने के पहले एक काम और कर जाओ। तुम्हारे और मेरे संबंधों को देखकर ढोलकुँवर का मन अभी तक साफ नहीं है। वह भी किसी तरह धुल जाता तो कितना अच्छा रहता।"

सुलतान ने कहा— बहिन ! मन का पाप तो तभी दूर हो सकता है जब मैं तुम्हारे यहाँ भात भरूँ। पंचों के बीच तुम्हें चुनडी ओढ़ाऊँ।" इस पर मारू ने उत्तर दिया, "भाई ! मेरे सन्तान तो कोई है नहीं, फिर भात भरने का प्रसंग कैसे आयेगा ?" यह सुनकर रतना सेठ बोल उठा, "इसका उपाय तो मैं अभी बतलाय देता हूँ। अमियाद की लड़की फूमकुँवर को रानी के गोद में बिठला दो। इसकी शादी तब मारू करेगी और उस अवसर पर भात की रस्म तुम पूरी कर देना।" रतना के इस प्रस्ताव को सुलतान ने बहुत पसंद किया। फूमकुँवर को बुलाया गया। जानो, गोदू, पनि पठान तथा शास्त्रज्ञ पंडितों की उपस्थिति में गोद की रस्म पूरी की गई। सारे शहर में बधाइयाँ बाँटी गई। नगर के सब नर-नारी आज अत्यन्त प्रसन्न थे।

सुलतान के विदा होते समय मारू ने कहा, "भाई ! मैं यथासमय भात न्यौतूँगी। जब तुम मेरे यहाँ भात भरने आओ तो कजली वन के हाथी, सिन्ध के घोड़े और पूँगल के ऊँट लाना। बंगाल गढ़ा के गढ़ाधीशों को साथ लाना, छप्पन किला के सरदारों के साथ आना। सवा लाख की चुनडी मुझे ओढ़ाना। हीरे पन्नों की बरसात करते हुए तुम शहर में प्रवेश करना। नरवलगढ़ के याचकों को दान द्वारा पूर्णतः तृप्त कर देना, दरिद्रों के दारिद्रय को पूर्णतः नष्ट कर देना। पाट के ऊपर पन्ने-जवाहरात की वर्षा करना। ढोलसिंह को सिरोपाव देना। इस तरह का भात भरना है भाई ! जिसे दुनिया याद रखे और छत्तीसों जाति के लोगों के मन का भी सब पाप धुल जाय।"

मारू ने सुलतान के विदा होने समय अपनी भावज निहालदे को निम्नलिखित परवाना लिखकर दिया—

"प्यारी भावज ! मुझे तुम्हारे सब परवान मिले। उन्हें पढ़कर मुझे पहले पहल इस बात का पता लगा कि सुलतान विवाहित है। उसे अपने विवाह की बात मुझसे हमेशा छिपा रखी। मेरे यहाँ जो नौकरी करते हैं, उन्हें मैं छः महीने के बाद घर जाने के लिए छुट्टी दे देती हूँ, किन्तु सुलतान को यहाँ रहते ५½ वर्ष हो गये। यदि मुझे पता होता कि सुलतान विवाहित है तो तुम्हें वियोग का दुःख कभी न सहना पड़ता। सुलतान को मैंने अपना धर्म का भाई बना रखा है। मैं यथासमय भात न्यौतने आऊँगी, तब तुम भी उसके साथ आना।"

सुलतान की विदाई के समय ढोलसिंह भी आ गये थे। अन्य सरदार तथा छत्तीसों जाति के लोग भी उपस्थित थे। मणिधारी सुलतान ने विदा होने से पहले जल का एक लोटा अपने हाथ में लिया और सूर्यदेव के सामने ढालते हुए कहा—

तेरीं बी नजर कै नीचै हे सूरज सब काम हैं,
तो जाएँ नरवलगढ़ में बी रह्या था साढे पाँच साल

जे वी मेरो सत फदे डिग्यों है नरवलकोट में
तो जाएं तेरे सें छानो भी अलवत नाय
जे वी मेरो सत सूरजदेव ना डिग्यो
तो गढ का कागणा भी नय ज्याय ।
श्रे वी वचन तो यो छतरी सत का जद कह्या
ढाई कागणा भी गढ का नय ज्याय ।"

हे सूर्यदेव ! सब कार्य तुम्हारी दृष्टि के सामने होते रहते हैं। मैं नरवलगढ में ५½ वर्ष तक रहा हूँ। यदि मेरा सत कभी डिगा हो तो हे सूर्यदेव ! वह तुमसे छिपा हुआ नहीं है। यहाँ रहते हुए मेरा सत यदि कभी न डिगा हो तो सबके देखते हुए गढ के ये कंगूरे झुक जायें। सुलतान द्वारा इस 'सत्यक्रिया' के किये जाने पर उसी समय गढ के २½ कंगूरे झुक गये।

यह देख कर सभी उपस्थित नर नारी 'धन्य धन्य' कह उठे। सुलतान ने अपने मित्रो तथा कर्मचारियो से विदा ली और मारू से कहा—"बहिन ! अब अधिक विलम्ब न कर और मुझे ईडरगढ जाने की आज्ञा दे।" मारू ने कहा—"मैं चाहती हूँ, तुम्हारे साथ खच्चरो पर अशर्फियाँ भरवा कर भिजवा दूँ।" इस पर सुलतान ने उत्तर दिया, "मेरी नौकरी मे से तो एक पैसा बाकी रहा नहीं, इसलिए बहिन ! तुमसे रुपया लेने का कोई हक मेरा नहीं है। हाँ, धन की आवश्यकता हुई तो मैं रतना से अवश्य ले लूँगा।" यह सुन कर रतना ने कहा, भाई सुलतान ! जितना धन तुम्हे चाहिए, अभी हाथी के हौदा मे भरवाये देता हूँ।" इस पर सुलतान ने कहा—"इतने धन की मुझे कोई आवश्यकता नहीं है, मुझे तो केवल मार्ग-व्यय चाहिए।"

रतना से मार्ग व्यय लेकर जब सुलतान जाने के लिए तैयार हुआ तो मारू ने कहा, "तुम्हारे रास्ते मे उदयपुर पडेगा जो ठगो का गाव है। वहाँ की स्त्रियाँ कामनगारी होती हैं। मेरे भाई ! उनसे बचकर आगे बढना। सबसे अच्छा तो यह है कि उदयपुर को बाया छोड कर आगे बढ जाना। वहीं रास्ते मे ठगो के चंगुल मे फँस गये तो बड़ी मुश्किल हो जायगी। मैं तो यही समझती रहूँगी कि भाई अपने देश पहुँच गया होगा और भावज समझेगी कि ननद ने उसे भेजा नहीं।"

सुलतान ने कहा—बहिन ! बाबा गोरखनाथ सब भला करेंगे।

सुलतान के जाने से पहल मारू ने फिर कहा—"भाई ! तुम्हारी सूरत देख कर मैं दातुन फाडती थी, तुम्हारे दर्शन करके मैं जलपान करती थी। इसलिए अपनी आकृति को एक प्रतिच्छवि मेरे महल मे अकित करके यहाँ से विदाई ग्रहण करो।"

सुलतान ने मारू की इच्छानुसार महल मे अपनी प्रतिच्छवि अकित करदी।

अब दोनो बहिन भाई बड़े प्रेम से गले मिले। विदाई के समय प्रेम का समुद्र लहरें लेने लगा। दोना के नेत्रो ने श्रावण को बदलो का रूप धारण कर रखा था।

मारू ने कहा, "भाई। तुम अपने जाने के पहले एक काम और कर जाओ। तुम्हारे और मेरे गवधो का देखकर ढोलकुँवर का मन अभी तक साफ नहीं है। वह भी किसी तरह घुल जाता तो कितना अच्छा रहता।"

सुलतान ने कहा—"बहिन। मन का पाप तो तभी दूर हो सकता है जब मैं तुम्हारे यहाँ भात भरूँ। पचो के बीच तुम्हे चुनडी ओढाऊँ।" इस पर मारू ने उत्तर दिया, "भाई। मेरे सन्तान तो कोई है नही, फिर भात भरन का प्रसग कैसे आयेगा?" यह सुनकर रतना सेठ बोल उठा, "इसका उपाय तो म अभी बतलाये देता हूँ। मणिधारी की लडकी फूलकुँवर को रानी के गोद म बिठला दो। इसकी शादी तब मारू करेगी और उस अवसर पर भात की रस्म तुम पूरी कर देना।" रतना के इस प्रस्ताव को सुलतान न बहुत पसद किया। फूलकुँवर को बुलाया गया। जानो, गोदू, पनि पठान तथा शास्त्रज्ञ पडितो की उपस्थिति म गोद की रस्म पूरी की गई। सारे शहर म बधाइयाँ बाँटी गई। नगर के सब नर-नारी आज अत्यन्त प्रसन्न थे।

सुलतान के बिदा होते समय मारू न कहा, "भाई! मैं यथासमय भात न्यौतूँगी। जब तुम मेरे यहाँ भात भरने आओ तो कजली वन के हाथी, सिन्ध के घोडे और पूँगल के ऊँट लाना। बावन गढा के गढाधीशा को साथ लाना, छप्पन किला के सरदारो के साथ आना। सवा लाख की चुनडी मुझे ओढाना। हीरे-पन्ना की बरसात करते हुए तुम शहर म प्रवेश करना। नरवलगढ के याचको को दान द्वारा पूर्णत तृप्त कर देना, दरिद्रो के दारिद्रय को पूर्णत नष्ट कर देना। पाट के ऊपर पन्ने-जवाहरात की वर्षा करना। ढोलसिंह को सिरोपाव देना। इस तरह का भात भरना, हे भाई। जिसे दुनिया याद रख और छत्तीसो जाति के लोगो के मन का भी सब पाप धुल जाय।"

मारू ने सुलतान के बिदा होते समय अपनी भावज निहालदे को निम्नलिखित परवाना लिखकर दिया—

"प्यारी भावज। मुझे तुम्हारे सब परवाने मिले। उन्हे पढकर मुझे पहले पहल इस बात का पता लगा कि सुलतान विवाहित है। उस अपन विवाह की बात मुझस हमेशा छिपा रखी। मेरे यहाँ जो नौकरी करते हैं, उन्हे मैं छ महीन के बाद घर जान के लिए छुट्टी दे देती हूँ, किन्तु सुलतान को यहाँ रहते ५½ वर्ष हो गये। यदि मुझे पता होता कि सुलतान विवाहित है तो तुम्हे वियोग का दु ख कभी न सहना पडता। सुलतान को मैंने अपना धर्म का भाई बना रखा है। मैं यथासमय भात न्यौतने आऊँगी, तब तुम भी उसके साथ आना।'

सुलतान की बिदाई के समय ढोलसिंह भी आ गये थे। अन्य सरदार तथा छत्तीसो जाति के लोग भी उपस्थित थे। मणिधारी सुलतान न बिदा होने से पहले जल का एक लोटा अपने हाथ मे लिया और सूर्यदेव के सामन ढालते हुए कहा—

तेरी बी नजर कै नीचै हे सूरज सब काम हैं,
तो जाएँ नरवलगढ में बी रह्या था साढे पाँच साल

जे थी मेरो सत कदे डिग्यो है नरवलकोट में
तो जाए तेरे सें छानो भी अलवत नाय
जे थी मेरो सत सूरजदेव ना डिग्यो
तो गढ का कांगणा भी नय ज्याय ।
छो थी वचन तो यो छतरी सत का जद कह्या
ढाई कागणा भी गढ का नय ज्याय ।"

हे सूर्यदेव ! सब कार्य तुम्हारी दृष्टि के सामने होते रहते हैं। मैं नरवलगढ में ५½ वर्ष तक रहा हूँ। यदि मेरा सत कभी डिगा हो तो हे सूर्यदेव ! वह तुमसे छिपा हुआ नही है। यहाँ रहते हुए मेरा सत यदि कभी न डिगा हो तो सबके देखते हुए गढ के ये कंगूरे झुक जायें। सुलतान द्वारा इस 'सत्यक्रिया' के किये जाने पर उसी समय गढ के २½ कंगूरे झुक गये।

यह देख कर सभी उपस्थित नर नारी 'धन्य धन्य' कह उठे। सुलतान ने अपने मित्रो तथा कर्मचारियो से विदा ली और मारू से कहा—"बहिन ! अब अधिक विलम्ब न कर और मुझे ईडरगढ जाने की आज्ञा दे।" मारू ने कहा—"मैं चाहती हूँ, तुम्हारे साथ खच्चरो पर अशर्फियाँ भरवा कर भिजवा दूँ।" इस पर सुलतान ने उत्तर दिया, "मेरी नौकरी मे से तो एक पैसा बाकी रहा नही, इसलिए बहिन ! तुमसे रुपया लेने का कोई हक मेरा नही है। हाँ, धन की आवश्यकता हुई तो मैं रतना से अवश्य ले लूँगा।" यह सुन कर रतना ने कहा, भाई सुलतान ! जितना धन तुम्हे चाहिए, अभी हाथी के हौदा मे भरवाये देता हूँ।" इस पर सुलतान ने कहा—"इतने धन की मुझ कोई आवश्यकता नही है, मुझे तो केवल मार्ग व्यय चाहिए।"

रतना से मार्ग-व्यय लेकर जब सुलतान जाने के लिए तैयार हुआ तो मारू ने कहा, "तुम्हारे रास्ते म उदयपुर पडेगा जो ठगो का गाव है। वहाँ की स्त्रियाँ कामनगारी होती है। मेरे भाई ! उनसे बचकर आगे बढना। सबसे अच्छा तो यह है कि उदयपुर को बाया छोड कर आगे बढ जाना। कही रास्ते म ठगो के चगुल मे फँस गये तो बडी मुश्किल हो जायगी। मैं तो यही समझती रहूँगी कि भाई अपने देश पहुँच गया होगा और भावज समझेगी कि ननद ने उसे भेजा नही।"

सुलतान ने कहा—बहिन ! बाबा गोरखनाथ सब भला करेंगे।

सुलतान के जाने से पहल मारू ने फिर कहा—"भाई ! तुम्हारी सूरत देख कर मैं दातुन फाडती थी, तुम्हारे दर्शन करके मैं जलपान करती थी। इसलिए अपनी आकृति की एक प्रतिच्छवि मेरे महल म अकित करके यहाँ से विदाई ग्रहण करो।"

सुलतान ने मारू को इच्छानुसार महल मे अपनी प्रतिच्छवि अकित करदी।

अब दोनो बहिन भाई बडे प्रेम से गले मिले। विदाई के समय प्रेम का समुद्र लहरें लेने लगा। दोना के नेत्रो ने श्रावण को बदलो का रूप धारण कर रखा था।

सुलतान ने हाथ जोड़ कर ढोलसिंह से विदा माँगी। विदा होते समय जानी, गोदू तथा पनि पठान से उसने कहा कि मैं तुम्हें यथासमय कीचककोट बुलवा लूँगा।

४३. सुलतान का ईडरगढ़ की ओर प्रयाण

मारू से भी अंतिम बिदा लेकर सुलतान घोड़े पर सवार होकर चल दिया। घोड़ा जब तक दृष्टि से ओझल नहीं हो गया, तब तक शहर के सभी नर-नारी एकटक दृष्टि से सुलतान की ओर देखते रहे। सुलतान के रवाना होने पर नरवलगढ़ के नागरिक परस्पर कहने लगे, "इस नगर का सौभाग्य था कि ५३ वर्ष तक सुलतान जैसा धर्मात्मा व्यक्ति यहाँ न्याय-इन्साफ करता रहा। नगर निवासियों की भलाई के लिए उसने कुएँ बनवाये, बावड़ी बनवाई, बाग-बगीचे लगवाये। ऐसा धर्मात्मा, ऐसा सत्यनिष्ठ और ऐसा न्याय-प्रिय शासक नरवलगढ़ में पहले कभी नहीं आया। सुलतान ने अपने लोकोपकारी कार्य और मानवोचित गुणों के कारण हमारे हृदयों में अमिट स्थान बना लिया है। वह ऐसा पुण्यश्लोक व्यक्ति है जिसके नाम के स्मरणमात्र से हमारे हृदयों के पाप धुल जाते हैं।"

सुलतान जब नरवलगढ़ के द्वार पर पहुँचा तो वहाँ एक पंडित की लड़की ने उसे रोक कर कहा, "हे घुड़सवार! मैं ज्योतिष-विद्या और शकुनशास्त्र की जानने वाली हूँ। आज जब तुम रवाना हो रहे हो, कोचरी बाईं और बोल रही है तथा शृगाल दाहिनी ओर बोल रहे हैं। जिस घड़ी तुम रवाना हुए हो, वह अच्छी घड़ी नहीं है। मार्ग में तुम्हें अनेक विघ्नों का सामना करना पड़ेगा।"

यह सुन कर कुछ क्षणों के लिए सुलतान के चेहरे पर उदासी छा गई।

किन्तु इसी बीच में एक पटवे की लड़की ने प्रतिवाद करते हुए कहा—"हे पंडित की लड़की, तुम जो कह रही हो, वह झूठ है। कोचरी दाहिनी बोली है और जम्बुक-शृगाल बायें बोले हैं। मैंने शकुनों पर भली भाँति विचार किया है। यह क्षत्रिय बहुत दिनों से अपने देश जा रहा है। इसकी परिणीता वधू इसकी बाट देख रही है। घर पहुँच कर यह तीज का त्यौहार मना सकेगा। रास्ते में संकट नहीं आयेंगे।"

इतना सुन कर सुलतान का मन आश्वस्त हुआ। दोनों लड़कियों को सोने के दो-दो टके देकर सुलतान आगे बढ़ने के लिए तैयार हुआ। पटवे की लड़की ने सुलतान को फूलों की माला पहनाई और कहा—'हे घुड़सवार! किसी बात की चिन्ता न कर और भगवान का नाम लेकर आगे बढ़ जा।'

सुलतान प्रसन्न होकर ईडरगढ़ के रास्ते चल पड़ा। उधर उदयपुर के ठगों को पता लगा कि मणिधारी सुलतान इस रास्ते से आयेगा। उन्होंने सोचा—जो लाख टके रोज कमाता था वह अवश्य बहुत-सी धन-सम्पत्ति लेकर आता होगा। ठगों ने अपनी लड़कियाँ बनियों के यहाँ गिरवी रख दीं। उदयपुर के बाहर ३५० झोंपड़ियाँ बनवा डालीं। बनियों से मोदीखाना माँग लिया कि सुलतान के आने पर सब चुका देंगे और लड़कियों को छुड़ा लेंगे। रतन तालाब के पास भी एक झोंपड़ी बनवा दी। वहाँ एक सेमल के पेड़ पर तोना-

मैना रख दिये। उन्हे पढा रखा था कि दो-चार आवें तब तोता-मैना कह दें 'दो-चार', और अधिक संख्या मे आते हुए दिखलाई पड़ें तो कहदें 'जमात और करामात'।

जब सुलतान बीहड जगल मे से गुजर रहा था, तोता-मैना आपस मे बातें करने ो। मैना तोते से कहने लगी, "कल ठगो ने यहाँ दो आदमियो को मार डाला था, परसो ार आदमी मौत के घाट उतार दिये गये थे। आज यह ससार का प्रकाश बला सुलतान ात हो जायगा। ठग इसे मार डालेंगे, किसी प्रकार छोड़ेंगे नही।"

ठगो मे से दो ठगो ने तोता-मैना की इन बातो को सुन लिया। सुनकर वे आपस कहने लगे—"आज ये पक्षी विपरीत बातें कर रहे हैं। अच्छा हो, यदि हम पेड पर चढ र वस्तु-स्थिति का पता लगा लें।"

यह विचार कर थानिया नाम का ठग सेमल के पेड पर चढा और देखा कि बीहड ंगल म से होकर एक व्यक्ति आरहा है। किन्तु ठग ने कहा—"यह बली सुलतान नही रखलाई पडता। यदि यह सुलतान होता तो मारू इसके साथ सहायक सैनिक भेजती और ह अपने साथ जवाहिरात से भरे खच्चर लाता। फिर भी यदि इसस इतना भी द्रव्य मिल ाय कि ६ महीने तक हम लोगो का खान पान होता रहे तो हम गिरवी रखी हुई अपनी ाडकियो को छुड़ा लें।"

ठगो ने अपनी ठग-विद्या रचनी शुरू की। उन्होने सिर पर फिरवाँ पगड़ी रखी, ्क लाग की धोती पहन ली, काना मे कलम टाँग ली—इस प्रकार उन्होने साहूकार का ेश बना लिया और बीहड़ जगल मे बैठ कर रोन लगे।

सुलतान जब उनके पास पहुँचा और उनको रोते हुए देखा तो उसने कहा, "भाइयो! रोते क्यो हो? तुम्हे धन चाहिए तो घोडे का 'अब्बा' काट कर देदूँ। घोडे पर सवार होना चाहो तो दो की जगह चार सवारी करलो। तुम्हे क्या कष्ट है? मुझे बतलाओ। तुम्हारे दुख मे मै अवश्य हिस्सा बटाऊँगा।"

सुलतान के इन शब्दो को सुनकर चारो ठगो ने उत्तर दिया—"हम भारामल साहूकार के लडके है। हमारा जहाज दरिया मे डूब गया है। अब कानी कौडी भी हमारे पास नहीं है। यह मल्लाह की लडकी बिना कुछ लिये हम दरिया पार भी नही उतारती।"

ठगो के इन शब्दो को सुनकर सुलतान ने कहा—"तुम कोई चिन्ता न करो। घोडे के चार अब्बो मे से प्रत्येक मे सवा-सवा लाख के जवाहिरात जडे है। उन्हे तुम काट कर ले लो मेरे पास दरियाई घोडा है। उससे मैं तुम्हें दरिया पार करवा देता हूँ।"

दो ठगो ने तो सोचा कि जब सुलतान अपने आप जवाहिरात दे रहा है तो हमे स्वीकार कर लेना चाहिए, किन्तु दो लेने को तैयार नही हुए। उन्होने कहा—"हम कोई भिक्षुक नहीं हैं जो इस प्रकार दान के लिए हाथ पसारें। हम तो तलवार से तलवार बजायेंगे और सुलतान को मार कर उसका सब धन माल छीनेंगे।"

चारो ठगो ने सुलतान से कहा, "हे घुडसवार ! हमे तुमसे धन नही चाहिए। तु तो केवल अपने दरियाई घोडे पर चढाकर हम लोगो को दरिया पार करवा दो, तुम्हा गुणो को हम कभी नही भूलेंगे।"

सुलतान ने कहा, "मुझे मार्ग का पता नहीं है। तुम्ही किसी घाट पर ले चलो। इस पर दो ठग घोड़े के आगे और दो पीछे हो लिये।

पीछे वाले ठगो ने सुलतान को मारने के लिए अपनी कटारी निकाली किन्तु इत मे पिंजडे मे से मैना बोल उठी, "घुडसवार ! भगवान् ने तुम्हे रूप तो दिया किन्तु बुद्धि नह दी। जरा पीछे मुडकर देखो तो सही, दीनदयाल सब भला करेंगे।"

सुलतान ने जब मुडकर देखा तो ठगो की कटारी पर उसकी दृष्टि गई। कटार देखते ही सुलतान क्रोध से आगबबूला हो गया। बानिया, मानिया और लालिया, इन तीन ठगो को तो सुलतान ने मार डाला। चौथा ठग गोपालिया पीठ दिखलाकर भगा। सुलतान ने भगते हुए ठग से कहा, "तुम यह न सोचना कि तुम मुझसे बचकर जा सकते हो। मेरे पास दरियाई घोडा है और मे तुम्हे अभी पकड कर मौत के घाट उतार सकता हूँ किन्तु मैंने तुम्हे इसीलिए छोड दिया है कि तुम उदयपर पहुँच कर यह आप बीती सबको सुना सको।"

फिर सुलतान ने अपने घोडे को पीछे मोडा। सुलतान वहाँ पहुँचा जहाँ तोता मैना का पिंजडा लटका हुआ था। सुलतान ने पिंजडा उतारा और कहा 'हे मैना ! तूने मेरे प्राण बचाये हैं। तू कहे तो तुझे अपने साथ ले चलूँ, तू कहे तो तुझे पिंजडे में मुक्त कर स्वच्छन्द उडान भरने के लिए वन मे छोड दूँ।"

मैना ने कहा, "हम इसी वन के पक्षी है, इसलिए हम इसी वन मे छोड कर चले जाओ।"

यह सुनकर सुलतान ने पिंजडे को तोड डाला और तोता मैना को उससे बाहर निकाल दिया।

सुलतान फिर घोडे पर सवार होकर आगे बढा। उधर जो ठग अपने प्राण लेकर भगा था, वह मोतिया नामक ठग के पास पहुँचा और उससे कहने लगा, "एक बडे जोर का घुडसवार इधर से गया है। उसने तीन ठगो को मार डाला। वह कौन है, इसका पता मुझे नहीं चला। उसके पैरो म पद्म का चिह्न है और मस्तक पर मणि दीप्त हो रही है और उसकी सूरत का तो कहना ही क्या।"

यह सुनकर मोतिया ने जवाब दिया, "तुम लोग किसी को ठगना क्या जानो ? तुम्हारे बाप-दादे भी कभी ठग रहे थे ? यदि वे तीनो ठग ही होते तो क्या वे इस प्रकार अपनी जान गवा देते ? मैं अभी जाता हूँ और इस घुडसवार को जाल मे फसाता हूँ।"

मोतिया ठग ने स्नान करके टसर की धोती पहनी। नीचा अंगरखा पहना तथा सिर पर पगडी धारण की। मोटा यज्ञोपवीत धारण कर हाथ मे डोरी-लोटा ले लिया तथा

मस्तक पर चंदन का तिलक कर लिया। इस प्रकार ब्राह्मण का वेश बना कर मोतिया बलो सुलतान के पास पहुँचा। ब्राह्मण को आया देख कर सुलतान उसके चरणों मे गिरा और कहने लगा, "दादा! आप कहाँ से आये हैं और कहाँ जा रहे हैं?" यह सुन कर ठग ने उत्तर दिया, "मैं ईडरगढ से चल कर नरवलकोट जा रहा हूँ। मैं चकवे बैण के पोने का पता लगाने जा रहा हू। न जाने, वह कहाँ मिलेगा? मैं कमधजराव का भेजा हुआ नरवलकोट जा रहा हूँ। यदि सुलतान समय पर ईडरगढ न पहुँचा तो उसकी रानी निहालदे अपने को अग्निसात् कर देगी।" सुलतान ने कहा—"दादाजो! जिसकी तलाश मे आप जा रहे हैं, वही सुलतान आपके सामने उपस्थित है। मेरे धन्य भाग्य जो आपके दर्शन हुए। रास्ते मे आपको बडा कष्ट हुआ होगा। अब आप घोडे की पीठ पर सवार होलें और मेरे साथ-साथ चलें।" यह सुन कर ठग ने उत्तर दिया, "मैं ८० वर्ष का बूढा हूँ, घोडे पर चढना अब मेरे बूते की बात नही।" इस पर बली सुलतान ने कहा, "दादा! आप पैदल चलें और मैं घोडे की सवारी करूँ, यह शोभा नही देता। इसलिए मैं भी पैदल ही चल रहा हूँ।"

अब दोनो बातें करते हुए साथ साथ चलने लगे। ठग ने अपना जाल बिछाना शुरू किया। उसने कहा—"सुलतान! इस बीहड जगल मे जल का नितान्त अभाव था। तुम्हारे दादा चकवे बैण ने यहाँ एक बावडी बनवाई थी। यदि तुम्हारी इच्छा उसे देखने की हो अथवा तुम उसमें स्नान करना चाहो तो मे तुम्हे उधर ले चलूँ।" सुलतान ने कहा, "नेकी और पूछ पूछ। यदि आप मुझे अपने दादा द्वारा बनवाई हुई बावडी मे स्नान करवादें तो मैं जन्म भर आपका गुण नही भूलूँगा।"

ठग तो किसी तरह सुलतान को अपने जाल मे फँसाना चाहता ही था। दोनो चल कर बावडी के पास पहुँचे। ठग ने कहा, "अब इस बावडी मे तुम यथेच्छ स्नान कर लो।"

इस पर सुलतान स्नान के लिए तैयार हुआ। उसने घोडा एक पेड के बाँध दिया। पाँचों हथियार खोल कर रख दिये और कपडे उतार कर वह बावडी में स्नान करने के लिए नीचे उतरा। सुलतान नि शक होकर धीरे धीरे बावडी म स्नान करने लगा।

मोतिया ने सीटी बजाई और बात की बात मे ३५० ठग इकट्ठे हो गये। उन्होने तलवारो से सुसज्जित होकर बावडी के चारो तरफ घेरा डाल दिया।

बावडी के जल मे तलवारो की झलक पडने लगी। इस पर सुलतान ने घोडे से कहा, "हे अश्व! आज कौन-सी दिशा में यह बिजली चमकती है?" यह सुन कर घोडे ने उत्तर दिया, "यह बिजली उत्तर दिशा में चमक रही है और तुम्हारे ही ऊपर कहर ढाने वाली है। इस मोतिया को तू ब्राह्मण न समझना। यह ठगों का सिरमौर है और इसने तुम्हे जाल म फँसा लिया है। मोतिया के साथी ठगो ने बावडी के चारो ओर घेरा डाल दिया है और तुम्हारी जान खतरे मे है।" तब सुलतान ने घोडे से कहा—"किसी तरह तू मेरे हथियार मुझे पकडा दे।" घोडे ने कहा, "तूने मुझे पेड मे ही बाँध रखा है, हथियार

पकड़ना मेरे लिए सभव नही । यह सब छोड़कर तू अपने गोरखनाथ का स्मरण क्यो नहीं करता ? वह बाबा ही तेरी रक्षा करेगा ।"

घोड़े के इन शब्दो को सुनते ही सुलतान ने गोरखनाथ का स्मरण किया । स्मरण करते ही आकाशवाणी हुई कि हे शिष्य ! तू किसी प्रकार न घबरा । बावडी के जल मे गोता लगाते ही तुझे एक खाडा मिल जायगा । उस खाडे को लेकर तू बावडी के बाहर आकर ठगों का सहार कर ।

सुलतान ने ज्योंही जल म गोता लगाया, एक खाडा उसके हाथ लग गया । खाडे को लेकर वह बाहर निकला । ठगो ने सुलतान को चारो तरफ से घेर लिया, किन्तु गोरख बाबा की करामात के कारण वे सुलतान का बाल भी बाँका नही कर सके । सुलतान ने एसा खाडा बजाया कि आधे ठगो का तो सफाया हो गया और आधे ठग भाग निकले ।

सुलतान ने कपडे पहने, हथियार साथ लिए और घोडे पर सवार होकर आगे चला। घोडे से सुलतान ने कहा, 'भाई घोडे ! आज तो तूने ही मेरी जान बचाई । मैं तो किंकर्तव्य विमूढ होकर सब कुछ भूल गया था । तुम्हारे कहने से ही मैंने गोरख बाबा का स्मरण किया जिससे मेरी जान बची । हे घोडे ! तेरे गुण मैं कभी नहीं भूलूगा ।"

सुलतान उदयपुर म से होकर जा रहा था । सदर बाजार में चलते हुए उसे उदयपुर के सभी नर-नारी देख देख कर नेत्रा का फल प्राप्त कर रहे थे । सभी इस बात से बडे प्रसन्न थे कि सुलतान के हाथो ठगो की बडी दुर्गति हुई ।

उदयपुर से चलकर सुलतान हकड़ा दरियाव पर पहुँचा । वहां पास ही मल्लाह का घर था । मल्लाह की लडकी ने सुलतान को देखकर कहा, "हे घुडसवार ! यदि प्यास लगी हो तो पानी पीकर आगे बढो ।" इस पर सुलतान घोडे पर से उतरा और उसने पानी पीने की इच्छा प्रकट की । मल्लाह की लडकी ने सुलतान को पानी पिलाया । लडकी सुलतान के रूप को देखकर मुग्ध हो उठी । पानी पीकर सुलतान जब उसे एक अशर्फी देने लगा तो उसने कहा, "पानी का भी कोई मोल होता है ! मैं अशर्फी कदापि स्वीकार नही कर सकती । मेरा अनुरोध है कि अब सूर्यास्त होने वाला है, रात भर तुम यही विश्राम करो और आगे न बढो । तुम्हारे लिये उजले चावल और हरे मूगो की धुली हुई दाल बनाऊँगी । टोकणी भर कर घी खिलाऊँगी । जीमते हुए तुम्हारी अँगुलियाँ निरखूगी और बोलते हुए तुम्हारी जीभ । झाड-पोछ कर तुम्हारे लिए पलग बिछाऊगी और मन लगाकर तुम्हारे लिये पखा झलूगी । इतना ही नही, बल्कि अपना अग खुशी खुशी तुम्हे समर्पित कर दूगी ।"

अतिम वाक्य को सुनकर तो सुलतान के तन बदन मे आग लग गई और लगा कहने, "ठहरने की तो मेरी इच्छा जरूर थी, किंतु अब तो एक क्षण भी मे यहा रुकने का नही । मैं तो समझता था कि यहा सत का काम है—मुझे क्या पता था कि यहा भी कपट की नाव भरी है । पाच वर्ष की लडकी को मैं पुत्री के समान समझता हूँ, १० वर्ष की

लडकी को वहिन मानता हू, इससे ऊपर अवस्था वाली स्त्री को मैं माता समझता हूँ। यदि मैं पराई स्त्री पर कुदृष्टि डालूँ तो मेरा क्षत्रियत्व कलंकित हो जायगा।"

मल्लाह की लडकी ने सुलतान के इन पवित्रता भरे शब्दो को सुनकर कहा, "हे घुडसवार! मुझसे जो भूल-चूक हुई, उसे क्षमा कर दो। वास्तव मे विवशता के कारण ही अनौचित्य भरे शब्द मेरे मुँह से निकल गये थे। तुमने मुझे सच्चा पथ दिखला दिया है। श्रावण का महीना है, बरसात की ऋतु है, दरिया सीमा उल्लङ्घन कर बह रहा है। अत· तुम्हारा रात को आगे वढना अच्छा नही।"

सुलतान ने कहा, "मेरे पास दरियाई घोडा है, इसलिए वर्षा से तो मैं नही डरता। जो भी हो, मैने आगे वढने का निश्चय कर लिया है।" सुलतान घोडे पर सवार होकर घाट पर पहुँचा, जहाँ मल्लाह बैठा हुआ था। मल्लाह ने भी सुलतान से रात भर विश्राम करने के लिए कहा, किन्तु उसने उत्तर दिया कि यदि मैं विलम्ब करूँगा तो मेरी रानी निहालदे जलकर भस्म हो जायगी। इतना कहकर सुलतान ने घोडे को जल म ठेल दिया किन्तु घोडे ने आगे वढने से इन्कार कर दिया। इस पर सुलतान ने क्रुद्ध होकर घोड से कहा—"हे घोडे। किसने तुझे दरियाई घोडे का नाम दे दिया? यदि तुझे यही करना था तो मारू की हथियापोल पर ही तू इन्कार क्यो नही कर गया? मारू कोई और उपाय करती। वह उडनखटोले मे मुझे भेजती अथवा मेरे लिए किसी दूसरे घोडे का प्रवन्ध करती। मारू समझती होगी—भाई घर गया। रानी समझेगी—ननद ने भेजा नही। हे घोडे। मौके पर तुम्हे जवाव नही देना चाहिए था। रानी नौलखे बाग मे जल जायगी, उसका पाप भी मेरे सिर चढेगा। मैं अपना शीश काट कर तेरी पीठ पर रख देता हूँ। तू सीधा नरवलकोट जाना। मारू बहिन से बन्दगी और ढोलकुँवर से जै हरनाम कहना।"

घोडे ने इन शब्दो को सुनकर कहा, "तुम्हारे बाप दादे ने भी कभी दरियाई घोडे की सवारी नही की। तू भी क्या जाने कि दरियाई घोडा क्या होता है? मेरे तगों को मजबूती से कस दो और फिर बडी सावधानी से मुझ पर सवारी करो। यदि भगवान् के घर में न्याय है तो मैं तुझे अवश्य ही पार उतार दूँगा।"

घोडे के शब्दो को सुनकर सुलतान उसका कायल हो गया। उसने कहा—"भाई! तुम्हारा इसमे कोई दोष नही। मेरा ही चित्त ठिकाने नही था, इसलिए भूल कर तुम्हारे लिए ऐसे शब्द मैंने कह दिये।" इतना कह कर सुलतान घोडे पर सवार हुआ और मन ही मन गोरख का ध्यान करने लगा। जब घोडा जल मे प्रविष्ट हुआ, हकडा दरियाव बडे वेग से लहरें ले रहा था। घोडे ने सुलतान से कहा, "मेरी पीठ पर दृढता से बैठे रहना। यदि तुम जमे न रह सके तो फिर मेरा वश नहीं चलेगा। इसलिए पहले से ही मैं तुम्हे चेतावनी दिये देता हू।"

इस पर सुलतान ने कहा, "हे दरियाई घोडे! मेरी चिन्ता न कर, मैं दृढता से तुम्हारी पीठ पर जमा रहूँगा। तुम स्वयं कभी जवाव न देना। रात का समय है, बडी

मुश्किल का काम है लेकिन फिर भी मेरा पक्का विश्वास है कि बाबा गोरखनाथ सहायता करेंगे।"

इन शब्दों को सुन कर घोड़ा भी सजग हो गया। वह जल को चीरता हुआ दृढ़ता से आगे बढ़ा। जल में हिलोरें उठ रहे थे, किन्तु फिर भी दरियाई घोड़ा उन हिलोरों के आघातों को सहन करता रहा। घोड़े ने सूर्यदेव से प्रार्थना की—"हे सूर्य भगवान्! सत्यवादी वली सुलतान मुझ पर सवार है। वह आज बड़े संकट में है। तुम किसी तरह उसका बेड़ा पार लगाना।"

दरियाई घोड़ा सारी रात जल में चलता रहा। प्रातःकाल होते ही वह घाट पर जा पहुँचा। घाट पर मल्लाह इस दृश्य को देख रहा था। उसके मुख से हठात् 'धन्य धन्य' शब्द निकल पड़े। मल्लाह ने कहा—"यह घुड़सवार भी कितना भाग्यशाली है जो जल में से सुरक्षित निकल आया। आज तो पानी इतने जोरों पर है कि हमारी नावें ही किनारे पर रुकी हुई हैं।"

सुलतान ने घोड़े को थपथपाकर कहा—"हे घोड़े! तुम्हारे माता-पिता को धन्य है जिन्होंने ऐसा घोड़ा उत्पन्न किया। आज तुम न होते तो कौन मुझे पार लगाता? हे घोड़े जन्म भर मैं तुम्हारा कृतज्ञ रहूँगा।"

यह कह कर सुलतान ने घोड़े के लिए दाना-घास मँगवाया, उसे दूध पिलवाया। स्वयं सुलतान ने भी भोजन किया और कुछ देर विश्राम करके वह फिर घोड़े पर सवार हुआ और उसने ईडरगढ़ की राह ली।

४४ बेगम का जादू

चलते-चलते सुलतान उस स्थान पर पहुँचा जहाँ हुड़दम बेगम रहती थी। बेगम का बहुत सुन्दर बाग था। सुलतान को प्यास लगी थी। जब उसने आवाज लगाई तो बेगम स्वयं जल की झारी लेकर आ गई और उसने सुलतान को जल पिलाया। किन्तु सुलतान के अप्रतिम सौन्दर्य को देखकर बेगम का चित्त चचल हो उठा। बेगम ने सुलतान पर जादू करने की ठान ली। दरियाई घोड़े को उसने पत्थर का बना दिया और स्वयं सुलतान को खरगोश के रूप में परिवर्तित कर दिया। खरगोश बेगम के बाग में फुदकने लगा किन्तु वह विवश था, बेगम पर उसका कुछ वश नहीं चलता था। सुलतान मन ही मन बिलख कर सोचने लगा, "इस बार तो बुरे जाल में फँसा। इस दुष्टा ने मुझे खरगोश बनाकर बहुत बुरा किया।" किन्तु अन्त में दुखी होकर सुलतान ने गोरखनाथ का स्मरण किया। सुलतान ने कहा, "बाबा! इस जादूगरनी से मुक्ति दिलाने का उपाय तो तेरे ही हाथ है। अगर मैं खरगोश बना रहा तो मेरी रानी का क्या हाल होगा?"

गोरखनाथ के कानों में भक्त की आर्त पुकार पड़ी। बिना एक क्षण का भी विलंब किये खड़ाऊँ पहन गोरख पवन-वेग से सुलतान के पास आ पहुँचे और उन्होंने खरगोश बने

हुए सुलतान को अपनी गोद में बिठा लिया। सुलतान गोरख के चरणों में लोट-पलोटने लगा किन्तु मुख से एक शब्द नही निकला।

गोरख ने बेगम को बुला कर कहा, "तू ने बडा अन्याय किया है। रास्ते चलते हुए पंछी का तूने बेडा गर्क कर दिया है। इसकी रानी निहालदे यदि भस्म हो गई तो उसकी मृत्यु का सारा पाप तेरे सिर चढेगा।"

बेगम को अपनी विद्या का बडा गर्व था। उसने गोरखनाथ से कहा—"तुम्हारे जैसे मोडे मैंने बहुतेरे देखे हैं। यदि तुमने चो चपट की तो मैं तुम्हे अभी कुत्ता बनाये देती हूँ।"

इतना सुनते ही गोरख के नेत्र क्रोधाग्नि से लाल हो उठे। चिउँटी भर विभूति से गोरखनाथ ने बेगम को गर्दभी के रूप म परिवर्तित कर दिया।

इस पर बेगम ने क्षुब्ध हो अपने गुरु इस्माइलनाथ का स्मरण किया। स्मरण करते ही बेगम के गुरु वहाँ आ पहुँचे।

इस्माइलनाथ सिर पर मिट्टी का टोकरा लिये हुए थे जिसमे आग जल रही थी। अपनी शिष्या को गधी बनी देखकर उन्हे बडा क्रोध आया, और कहने लगे, "आज इस बाग म मुझसे भी अधिक करामती कौन आ गया है? मैं भी तो देखूँ तो सही।" इस पर गोरखनाथ ने कहा, "भाई इस्माइलनाथ! सुनो, पहले कसूर तुम्हारी चेली ने ही किया है। उसने रास्ते चलते मेरे चेले को बाग म रोक लिया। उसके घोडे को पत्थर का बना दिया और उसे बना दिया खरगोश। चेले ने मुझे याद किया और अब मैं यहा आया तो मैंने बेगम से कहा कि तूने रास्ते चलते पछी को क्यो सताया? अगर तीज के त्यौहार पर यह न पहुँचा तो इसकी रानी जलकर भस्म हो जायगी। तुमने क्यों ऐसी बेगम को शिष्या बनाया और क्यो इसे जादू सिखलाया? या तो इसका जादू वापिस ले लो, अन्यथा तुझे भी मैं गधा बना दूँगा।"

गोरख के इन वचनो को सुनकर इस्माइलनाथ ने कहा, "मैंने तो बेगम को जादू इसलिए सिखलाया था कि कोई उससे छेडछाड करे तो वह अपना जादू काम मे ले। मैं इससे जादू वापिस ले लेता हूँ। किन्तु तुमसे मेरी यह प्रार्थना है कि तुम बेगम को गधी की अवस्था से हटाकर पूर्ववत् बना दो।"

यह सुनकर गोरख ने चुटकी भर विभूति को मंत्रित कर बेगम की तरफ फेंकी। विभूति के प्रयोग से बेगम फिर अपनी पूर्वावस्था को प्राप्त हो गई। गोरख ने कहा, "बेगम! तुझे पता नहीं, यह सुलतान किसका चेला है? तेरी इतनी हिम्मत हो गई कि तूने मेरे चेले को खरगोश और इसके घोडे को पत्थर का बना दिया। जब यह मेरा शिष्य बना था तो मैंने इससे यह व्रत लिवाया था कि वह पराई स्त्री को माता के समान समझेगा, पराये धन को धूल के बराबर मानेगा, युद्ध से पीठ दिखाकर कभी नही भगेगा और मुँह से कभी झूठ नही

बोलेगा। मैं तो तुम्हारे गुरु को भी गधा बनाने पर तुल गया था। किन्तु जब मेरा सामना इसने नहीं किया तो मैंने इसे छोड दिया।"

इस्माइलनाथ हाथ जोडकर गोरख के चरणों में गिर पडा और कहने लगा, "बाबा! मुझ में इतनी शक्ति कहाँ कि मैं आपकी बराबरी करूँ?"

गोरख ने कहा, "हम लोग तो मर्दों को चेला बनाते हैं, तुमने स्त्री को चेली क्यों बनाया? इसको दी हुई विद्या वापिस ले लो।"

गोरख के इन शब्दों को सुनकर बेगम घबराई और गोरख के चरणों में गिर कर कहने लगी, "बाबा! इस बार तो क्षमा कर दो, भविष्य में अपने जादू का दुरुपयोग मैं कभी नहीं करूँगी। यदि आपका हुक्म हो तो सुलतान और उसके घोडे पर से मैं अपना जादू वापिस खींच लूँ।"

गोरख के हुक्म को पाकर बेगम ने मंत्रित उड़द घोडे की तरफ फेंके जिससे पत्थर का घोडा फिर सजीव हो गया। फिर उसी तरह मंत्रित उड़द खरगोश बने हुए सुलतान की तरफ फेंके जिससे सुलतान फिर अपने पूर्वरूप में आ गया और सामने खड़े हुए अपने गुरु गोरख के चरणों में गिर पडा। सुलतान ने कहा, "गुरुदेव! ऐसी जादूगरनी से जीवन में कभी पाला नहीं पड़ा था। किसने इसे यह जादू सिखला दिया?"

हाथ जोडकर इस्माइलनाथ कहने लगा, "जादू सिखला देने का गुनहगार तो मैं हूँ। किन्तु मैंने इससे कहा था कि किसी भक्त और सत्यवादी पर अपना जादू न चलाना। जो तुझ से झगड कर चले, उसी पर अपने जादू का प्रयोग करना।"

इस पर सुलतान ने कहा, "मेरा तो कोई अपराध नहीं था। रास्ते में बेगम का बाग पड़ता था। मुझे प्यास लगी और मैंने इससे पानी माँगा। जल की झारी लाकर इसने मुझे पानी तो पिला दिया किन्तु ज्योंही मैं चलने के लिये खड़ा हुआ इसने अपना जादू चलाया—मेरे घोड़े को पत्थर का कर दिया और मुझे बना दिया खरगोश। ऐसी भी चेली आपने क्या बनाई जिसके मन में उचित-अनुचित का तनिक भी विवेक नहीं?"

इस्माइलनाथ को अब पक्का विश्वास हो गया कि यह सुलतान बिल्कुल निर्दोष है। ऐसे सत्यवादी व्यक्ति पर जादू का प्रयोग करके बेगम ने ज्यादती की है। यह सोचकर इस्माइलनाथ ने बेगम से उसकी जादू विद्या वापिस ले ली।

जब बेगम की विद्या उससे छीन ली गई तो उसने विलाप करते हुए कहा, "गुरुजी जादू के बिना तो मैं सूनी हो गई, मेरा तो रोजगार ही चला गया।"

इस्माइलनाथ ने उत्तर दिया, "बेगम! क्या मैंने जादू विद्या तुम्हें इसलिए सिखलाई थी कि तू सुलतान जैसे सत्यवादी व्यक्ति को भी जाल में फँसा ले? अब तक तो तू मेरी चेली थी, अब तुमसे मेरा कोई सरोकार नहीं।"

इन शब्दों को कहकर इस्माइलनाथ अपने धूने पर चले गये। उधर गोरख ने सुलतान से कहा—"तुम अपने मन में मत घबराओ। जब कभी तुम पर संकट पड़े, मुझे स्मरण कर लेना।" यह कहकर गोरखनाथ भी अंतर्धान हो गये।

४५ सती होने की तैयारी

सुलतान प्रसन्न हो घोड़े पर सवार हुआ और आगे बढ़ा। इधर ईडरगढ़ में तीज के देन फूलकुंवर की रानी ने शृंगार किया। दासी भेज कर उसने निहालदे से कहलाया कि मैं गाग में झूला झूलने जाती हूँ। तुम भी षोडश शृंगार करो, रचनी मेंहदी लगाओ, विवाह ी पोशाक पहनो और मेरे साथ झूला झूलने चलो।

निहालदे ने कहा, "हे दासी! साढ़े पाँच वर्ष बीत चले, आज ६ ठा श्रावण भी बीता जा रहा है। मेरे पतिदेव कौल करके गये थे कि वे तीज पर आ पहुँचेंगे। आज जब पतिदेव यहाँ नहीं हैं, तो किस पर मैं षोडश शृंगार करूँ और किसके लिए आभूषण पहनूँ? तू जाकर फूलकुँवर की रानी से कह दे कि मैं झूला झूलने नहीं जाऊँगी।"

दासी ने जाकर सब समाचार फूलकुँवर की रानी से कह दिया। उधर निहालदे सोचने लगी कि यदि पतिदेव जीवित होते तो अवश्य आते। अब उनके बिना मेरे लिए भी इस जीवन में क्या धरा है? अब सती हो जाना ही मेरा एकमात्र कर्तव्य रह गया है।

रानी निहालदे ने ऊदा से कहा कि मैं ससुर के नाम परवाना लिखना चाहती हूँ। मेरे लिए अभी कागज लाकर दे। दासी कागज ले आई और निहालदे लिखने लगी, "ससुर जी! आज ६ ठा श्रावण लग गया है किन्तु फिर भी पतिदेव नहीं पहुँचे। मेरे लिए चंदन कटवा कर मँगवादें ताकि मैं नौलखे बाग में चिता लगाकर भस्म हो जाऊँ। मुझे लगता है, पतिदेव इस संसार में नहीं रहे। अब सती हो जाना ही मेरा एक मात्र धर्म मैं मानती हूँ।"

निहालदे का परवाना लेकर दासी कमधजराव के पास आई और परवाना राजा को सौंप दिया। परवाना पढ़कर राजा ने फूलकुँवर को बुलाया और कहा, "हे पुत्र तूने यह बड़ी भूल की जो आज तीजों का मेला तू भरवा रहा है। पिछले ५ वर्षों से ईडरगढ़ में तीज का त्योहार नहीं मनाया जाता। तीज का मेला भी मैंने बन्द करवा रखा था। सुलतान तीजों पर लौटने का कौल करके गया था किन्तु अभी तक नहीं लौटा। आज निहालदे ने पति के न लौटने के कारण सती होने का निश्चय कर लिया है। यदि निहालदे सती हो गई और सुलतान लौट आया तो वह मुझे उपालम्भ देगा कि आपने मेरी रानी को जलने से मना क्यों नहीं किया? यदि निहालदे को सती होने से रोकता हूँ तो वह मुझे शाप देगी। तुम तीजों का मेला न भरवाते तो निहालदे को पता ही नहीं चलता कि तीज किस दिन है। हे पुत्र! मैं तो बड़े संकट में पड़ गया हूँ। मेरी तो साँप छछूंदर की सी गति हो गई है।"

फूलसिंह से ये शब्द कहकर कमधजराव ने निहालदे को प्रत्युत्तर में परवाना भेजते हुए लिखा, "हे बेटी! सुलतान ने तुम्हारा सारा भार मुझ पर डाल दिया था, तुम्हें मुझे सौंप कर वह गया था। मैंने तुम्हारे लिए यथाशक्ति किसी चीज का अभाव नहीं रहने दिया। अभी तो सायंकाल दूर है। मेरा कहा मान और सुलतान के लौटने की प्रतीक्षा कर। मेरा मन कहता है कि सुलतान आज अवश्य लौटकर आ जायगा। यदि न भी लौटा तो मैं उसे बुलाने जाऊँगा। हे पुत्री! यदि तू जलकर भस्म हो जायगी तो सारा कलंक मुझ पर लगेगा। यदि तू जल गयी और सुलतान लौटकर आ गया तो फिर उसकी क्या दशा होगी? जब वह मुझ से अपनी निहालदे मांगेगा तो मैं क्या कहूँगा? हे पुत्री! तू तो बहुत बुद्धिमती है, कोई ऐसा काम न कर जिससे बाद में पछताना पड़े। विपत्ति के दिन हैं, कट जायेंगे। भगवान् पर भरोसा रख, वही सब कुछ करने वाला है। तुम्हारे भी अच्छे दिन लौटेंगे।"

यह परवाना लिखकर कमधजराव ने हलकारे के हाथ निहालदे के पास भिजवा दिया।

हलकारा परवाना लेकर रानी के महल में पहुँचा। ऊदा ने परवाना लेकर रानी को सौंप दिया। निहालदे ने परवाना पढ़ा, किन्तु सती होने का वह तो निश्चय कर चुकी थी। इसलिए उसने कमधजराव को उत्तर में लिखा—"ससुरजी! मेरे स्वामी के लौटने की प्रतीक्षा करते करते छठा वर्ष बीतने को आया, यहाँ मेरे कारण ईडरगढ़ में तीज का त्यौहार मनाना भी आपने बन्द करवा दिया। सती होने का मेरा निश्चय अब अटूट है, आप मेरे लिए चन्दन की चिता तैयार करवादें।"

दासी परवाना लेकर पहुँची। कमधजराव ने परवाना पढ़कर फूलसिंह से कहा—"अरे! तूने यह क्या किया? अगर तू तीज की घोषणा न करता तो निहालदे कदापि यह दृढ़ निश्चय न करती। मालूम होता है, तू तथा तेरी माता चाहते ही यह थे कि निहालदे चिता में जल कर भस्म हो जाय।"

फूलसिंह ने उत्तर दिया—"बेशक आप निहालदे को सती होने दें, उसे ऐसा करने से न रोकें, यह भी सच है कि निहालदे के सती हो जाने से मेरी माता तथा मैं दोनों प्रसन्न होंगे।"

फूलसिंह के इन शब्दों को सुनकर राजा विचलित और क्षुब्ध हो उठा। फिर भी राजा ने हलकारा भेज कर ऊदा को बुलवाया और कहा— "जिस दिन सुलतान यहाँ से रवाना हुआ था, वह निहालदे का सारा भार मुझ पर सौंप कर गया था। सुलतान जब लौट कर आएगा और मुझसे अपनी निहालदे मांगेगा तो तू क्या कहेगी? तू निहालदे को समझा-बुझा कर आज का दिन किसी प्रकार टाल दे, फिर तो बारह महीनों पर बात जा पड़ेगी।"

ऊदा ने जाकर कमधजराव का संदेशा निहालदे को सुनाया और अपनी ओर से भी पूरा आग्रह किया कि वह सती न हो। ऊदा ने कहा, "रानी ! तू अपने दिल में न घबरा, तुम्हारे स्वामी तीज पर अवश्य पहुँचे रहेंगे। बागो में तीज का मेला भर रहा है, तू भी साज सिंगार कर और मेला देखने चल।"

इस पर निहालदे कहने लगी—

'जलो हे करेलण ऊदा बाड़ विन
तो जाएँ काजी हे जलियो विना हे कुरान
सासू विना हे जल जाओ जग में सासरो
साला विन जलियो की या सुसराल
जलो हे सुरगी सेजां म्हारा पीव विन
पिया विन जलियो सकल सिंगार।"

"हे ऊदा ! बाड के बिना करेलो की लता जल जाय। सास तथा साले के बिना जल य समुराल। बिना प्रिय के आग लगे सुरंगी शैया को और बिना पिया के जल जाय । शृङ्गार।"

हे ऊदा ! जब मैं तेरह वर्ष की थी, मेरा विवाह हुआ। प्रिय मुझे छोड कर चला या, न तो मैं पीहर ही रही, न समुराल ही। साजन मुझे कांटो वाली बाड की चुहिया ना गया, मैं रास्ते की गेंद के समान इधर-उधर लुढक रही हूँ। फूलसिंह की १७ रानियाँ झ पर व्यंग्य कसती रहती हैं। कब तक मैं उन ताना को बरदाश्त करूँ ? मेरे लिए प्रिय बिना अब इस ससार मे रह ही क्या गया है ? कितने वर्षों तक केतकी भ्रमर की आस ती रही ? किन्तु भ्रमर ने इधर कभी फेरा नही किया। हे ऊदा ! मेरे लिए चिता तैयार रवा दे, लाया लगाकर मरा शरीर भस्म कर दे। मैं तेरा बडा उपकार मानूँगी। प्राणा के ना जैसे देह और जल के बिना जैसे नदी की हालत होती है, वैसी ही हालत प्रिय के वियोग मेरी हो रही है। यह जीवन मुझ अब नि सार जान पडता है। मृत्यु की गोद मे ही मुझे व चिर शांति मिलगी।

इस पर ऊदा ने कहा—"तुम्हे सती होने की आवश्यकता नहीं। पिछली मध्य रात्रि ो मुझे एक स्वप्न आया जिसमे मैंने प्यारी निहालदे के प्रियतम को काले-से घोडे पर वार देखा, काले ही उसके वस्त्र थे, काले म्यान की उसकी तलवार थी। उसकी बाँकी टार अपनी अलग ही शोभा दिखला रही थी। कन्धे पर बन्दूक उसन ले रखी थी। काली द की बदली से वर्षा हो रही थी, जिसम उसकी पचरग पाग भीग रही थी। बलो सुलतान घुडसाल म घोडा बाँध दिया, तीर-कमान खूटी पर टाँक दिये और फिर वह टगटग नान महल में जा चढा और हँस-हँस कर उसन तुम्हारे दिल की बात पूछी। तुम्हारी 'गुली को प्रेम स मरोड दिया और तुम्हारे साथ चौपड का खेल खला। इतन म

बाग में एक कोयल बोली और मेरा स्वप्न भंग हो गया। हे वैरी सपने ! इच्छा होती है, तुम्हे फूंक दूं जिसने मिले हुए सुलतान का निहालदे से बिछोह करा दिया। हे रानी ! मेरा यह स्वप्न निश्चय सच होकर रहेगा।"

ऊदा के स्वप्न का हाल सुनकर निहालदे के जी में जी आया। उसने कहा—"ऊदा ! अगर तुम्हारा स्वप्न सच्चा हो जाय तो मैं कभी भी तुम्हारे गुणों को नहीं भूलूंगी, किन्तु फिर भी मुझे लगता है कि पतिदेव इस संसार में नहीं रहे। यदि वे नरवरगढ होते तो वहां इतने समय तक नहीं ठहरते। तीज का कौल करके वे गये थे, आज छठा श्रावण बीता जा रहा है। मुझ हतभागिनी के भाग्य में स्वामी के साथ रह कर सुख भोगना नहीं बदा था। अब इन बातों में क्या रखा है, तू मेरे लिए बाग में चिता बनादे ताकि मैं स्वामी के लिए सती हो जाऊं।"

निहालदे के इन शब्दों को सुनकर ऊदा कमधजराव के पास गई और कहने लगी—"अन्नदाता ! निहालदे अब किसी की नहीं सुनती। मैंने उसे बहुतेरा समझाया, किन्तु मेरी कोई बात उसके गले नहीं उतरती। आज शाम को सती होने का उसने दृढ निश्चय कर लिया है। अब आप जैसा उचित समझें, करें। मेरा वहां अब कोई वश नहीं चलता।"

कमधजराव ने कहा—"हे ऊदा ! यदि निहालदे सती हो गई तो अनर्थ हो जायगा। आज का दिन तो किसी तरह टालदे, फिर तो बात बारह महीने पर जा पड़ेगी।"

ऊदा ने कहा—"अन्नदाता ! मैं निहालदे को सब प्रकार समझाकर हार चुकी। मैंने अपनी ओर से कोई कोर-कसर नहीं रखी। अब यदि निहालदे के लिए चिता तैयार नहीं करवाई गई तो वह कटारी खाकर अपने प्राण त्याग देगी। इसलिए आप उसके लिए चन्दन की चिता तैयार करवादें और उसमें गिरी, छुहारे और नारियल डलवादें।"

उधर ऊदा कमधजराव के यहां से चलकर निहालदे के पास पहुँची। निहालदे रानी सती होने पर तुली हुई थी। इसलिए ऊदा भी विवश होकर सब तैयारियां करने लगी। निहालदे को १६ शृङ्गारों से सजाया गया, ३२ आभूषण उसे पहनाये गये। सारे शहर में घोषणा करवादी गई कि आज निहालदे सती होगी। इस पर छत्तीसों जाति के लोग बाग में इकट्ठे होने लगे।

कमधजराव ने निहालदे के सती होने के लिए बहुत ऊँची चिता बनवाई। सात सीढियां उसके लगवा दी गई। बड़े जोर शोर से तीज का मेला भर रहा था। फूलकुंवर की माता, बहिन तथा उसकी १७ रानियां डोलों में बैठ-बैठ कर बाग में पहुँची और झूलों पर झूलने लगी। झूला झूलते समय उनसे अपने-अपने पतियों का नाम लिवाया गया।

जब निहालदे के सती होने का समय आया, वह महल से उतरी और डोले में बैठ कर आगे बढी। रास्ते में उसे बहुत अच्छे शकुन हुए। दोगड लेकर जाती हुई सुहागिनी स्त्री उसे मार्ग में मिली। उसने स्त्री को ठहराकर दोगड में ५ अशर्फियां डलवादीं। दाहिनी ओर

तीतर तथा बाईं ओर सोचरी बोल रही थी। निहालदे ने इन अच्छे शकुनो को देखकर कहा—"ऊदा ! मालूम होता है, तुमने जो स्वप्न देखा हैं, वह सच्चा होगा।"

रानी का चित्त आज अत्यन्त उल्लसित था। निहालदे का डोला सदर बाजार मे होकर गाजे-बाजे के साथ चल रहा था। डोला बाग मे पहुँचा। चिता पर पहरा लगा हुआ था। कमधजराव पास ही खडा था। निहालदे चिता पर चढी और मन में ध्यान धर कर कहने लगी—"हे महेश्वर ! आज सती की लज्जा रखना। मेरे प्रिय को आज मुझसे मिलाना।"

रानी ने कहा—"ऊदा ! चिता मे लापा लगा दो।" आज्ञा पाकर ऊदा ने लापा लगा दिया। लांपा लगाते ही सती के सत के कारण इन्द्र राजा ने वर्षा की झडी लगादी। अग्नि का वेग मन्द पड गया, वह ऊपर की ओर उठती ही नही थी। चिता के पास एकत्रित छत्तीसो जाति के लोग आश्चर्यजनक दृश्य को देख रहे थे और सभी सति की जय बोल रहे थे।

इधर निहालदे के सती होने मे विलम्ब होता देख चुनिया तारग की लडकी ने कहा—"*मै अपनी ओर से नही कहती, वेद-शास्त्र देखकर ही मैं यह भविष्य-कथन कर रही हूँ।* नरवलकोट मे वडी भारी लडाई हुई, जिसमे तुम्हारे पति युद्ध करते हुए स्वर्गवासी हो गये हैं। तू भी विलम्ब क्यो करती है ? सती होकर शीघ्र ही अपने पति से जाकर क्यो नही मिलती ? सती होना है तो विलम्ब कैसा ? यदि तू सती न हुई, तो लोक मे तेरी बडी भारी हँसी होगी।"

तारग की लडकी ने निहालदे से आभूषण आदि की प्राप्ति की आशा से ही इस तरह के शब्द कहे थे।

निहालदे के भी यह बात जँच गई, किन्तु इन्द्रदेव ने जोरो की झडी लगा रखी थी। रानी का कुछ वश नही चलता था। निहालदे ने अपने आभूषण उतार कर फेंकने शुरू किये और उधर तारग की लडकी चुनिया उन्हे उठाने लगी। यह देखकर ऊदा क्रोधाग्नि मे जल उठी, किन्तु उसका कुछ वश नहीं चल पा रहा था।

सती होते समय निहालदे भविष्य के सम्बन्ध मे कुछ बात कहेगी, इसे सुनने के लिए छत्तीसो जाति के लोग इकट्ठे हुए थे। कमधजराव ने सब शोरगुल बन्द करवा दिया और सभी कान लगाकर सती के शब्दो को सुनने के लिए उत्सुक हो रहे थे। इधर पपीहा 'पी-पी' की रट लगा रहा था। निहालदे ने जब पपीहे की बोली सुनी तो वह कहने लगी—"अरे वैरी पपीहे ! पी-पी को बोली छोड दे। प्रिय-वियोग का दुःख मुझसे अब एक क्षण के लिए भी सहा नही जाता। 'पी-पी' करते हुए प्रिय के वियोग मे मैं पीली पड गई। लोग कहने लगे—मुझे पीलिया हो गया है, किन्तु मैं भली-भांति जानती हूँ, यह पीलिया-विलिया कुछ है नहीं। घुन जैसे लकडी को खा जाता है, उसी तरह प्रिय-वियोग मेरे यौवन को खाये जा रहा है। वियोग मे जल-जलकर मेरी काया कोयला हो गई है और अब यह केवल मुट्ठी भर राख रह जायगी।"

४६. क्रौंच-पक्षियों से वार्तालाप

निहालदे मन ही मन इस प्रकार सोच-विचार में तल्लीन थी। हाथ में उसने माला ले रखी थी। शिव का ध्यान वह लगाये हुए थी। इसी समय एक कौवा 'कांव-कांव' करने लगा। रानी ने अपने हाथ की मुंदडी निकाल कर कहा—"हे कौवे! नरवलगढ जाकर मेरे प्रिय को यह मुंदडी दिखला देना। तेरे पङ्खों को चांदी में और चोंच को सोने से मढवा दूंगी और तुम्हारे गुण कभी न भूलूंगी।" इतना कह कर उसने मुंदडी कौवे की तरफ फेंक दी। कौवे ने मुंदडी चोंच में ली और वह नरवलगढ की ओर उड चला।

इसी समय क्रौंच-पक्षियों का दल उडता हुआ इधर आ निकला। मादा क्रौंचों को सम्बोधित करते हुए निहालदे कहने लगी—"हे कुरजो! चुनडी बदल कर हम धर्म की बहिन बन जायें। तुम अपने पङ्ख मुझे मांगे दे दो। इन पङ्खों की सहायता से उडकर मैं नरवलगढ में अपने पति से मिलूंगी। विह्वल होकर अपने प्रियतम को मैं पुकारती हूँ, किंतु मेरी आवाज वहां तक नहीं पहुँच पाती। प्रिय-मिलन के लिए हाथ पसारती हूं किन्तु हाथों की पहुँच वहां तक कहां?" कुरजा ने कहा—"रानी! तुम अगर अपना रूप हमें मांगा दे दो, तो हम भी अपने पङ्ख तुम्हें दे सकती हैं।" रानी ने उत्तर दिया—"यदि मेरे वश की बात होती तो मैं अपने रूप के विनिमय में प्रिय से उड कर मिलने के लिए अवश्य ही तुम्हारे पङ्ख ले लेती।" कुरजों ने कहा—"रानी! तुम्हारी दशा पर हमें भी तरस आता है किन्तु पङ्ख देना न तो हमारे लिए सभव है और न तुम्हारे लिए इन पङ्खों की सहायता से उड सकना ही सभव है।" इतना कह कर क्रौंच-पक्षियों का दल आगे उड चला।

४७ सुलतान का विश्राम

उधर सुलतान मंजिल पर मंजिल पार करता हुआ आगे बढ रहा था। ईडरकोट भी अब नजदीक आ गया था। इस समय मध्याह्न का सूर्य तप रहा था और सुलतान भी चलते-चलते थक गया था। उसने अपने घोडे से कहा—"हे मेरे प्रिय अश्व! मध्याह्न का सूर्य अपनी प्रचण्ड रश्मियों से तप्त कर रहा है। थोडी देर के लिए तू भी इस वट-वृक्ष की शीतल छाया में विश्राम कर। यहां से ईडरकोट अब केवल ७ मील की दूरी पर रह गया है। यह भूमि मेरी पहले की भी देखी हुई है। पहले भी जब कभी मैं चलते-चलते थक जाता था, तो इसी वट-वृक्ष की छाया में विश्राम किया करता था। ईडरकोट में आज जो मेला भरेगा, उसका समय चार बजे है। नींद भी मुझे सता रही है। इसलिए अच्छा यही है कि हम थोडी देर के लिए यहां विश्राम करें।"

यह कह कर सुलतान घोडे से उतरा और उसने घोडा वट-वृक्ष के बांध दिया। सुलतान थका हुआ तो था ही, चद्दर तान कर सो गया। वट-वृक्ष की शीतल छाया में लेटते ही सुलतान को नींद आ गई। उसने सोचा था, घण्ट दो घण्टे में सोकर उठ जाऊंगा किंतु गहरी निद्रा में निमग्न हो जाने के कारण सुलतान को समय का कोई ध्यान ही न रहा।

४८. कौए का कांव-कांव करना

सुलतान को सोते हुए चार बज गये। उसी समय कौवा वहां आ पहुँचा और वट-वृक्ष की डाली पर बैठ कर कांव-कांव करने लगा। कौवे की चोच मे जो मुंदड़ी थी, वह गिरकर सुलतान की छाती पर पड़ी जिससे तुरन्त उसकी आँखें खुल गई। सुलतान ने ज्योही मुंदडी उठाई उसकी आँखो मे आंसू भर आये। उसने घोडे से कहा, "जिस निहालदे के लिए यहां तक पहुँचने मे इतनी शीघ्रता की थी, वह तो जल गई। अब मेरा आगे बढना या पीछे हटना दोनो ही बेकार हैं। यहां से नरवलगढ बहुत दूर रह गया और ईडरकोट जाने की मन म अब कोई इच्छा नही रह गई।"

सुलतान के इन निराशा-भरे शब्दो को सुन कर दरियाई घोडे ने कहा, 'सुलतान! एक क्षण का विलम्ब किये बिना तुम मेरे 'पागडे' मे पैर रखो, मेरी पीठ पर सवार हो जाओ और एक चाबुक मुझे लगादो, फिर देखो तुम्हे मैं कितनी जल्दी ईडरगढ पहुँचाता हूँ।"

सुलतान ने ऐसा ही किया। घोडे की पाठ पर सवार होते ही उसने एक चाबुक लगाया और घोडा पवन-वेग स दौडन लगा। वह इतने वेग से दौड रहा था कि एक मक्खी भी उस पर नही टिक सकती थी। दो घडी मे वह बाग के पास जा पहुँचा। जब वह द्वार के पास गया तो उसने देखा कि वहाँ मेला बडे जोर-शोर से भर रहा था। इन्द्र राजा ने वर्षा की झडी लगा रखी थी। फूलसिंह ने दरवाजा बन्द करवा दिया था। बाहर से कोई आवाज भी लगाता था, तो अन्दर सुनाई नहीं पडती थी।

सुलतान ने घोडे स कहा, 'मेरे प्रिय अश्व। तुम्ही बताओ, मैं क्या करूँ? मेरी बुद्धि यहाँ कोई काम नही करती। आवाज लगाता हूँ तो किसी को सुनाई नही पडती। बाग के अन्दर स धुआं उठ रहा है। अगर निहालदे आज जल गई तो सदा के लिए मेरे सिर पर उसका पाप चढा रहेगा। इतनी विपत्तियो से तुमने मुझे पार लगाया है, अब भी तुम्ही मेरी सहायता करो। मुझे तुम्हारा ही भरोसा है।"

घोडे ने कहा, "तुम चिन्ता न करो, जहाँ तक मेरा वश चलेगा, तुम्हारे मार्ग मे आने वाले सब विघ्नो को दूर करूँगा। तुम मुझे दस कदम पीछे हटाओ और मुझे चाबुक लगाओ।"

सुलतान ने घोडे को दस कदम पीछे हटाया और उसे चाबुक लगाया। चाबुक लगाते ही घोडा बाग की दीवार को फाँद कर अन्दर चला गया और जन-समुद्र की अपार भीड़ को चीरता हुआ चिता के पास पहुँचा। सात सीढियो की चिता थी। तीन सीढियो के आग लग गई थी किंतु वर्षा की झडी के कारण आग आगे नही बढ रही थी।

४६ चिता-स्थल पर पहुँचना

सुलतान ने ज्योही अपने धर्म पिता कमधजराव को देखा, वह उसके चरणो मे गिर पड़ा। अकस्मात इस प्रकार सुलतान के मिलने पर कमधजराव के हर्ष का समुद्र हिलोरें

लेने लगा। उसे इतनी प्रसन्नता हुई मानो किसी रंक को कुबेर का खजाना मिल गया हो अथवा अन्धे को नेत्र मिल गये हो। वह बार-बार उस परम प्रभु के गुण-गान करने लगा जिसकी असीम कृपा से सुलतान ऐन वक्त पर आ पहुँचा था।

कमधजराव ने अब निहालदे को चिता से उतरने का हुक्म दिया। धर्मपिता के हुक्म को पाकर सुलतान चिता पर चढा। जब वह निहालदे के पास पहुँचा तो उसने देखा कि रानी को पूरा होश नही है। जब सुलतान ने उसका हाथ पकडा तो रानी ने उसकी ओर बिना देखे उसे फूलसिंह समझ कर कहा, "तू मेरा धर्म का भाई है। मेरे हाथ को तूने स्पर्श किया है, वह हाथ अब जलेगा नही।"

भाई का नाम सुनते ही सुलतान टप-टप चिता से उतर आया।

कमधजराव के सरदारो को यह देख कर बडा आश्चर्य हुआ और उन्होने सुलतान को चारो ओर से घेर कर पूछा, "आखिर ऐसी भी क्या बात हो गई जिसके कारण आपने निहालदे को चिता से नही उतारा ?"

सुलतान ने सरदारो से कहा कि मैंने चिता पर से उतारने के लिए निहालदे का जब हाथ पकडा तो उसने मुझे भाई कह कर सबोधित किया। इसलिए अब वह मेरे काम की नहीं रही। पत्नी रूप मे मै उसे अब ग्रहण नही कर सकता। केलागढ से मै इसे विवाह कर लाया था किन्तु महल म प्रवेश करने के पहले ही मेरी धर्म की माता ने कुछ एसी चुभने वाली बात कह दी थी जिसके कारण में निहालदे को धर्मपिता कमधजराव के हाथा सौप कर नरवलगढ चला गया था। आज ५।। वर्ष बाद उससे मिलना हुआ था किन्तु जान पडता है विधि को यह सयोग भी सह्य नही हुआ।

उधर निहालदे को भी पता चला कि भाई शब्द द्वारा सबोधित किये जाने के कारण सुलतान मुझे ग्रहण नहीं कर रहा है। उसन मन ही मन अपन भाग्य को कोसा और भगवान् शिव का स्मरण करते हुए कहा कि हे देवाधिदेव! यदि मेरे पतिदेव समय पर न पहुँचते और मै सती हो जाती तब तो यह उचित ही था किन्तु अब तो उनका उपस्थिति म मेरा जल जाना कहाँ तक ठीक है, इसका न्याय तो आप ही करेंगे। पतिदेव अपने हठ पर तुले हुए हैं और मेरे पास आपको पुकारने के सिवाय और कोई चारा नही।

५०. शिव-पार्वती का आगमन और विवाह

निहालदे की करुण पुकार भोलनाथ शम्भु के कानो तक पहुँची। उन्होने पार्वती को अपने साथ लिया और अपनी दिव्य शक्ति के बल पर नंदिकेश्वर पर सवार होकर वे शीघ्र ही बाग म आ पहुँचे। शिव ने निहालदे को चिता पर से उतारा और कहा, "बेटी! तुम्हें घबराने की कोई आवश्यकता नहो। तुमने जिस सत् का परिचय दिया है, वह अन्य नारियो के लिए भी अनुकरणीय होगा।"

इतना कह कर शिव ने सुलतान की ओर उन्मुख होकर कहा, "निहालदे मेरी शय्या है और तुम गोरखनाथ के शिष्य हो। भूल से निहालदे ने तुम्हे भाई कह दिया है जसके कारण उसे पत्नी रूप मे स्वीकार करने मे तुम्हे आनाकानी हो रही है। किन्तु आज म दोनो (शिव और शक्ति) तुम्हारे सामने उपस्थित हैं। यदि मैं तुम दोना के भाँवर द्वारा फिरवा दूँ, तब तो तुम्हे कोई आपत्ति नही होगी न ?" सुलतान ने कहा, "हे आशुतोष ! आप द्वारा ऐसा किये जाने पर 'भाई' कहने का अनौचित्य दूर हो जायगा और आपके आदेश से मैं निहालदे को पत्नी के रूप मे स्वीकार कर लूँगा।"

विवाह की तैयारियाँ होने लगीं। बड़े बड़े प्रसिद्ध पंडित बुलवाये गये। बाग मे ही विवाह मण्डप तैयार किया गया और वेदी बनाई गई। घृत और अन्य सब सामग्री भी मँगवा ली गई।

स्वयं शिव ने वैश्वानर को चेतन कर दिया। पंडित विवाह मत्रों का उच्चारण करने लगे। धवल-मगल गीत गाये जाने लगे। विविध वाद्य-यन्त्र बजने लगे।

कमधजराव ने इस मागलिक कृत्य मे बहुत ही उत्साह दिखलाया। निहालदे और सुलतान ने भाँवर लिये। शिव-पार्वती की उपस्थिति में ही यह विवाह विधि सम्पन्न हुई। इस देख कर जनता के अपार हर्ष का ठिकाना न रहा। शोक आनन्द मे परिणत हो गया।

उपस्थित जन-मण्डली ने हाथ जोड कर भगवान् शिव से कहा, "हे अवढर दानी ! आपने पार्वती-सहित स्वयं उपस्थित होकर सती निहालदे की लज्जा रख ली। आज दुनिया ने प्रत्यक्ष देख लिया कि जो सत् के मार्ग पर चलता है, उसकी भोलानाथ शम्भु सदा सहायता करते हैं। विधि की विपरीतता से सत्यवादी लोग भी इस दुनिया मे अनेक कष्ट उठाते हैं किंतु कष्टो की अग्नि मे तप कर उसमे से निखालिस सोने की तरह जो खरे निकलते हैं, निहालदे और सुलतान की भाँति ऐसे लोग इस दुनिया मे अत्यन्त विरल हैं ?"

जिस कार्य को सम्पन्न करने के लिए भगवान् शिव पधारे थे, उसके पूरा होते ही वे अपार भीड को आशीर्वाद देकर सती पार्वती-सहित शीघ्र ही अन्तर्धान हो गये। कमधजराव ने भिक्षुकों को खैरात बाँटी। निहालदे डोली मे बैठी और चकवे बैण का पोता बनी सुलतान हाथी के हौदे पर बैठा। गाजे बाजे के साथ जुलूस आगे बढा। छत्तीसो जाति के लोग पीछे पीछे चल रहे थे। सारी जनता बनी सुलतान पर न्यौछावर हो रही थी। सुलतान के स्वागत के लिए नगरनिवासियों ने अपनी अपनी दुकानें तथा गृह-द्वार सजा रखे थे। सदर बाजार मे होकर जब सुलतान की सवारी पहुँची तो सभी सुलतान के सौंदर्य और उसके राजसी तेज को देख कर 'धन्य-धन्य' कह उठे।

सुलतान जब अपने महल के पास पहुँचा तो फूलसिंह की बहिन को 'बार रुकाई' के नेग के रूप मे बहुत-सी अशर्फियाँ दी गईं। सुलतान ने जब निहालदे सहित महल मे प्रवेश किया तो कमधजराव की रानी ने (जो सुलतान की धर्म-माता थी) आरती उतारी।

आज सुलतान के दिन फिरे थे। उस पर शनिश्चर की दशा थी, वह दूर हो गई थी। धर्म की माता, जो कई वर्षों पहले सुलतान से रुष्ट हो गई थी, आज उसका बड़ा आदर-मान तथा लाड़-चाव कर रही थी।

दूसरे दिन 'देई-देवता' धोकने की तैयारियां होने लगी। कमधजराव की बेटी ने निहालदे तथा सुलतान का 'गठ जोडा' करवाया और 'देई-देवता' धोकने की रस्म पूरी हुई।

सुलतान ने रानी के साथ सोटकी का खेल खेला। निहालदे का भी पति के साथ खेल खेलने का चाव पूरा हुआ। आज रानी हँस-हँस कर अपने प्रिय से बात कर रही थी और भगवान् को धन्यवाद दे रही थी जिसने बिछुड़े हुए प्रियतम को मिला दिया था। आज रानी के हर्ष का समुद्र अपनी मर्यादा छोड़ रहा था।

निहालदे की सात सहेलियां भी आज उल्लास के अपार सागर में निमग्न थीं। निहालदे के साथ बैठ कर सातों सहेलियां आज थाल जीम रही थीं।

तात्पर्य यह कि विधि की अनुकूलता से आज सब कुछ अनुकूल हो गया था।

सुलतान और फूलसिंह एक साथ शिकार खेलने के लिए जाते। कमधजराव भी दोनों को एक ही दृष्टि से देखता था। रानी की भी निहालदे और सुलतान दोनों पर बड़ी कृपा थी।

एक दिन निहालदे ने सुलतान से एकान्त में पूछा, "आर्यपुत्र! आप ५॥ वर्ष तक अकेले रहे। क्या मेरी याद आपको नहीं सताती थी? आप मुझे इतने वर्षों तक क्योंकर भूले रहे?"

सुलतान ने उत्तर दिया, "रानी! पिता ने मुझे १२ वर्ष तक के लिए देश-निकाला दे दिया था। जब मैं तुम्हें लेकर ईडरकोट आया तो धर्म की माता ने चुभता वचन मुझे कह दिया था जिससे मैं नरवलगढ चला आया था जहां मुझे मेरी रुचि के अनुकूल काम मिल गया। श्रावण की तीज पर लौटने का वादा करके मैं गया था किंतु यदि प्रति वर्ष मैं नरवलगढ लौट-लौट कर आता तो देश-निकाले के ये १२ वर्ष कभी पूरे न होते। नरवल-गढ में रहते हुए मैंने अपने विपत्ति के दिनों को भुलाने की चेष्टा की। मारू को मैंने धर्म की बहिन बनाया। उसने मुझे बड़े आदर-सम्मान के साथ नरवलगढ रखा। गोदू, जानी और पनि पठान जैसे दोस्त मुझे वहां मिल गये। इस प्रकार नरवलगढ में शासन कार्य सँभलते तथा मित्रों के साथ रहते हुए ५॥ वर्ष इस तरह बीत गये मानो एक दिन और एक रात व्यतीत हुई हो। किन्तु मारू के पास जब तुम्हारे परवाने पहुँचे तो उसने मुझे उसी समय रात को बुलवा कर परवाने पढने के लिए दिये। परवानों को पढते ही तुम्हारी स्मृति सजग हो उठी, तुम्हारे वियोग का एक-एक पल भारी हो गया और मध्य-रात्रि का व्यतीत होना भी दुष्कर हो गया।

मैं बड़ी मुश्किल से नरवलगढ़ से निकल सका, क्योंकि वहाँ के सभी लोगो से इस तरह का स्नेह हो गया था कि वे आने ही नही दे रहे थे। अन्त मे मैंने सूर्य को साक्षी देकर कहा कि मारू बहिन के यहाँ जब तक भात नही भरूँगा, तब तब मेरा क्षत्रियत्व लज्जित रहेगा। जो परवाने तुमने मारू को लिखे थे, वे परवाने मारू ने मुझे ही लौटा दिये थे। तुम्हारे हृदय की अक्षय निधि इन परवाना को अब मैं तुम्ह वापिस किये देता हूँ।

सुलतान के इन शब्दो को सुन कर रानी अत्यन्त प्रसन्न हुई। एकान्त मे निहालदे ने अपने द्वारा लिखे हुए परवानो को कई बार फिर पढा जिसमे अनेक प्रकार की स्मृतियो ने उसके चित्त को आच्छादित कर लिया।

एक दिन निहालदे ने सुलतान से कहा, "पतिदेव! मैं सच-सच कह रही हूँ, आपने कोई बात छिपा कर नही रखती। जब बारह महीने व्यतीत हो गये और आप नही आये, तब मेरे मन मे पक्का विश्वास हो गया था कि मारू ने ही नरवलगढ मे आपको बिलमा रखा है। मैंने ३५० परवाने लिखे थे जिनमे मारू को बहुत जली-कटी सुनाई गई थी। आर्यपुत्र! सच सच कहिए, आपने इन परवाना मे से कितने परवानो को पढा था?"

सुलतान ने उत्तर दिया, "मारू ने मुझे सब परवाने पढने को नही दिये। मुझे तो केवल एक परवाना पढने को दिया था, जिसम मेरे नाम-गाँव आदि का उल्लेख था।"

इस पर निहालदे ने कहा, "धन्य है मेरी ननद जिसने बड़ी बुद्धिमानी से काम लिया और आपको सब परवाने नही पढने दिये। मुझे भी उसने सब परवानों का केवल एक ही उत्तर लिख कर दिया कि मेरे भाई बली सुलतान को कोई छोटा-मोटा मनुष्य न समझना, उसने कभी भी किसी पर-नारी को कुदृष्टि से नही देखा, क्षत्रियत्व का जो पुनीत आदर्श उसने रखा है, वैसा कोई क्या रख सकेगा? ईश्वर साक्षी है कि नरवलगढ मे सुलतान तथा मैं भाई-बहिन के रूप मे रहे हैं।"

निहालदे के इन शब्दो को सुन कर सुलतान ने कहा, "रानी! गोरखनाथ मेरे गुरु हैं। मुझे दीक्षा देते समय उन्होने चार वस्तुओ का नियम पालन करने के लिए मुझे कहा था :—

"पर की तिरिया नै हे चेला! माता समझिये,
पर धन नैं धूल समान।
रण में बी जाकै उलटा मतनाँ भागिये,
मूँडा की सेती झूठ बी बोलिये नॉय॥"

पर-स्त्री को माता के तुल्य समझना, पराये धन को धूल मान कर चलना, रण मे जाकर उलटे पैर न देना और अपने मुँह से कभी झूठ न बोलना—अपने गुरु द्वारा बतलाये हुए इन चारो नियमो का मैंने पूर्ण रूप से पालन किया है। भविष्य मे भी तुम मेरे जीवन मे इन चार नियमो को चरितार्थ होते देखोगी।

अब हम कीचलगढ में चलेंगे और देश निकाले का कुछ समय वहाँ काट देंगे।" कीचलगढ चलने की बात सुन कर निहालदे अत्यन्त प्रसन्न हुई और कहने लगी, "हे पति देव! इतने वर्षों तक विराने लोगों मे मैं रही। व्यंग्य-वचन सुन कर ही आपको नरवलगढ जाना पड़ा। अब यहाँ से चलने का शीघ्रता कीजिये।"

सुलतान ने कहा, 'रानी! इन्हे विराने लोग न कहो। क्या तुम्हे मालूम नहीं, कमधजराव को मैंने अपना धर्म का पिता बनाया था और उसकी रानी को धर्म की माता। मेरे पिता ने तो मुझे १२ वर्ष का देश-निकाला दे दिया था। इन्हीं की सहायता से देश निकाले के दिन हम लोगो ने काटे हैं। इनके प्रति हम लोगों को पूर्ण कृतज्ञ रहना चाहिए और उनकी आज्ञा लेकर ही हम कीचलगढ चल सकते हैं।"

५१ कीचलगढ जाने की तैयारी

दूसरे दिन प्रातःकाल सुलतान कमधजराव के समक्ष गया और हाथ जोड़कर कहने लगा, "हे पिता! अब मुझे अपने देश जाने की आज्ञा दीजिये।"

यह सुन कर कमधजराव ने कहा, "तुमने तो इससे पहले कभी अपने देश की चर्चा नही की थी। जब पहले-पहल तुम मिले थे, तो तुमने यही कहा था कि मेरा नाम-गाँव कुछ भी नही। आकाश ने मुझे डाल दिया और पृथ्वी माता ने झेल लिया। हे पुत्र! इतने समय तक यह भेद क्यो छिपाये रहे? अब तुम शीघ्र ही सच्ची-सच्ची बात कहो।"

कमधजराव के शब्दों को सुनकर सुलतान कहने लगा, "पिताजी! किसी पर इस ससार म कभी विपत्ति न पड़े। विपत्ति पड़ने पर मनुष्य को भिक्षा तक माँगने के लिए बाध्य होना पड़ता है। मेरे पक्ष मे भी ऐसा ही हुआ। मेरी भी उल्टी दशा थी। विपत्ति का सताया हुआ ही मैं आपके पास आया था। अब भगवान् के अनुग्रह और आपके आशीर्वाद से मेरे भी दिन फिरे हैं। पहले यदि मैं भेद छिपाये न रखता तो मैं अपने इन विपत्ति के दिनो को न काट पाता। अब मैं आपको सच्ची-सच्ची बात बतलाये देता हूँ। मेरे पिता कीचलगढ के गढपति हैं। मैनपाल का मै पुत्र और चकवे बैण का पोता हूँ। प्रतिहार-वंश म मेरा जन्म हुआ है। मेरे पिता ने मुझे १२ वर्ष का वनवास दे दिया था। मै गोरखनाथ का शिष्य हूँ। उन्हीं की कृपा से मेरा जन्म हुआ था। उन्होंने ही मुझे ईडरगढ का रास्ता बता कर कहा था, "तुम्हे सवा पहर ईडरगढ म भिक्षा माँगनी पड़ेगी। इसके बाद तुम्हे किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा।"

सुलतान के इन शब्दो को सुनकर कमधजराव के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने कहा, "यदि मुझे पता होता कि तुम कीचलगढ के राजकुमार हो तो मैं तुम्हे धर्म का पुत्र न बना कर गद्दी का मालिक बनाता। कीचलगढ भी कोई छोटा-मोटा गढ नहीं है। रावण जैसो ने भी इसकी आन मानी थी। मुझसे अनजान मे कोई अपराध हो गया हो तो उसे क्षमा कर देना।"

इस पर हाथ जोड़कर सुलतान ने उत्तर दिया, "पिताजी ! भगवान् से मेरी प्रार्थना है कि जैसी विपत्ति मुझ पर पड़ी, वैसी किसी पर न पड़े। विपत्ति के दिनों में निहालदे ईडरगढ़ आपके पास रही और उसको किसी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ। आपके उपकारों को मैं जन्म भर नहीं भूल सकता। भगवान् करे, आपको सुख-समृद्धि दिन दूनी रात चौगुनी बढ़े। अब आप आज्ञा दीजिए जिससे मैं कीचलगढ़ चला जाऊँ। देश निकाले के शेष दिनों को तो मैं रास्ते में ही काट दूँगा।"

सुलतान के शब्दों को सुन कर कमधजराव ने कहा, "फूलसिंह को मैं पाप का पुत्र मानता हूँ। तुम्हें ही मैंने धर्म का पुत्र बनाया था। फूलसिंह और उसकी माता की बात तो मैं नहीं कहता किन्तु अपनी ओर से मैं कह सकता हूँ कि मैंने तुम्हें फूलसिंह से अधिक माना है और निहालदे को पुत्री के समान समझा है। मेरे राज्य के आधे हिस्से के तुम हकदार हो। केवल राज्य के लिए मैं तुम्हें अन्यत्र नहीं जाने दूँगा। मैंने सूर्यदेव को साक्षी करके कहा था कि फूलसिंह और सुलतान में मैं कोई भेद भाव नहीं रखूँगा। हे पुत्र ! विपत्ति के दिन तो आते हैं और चले जाते हैं किन्तु बात अमर रह जाती है। मैंने जो तुम्हें वचन दिया था, उसका उल्लङ्घन मैं नहीं कर सकता।"

इस पर सुलतान ने कहा, "मेरे पिता के सात रानियाँ थीं किंतु उनमें से किसी के कोई लड़का न हुआ। फिर गोरखनाथ की कृपा से मेरा जन्म हुआ और जन्म के साथ ही बड़े लाड़ चाव से मेरा लालन-पालन होने लगा। अब पिता से बिछुड़े मुझे बहुत वर्ष हो गये हैं। वे भी मेरे लिए व्याकुल होंगे। इसलिए मैं आपसे हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे कीचलगढ़ जाने की आज्ञा दें।"

इसी अवसर पर सुलतान ने अथ से इति तक अपने देश निकाले की सब कथा भी कह सुनाई।

कमधजराव ने सारा हाल सुन कर कहा, "यदि ऐसी बात है तो मैं तुम्हें जाने से नहीं रोकता। जिस वस्तु की तुम्हें आवश्यकता हो, यहाँ से ले जाओ। हाथी, घोड़े, धन-द्रव्य जितना चाहो, अपने साथ ले लो।"

इस पर सुलतान ने उत्तर दिया, "पिताजी ! हाथी घोड़े, धन-दौलत किसी भी वस्तु का अभाव मेरे पास नहीं है। किन्तु हाँ, एक निवेदन आपसे है। नरवलगढ़ में रहते हुए मारू को मैंने अपनी धर्म की बहिन बनाई है और उसे भात भरने के लिए मैं कह आया हूँ। जब मैं 'मायरा' लेकर मारू के यहाँ जाऊँगा तब आपको साथ ले चलूँगा। किसी कारण-वश आपका चलना सम्भव न हुआ तो फूलसिंह को साथ ले लूँगा और वही सब काम-काज का मालिक रहेगा।

सुलतान के शब्दों को सुन कर कमधजराव ने अत्यन्त प्रसन्न हो कर कहा, "अच्छा, धन द्रव्य न सही, फिर भी मैं तुम्हारे साथ अपने सौ दो सौ विश्वासी सैनिक भेजूँगा। न जाने, रास्ते में क्या बखेड़ा खड़ा हो जाय !"

सुलतान ने कहा, "पिताजी ! जब मैं नरवलगढ से रवाना हुआ तब मारू ने भी इस बात का बडा आग्रह किया कि वह मेरे साथ अपने आदमी भेजे किन्तु दरियाई घोड़े के अतिरिक्त मैंने कुछ लेना स्वीकार न किया। इसी प्रकार नरवलगढ में रहते हुए मेरे जानी, गोदू और पनि पठान नामक तीन अंतरंग मित्र बन गये थे। उन्होंने भी मेरे साथ चलने के लिए बडा हठ किया किन्तु उन सबसे भी मैंने यही कहा कि जब मारू भात न्योतने के लिए आए, तभी तुम सब लोग भी उसके साथ आना। मैं गोरखनाथ का शिष्य हूँ और जब जब मुझ पर भीड पडती है, गोरख बाबा मेरी सहायता करते हैं। उन्होंने मुझे वरदान दिया है कि मैं ५२ साके करके दिखलाऊँगा और उन सबमे मुझे सफलता प्राप्त होगी। इसलिए पिताजी, मेरे साथ सैनिक भिजवाने की आप चिन्ता न करें और मुझे जाने की आज्ञा दें। आपने जैसा अच्छा व्यवहार मेरे साथ किया है, भगवान् उसका अच्छा फल आपको देगा और इस ससार मे आपके गुणों की चर्चा सदा ही होती रहेगी।"

सुलतान के इन शब्दो को सुनकर कमधजराव के नेत्रो मे आंसू भर आये और उन्होने सुलतान का गाढालिगन करते हुए कहा, "हे पुत्र ! इतने वर्षों बाद तो तुमने अपना मुँह दिखलाया और अब यहाँ कदम रखते ही जाने की चर्चा चला दी। हे मेरे लाडले ! तुम्ही बताओ, मैं तुम्हे किस तरह जाने को कहूँ? केलागढ मे भी तुम्ही ने मेरी लज्जा रखी थी। फूलसिंह की असफलता के कारण वहाँ तो मैं किसी के सामने अपना मुँह दिखाने योग्य भी नही रह गया था। यदि तुम न होते तो मेरे अटके हुए काम को कौन पूरा करता? तुम्हारे गुणों का स्मरण करते-करते मेरी आँखें आर्द्र हो जाती है।"

सुलतान ने कहा, "पिताजी ! मैं आपकी मनोदशा को समझता हूँ। इसलिए यदि मैं कीचलगढ की ओर प्रस्थान करूँगा तो बिना आपकी रजामदी के कदापि नही। यहाँ से चले जाने पर भी आप मुझे अपने से अलग न समझें। मेरे योग्य कोई काम होने पर आप मुझे कभी बुलायेंगे तो मैं अविलम्ब आपकी सेवा मे उपस्थित हो जाऊँगा।"

सुलतान के इन शब्दो को सुनकर कमधजराव ने बिदाई की आज्ञा दे दी।

कमधजराव के यहाँ से चल कर सुलतान अपने महल मे पहुँचा। कुछ देर विश्राम करने के बाद निहालदे ने थाल लगा दिया और दोनो दम्पति हँस हँस कर बातें करने लगे। कमधजराव से कीचलगढ के लिए आज्ञा प्राप्त करने मे कितनी कठिनाइयो का सामना करना पडा, यह सब सुलतान ने निहालदे को कह सुनाया।

निहालदे यह सुन कर बडी प्रसन्न हुई और बोली, "अब कीचलगढ चलने के लिए शीघ्र ही तैयारी करो।" सुलतान ने कहा, "पिताजी की आज्ञा तो मिल गई है किन्तु अभी माता की आज्ञा प्राप्त करना शेष है।"

निहालदे ने कहा, "वह तो हम लोगो के जाने से प्रसन्न ही होगी। हम लोगो का यहाँ रहना उन्हे नही सुहाता।"

इस पर सुलतान कहने लगा, "हो सकता है, उनके मन में यही बात हो किन्तु मैं अपना धर्म कभी नही छोड सकता। माता से आज्ञा लिए बिना हमारा चलना नही हो सकता। हम दोनो साथ ही माता के महल में चलेंगे।"

निहालदे और सुलतान दोना माता से मिलने के लिए जनाने महल में पहुँचे और विदा की आज्ञा मांगी। रानी ने कहा, "सुलतान! तुम आज्ञा मांग कर जली हुई को और अधिक क्यो जलाते हो? यह निहालदे मेरे पुत्र फूलसिह की माग थी किन्तु मेरे पति ने एक भिक्षुक के साथ इसका विवाह कर दिया और मेरा कुछ वश चला नही। तुम जाना चाहते हो तो जाओ, म तुम्हे और कहूँ भी क्या?"

सुलतान ने कहा, "हे माता! तू यह न समझना कि मैं जन्म का भिक्षुक हूँ। मै चकवे बैण का पोता और मैनपाल का बालगोपाल हूँ। मेरे पिता ईडरगढ जैसे ५२ गढा के अधिपति हैं। उन्होंने मुझ देश निकाला दे दिया तो मैं ईडरगढ आया और समय के फेर से मुझ कुछ समय तक भिक्षा माँगनी पडी। हे माता! समय बडा बलवान् है, मनुष्य की उसके सामने कोई हस्ती नही। किसी का अच्छा समय हो तो वह कुएँ बावडी बनवाता है, गढो की नीव लगवाता है, बहुमूल्य हाथी घोडे पर सवारी करता है किन्तु समय पलट जाने से उसी व्यक्ति को भीख तक माँगनी पडती है। किसी का भी सदा समय इकसार नही रहता।

"समय हे खिणादे नर नै कूआ बावडी।
तो घी जाएँ समय लगादे बी गढ की हे नींव॥
समय थी चढादे हस्ती लाख कै।
समय बी मँगादे घर घर भीख॥"

ईडरगढ पहुँचने पर बमयजराव न मुझे अपना धर्म का पुत्र बना लिया और मेरे साथ किसी तरह का भेद भाव नही रखा। भगवान् उनका भला करे।

हे माता! तेरा एक दूसरा भ्रम भी मे मिटा देना चाहता हूँ। निहालदे की सगाई पहले-पहल मुझ से ही हुई थी किन्तु जब मेरे पिता ने मुझे १२ वर्ष का देश-निकाला दे दिया तो स्थिति ही बदल गई। मेरे पिता ने निहालदे के पिता को लिखा कि यदि आप १२ वर्ष तक प्रतीक्षा कर सकते हो, तभी निहालदे और सुलतान का विवाह हो सकता है किन्तु निहालदे का पिता इस पर तैयार नहीं हुआ और उसने फूलसिह के साथ निहालदे की सगाई करदी। फिर भी सयोग बडा बलवान् है। देश निकाले के दिना में भी मेरा इससे विवाह हो गया। निहालदे के पिता ने विवाह के लिए मत्स्य-वेध की शर्त रखी थी। फूलसिह मत्स्य-वेध करने में असफल रहा और बमयजराव को स्वयवर में एकत्रित सभी राजाओ के सामने नीचा देखना पडा। तब मैंने ही मत्स्य-वेध करके बमयजराव की लाज रखी थी। निहालदे के साथ मेरे विवाह की यही कहानी है। आगे जो कुछ हुआ, वह सब तुम जानती ही हो।"

सुलतान के मुख से सारा हाल सुनकर कमधजराव की रानी को बडा आश्चर्य हुआ और वह कहने लगी, "हे पुत्र ! मुझे इन बातों की कोई जानकारी नहीं थी। मुझे वास्तव में धोखे में रखा गया। धोखे ही धोखे में मैंने जो ताना तुम्हे मार दिया था, हे पुत्र ! इस लिए तुम मुझे क्षमा कर देना।"

रानी के शब्दो को सुनकर सुलतान ने कहा, "हे माता ! तुम्हे मैं कोई दोष नहीं देता। मैं तो यही मानता हूँ कि मेरे ही पूर्व जन्म के कर्म उदय हुए थे जिहान मेरी धर्म-माता को मुझसे विमुख करवा दिया। और सच तो यह है कि तुम्हारे व्यग्य-वचनों से मेरे विपत्ति के दिन कट गये। यदि तुम मुझे व्यग्य-वचन न कहती तो मैं नरवलगढ कदापि न जाता और देश निकाले के मेरे वर्ष कभी पूरे न होते। हे माता ! अब मुझे कीचलगढ जाने की आज्ञा दो। तुम से आशीर्वाद लेने के लिए ही हम दोनो यहाँ आये हैं।"

सुलतान के विनम्रता भरे शब्दो को सुनकर राजमाता का भी जी भर आया और वह कहने लगी, 'हे पुत्र ! वे माता पिता धन्य है जिन्हान तुम जैसे आज्ञाकारी, विनम्र और शूरवीर पुत्र को जन्म दिया। मैंने तुम्हे इतनी खोटी खरी सुनाई थी किन्तु तुमने उसे भी सिर माथे लिया। सभी पुत्र भी इतनी नही सुनते। तुम्हे जाने की आज्ञा मैं कैसे दूँ? मैं तुम्हे आधा राज्य दिला दूँगी। तुम यही बैठे आराम से राज्य करो। तुम्हारे जैसा पुत्र इस धरती पर देखने मे नही आया। तुम्हारी तुलना तो कौशल्यानन्दन भगवान् राम से ही की जा सकती है।"

राजमाता के इन शब्दो को सुनकर सुलतान ने कहा, "माता ! राज्य मैं नही चाहता। सपूर्ण राज्य का मालिक फूलसिंह ही रहेगा। वैसे मुझे राज्य की कमी भी नही। मेरे पिता ५२ गढो के अधिपति हैं।

हे माता ! यहाँ से जल्दी विदा लेने का एक कारण और है। नरवलगढ मे रहते हुए मारू को मैंने धर्म की बहिन बना लिया था। उसके यहाँ भात भरने का वचन देकर मै आया हूँ। वह कीचलगढ भात न्यौतन' आयेगी। यदि मैं समय पर न पहुँचा और वह भात न्यौतन आ गई तो कौन उसका आदर सम्मान करेगा? इसलिए हे माता ! तू मुझे शीघ्र ही विदा की आज्ञा दे।"

सुलतान के इन शब्दो को सुनकर कमधजराव की रानी ने कहा "हे पुत्र ! दूसरे के यहाँ भात भरने का निश्चय कर तू ने 'सत' का कार्य किया है। ससार मे सदा के लिए तुम्हारी वार्ता चलगी। यदि भात भरने की बात न होती तो मैं तुम्हें अभी न जाने देती किन्तु अपने ऊपर जो दायित्व तुमने ले लिया है, उसकी पूर्ति मे मैं किसी भी प्रकार बाधक नही होना चाहती। इसलिए परिस्थिति को देखते हुए मैं तुम्हे विदा की आज्ञा देती हूँ। जाते समय अपने साथ हाथी घोडे और पदाति जितने ले जाना चाहो ले जाओ।"

माता के शब्दो को सुनकर सुलतान कहने लगा, हे माता ! मेरे पास दरियाई

घोड़ा है जो मुझे सब प्रकार की विपत्तियों से पार लगायेगा। इस घोड़े को छोड़कर मुझे अन्य किसी हाथी-घोड़े अथवा पदाति की आवश्यकता नहीं। और फिर हे माता! मेरे गुरु गोरख का अनुग्रह और तुम्हारा आशीर्वाद आगे-आगे चलकर मेरी रक्षा करेंगे।"

सुलतान के शब्दों को सुनकर माता ने उसे 'धन्य-धन्य' कहा और बोली, 'इस संसार में वही नारी वस्तुतः पुत्रवती है जिसने तुझ जैसे विनम्र, आज्ञाकारी और सर्वगुण-सम्पन्न पुत्र को जन्म दिया है। हे पुत्र! अब मैं सहर्ष तुम्हें अपने देश जाने की आज्ञा देती हूँ।"

माता से विदा लेकर सुलतान फूलसिंह के पास गया और उससे गले मिल कर बोला, "भाई! तू भी मुझे अब प्रसन्नता-पूर्वक कीचलगढ़ जाने की आज्ञा दे।"

इस पर फूलसिंह ने कहा, "हे मेरे धर्म के भाई! अवस्था में आप मुझसे बड़े हैं और मैं छोटा हूँ। मैं आपको क्या आज्ञा दूँ? बड़ा भाई तो पिता के तुल्य होता है। आपके यहाँ रहते हुए मेरे मुख से जो भी अनुचित शब्द निकल गया हो, उसे क्षमा करना। मेरी तो अब हृदय से यही इच्छा है कि ईडरगढ़ में आप ही राज्य करें और यहीं बाहर जाने का नाम भी न लें।"

फूलसिंह के इन विनम्रता-भरे शब्दों को सुनकर सुलतान ने कहा, "निश्चय ही आज मेरे दिन फिरे हैं, जो तुमने इस तरह के अनुकूल वचन कहे हैं। जब किसी के विपरीत दिन आते हैं तब अपने तन के वस्त्र भी बैरी हो जाते हैं तथा अनुकूल समय आने पर सभी आदर-मान करने लगते हैं। हे भाई! तुम्हारी सद्बुद्धि की मैं सराहना करता हूँ। मेरा तो केवल यही कहना है कि तुम दिल से माता-पिता की सेवा करना। इन्होंने हमारे लिए जो कुछ भी किया है, हम प्राण देकर भी उससे उऋण नहीं हो सकते।"

फूलसिंह ने कहा, 'हे भाई! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। आपको यही कहना शोभा देता है। मेरी भी यही इच्छा है जिसे आप अवश्य पूरी करेंगे। मारू के यहाँ जब आप भात भरने जायें, तब मुझे भी अवश्य साथ ले लें।"

सुलतान ने कहा, "केवल साथ लेना ही क्या, भात भरने के काम में तुम्हीं मालिक रहोगे। जो करना होगा, वह सब तुम्हीं करोगे।"

यह सुनकर फूलसिंह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इसके बाद सुलतान अपने यार-दोस्तों से मिला और निहालदे फूलसिंह की रानियों से मिली। फिर राजमाता के चरणों में गिर कर उससे अमर सुहाग का आशीर्वाद प्राप्त किया।

सबसे मिल कर अन्त में चलो सुलतान अपने पिता से दुबारा मिलने के लिए गया। समयजराव ने कहा, "हे पुत्र! मेरी आज्ञा तो तुमने ले ली है किन्तु अपनी माता की आज्ञा के बिना कैसे जा सकते हो?"

सुलतान ने कहा, "मैं अभी-अभी माता से मिल कर आ रहा हूँ। उसने भी मुझे सहर्ष अपने देश जाने की आज्ञा दे दी है।"

फूलसिंह भी पास ही मे खडा था। कमधजराव ने फूलसिंह को सम्बोधित करते हुए कहा, "सुलतान विदा ले रहा है, इसे जिस वस्तु की आवश्यकता हो दिला देना।" फूलसिंह ने कहा, "पिताजी! मैं तो यही मानता हूँ कि हमारी जितनी चीजें हैं, सब सुलतान की ही हैं। इनकी इच्छा हो, ये रत्नो का हौदा भरवालें, यथेच्छ हाथी घोडे और फौज अपने साथ ले लें।" इन शब्दो को सुनकर कमधजराव और सुलतान दोनो ही बहुत प्रसन्न हुए। सुलतान कहने लगा, "हे पिताजी! मेरे पास दरियाई घोडा है। वह मेरी सब इच्छाओ की पूर्ति कर देगा। अब आप मुझे सहर्ष विदा की आज्ञा दें।"

विदाई की बात सुनकर कमधजराव के नेत्रो मे जल भर आया और वह कहने लगा, "हे पुत्र! जब तुम जाओ तो रास्ते म अच्छी तरह जाना, इस बात का ध्यान रखना कि मेरी पुत्री निहालदे को किसी प्रकार का कष्ट न होने पाए। अपने देश पहुँचते ही मुझे सकुशल पहुँचने का परवाना भिजवा देना।"

कमधजराव के चरणो मे धोक खाकर सुलतान दरियाई घोडे पर सवार हुआ। राजमाता के चरणो मे गिरकर निहालदे भी डोल मे बैठी। कमधजराव हाथी के हौदे पर बैठा। गाजे बाजे स जब सुलतान सदर बाजार म से निकला तो सभी उसके अप्रतिम सौंदर्य और तेज को देख कर 'धन्य धन्य' कह उठे।

जब सुलतान शहर के बाहर पहुँचा तो उसने कमधजराव से कहा, "अब आप और अधिक आगे चलने का कष्ट न करें।" पिता के चरणो म अन्तिम बार शीश नवा कर सुलतान ने उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। ईडरगढ के जितने अन्य लोग साथ थे, उन सबसे भी सुलतान ने 'जै हरनाम' किया और आगे बढा।

रानी निहालदे डोले मे बैठी जा रही थी और फूलसिंह डोले के साथ था। 'काकड'[1] पर पहुँचने पर थकने बैए के पीने ने कहा, "भाई फूलसिंह! अब इस डोले से काम नही चलेगा। अब तो इस दरियाई घोडे पर ही हम दोनो सवार होगे। यह घोडा ही हमारा बेडा पार लगायेगा।"

यह सुनकर फूलसिंह ने कहा, "भाई सुलतान! मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा और साथ में २०-३० जवान ले लेंगे।" सुलतान ने उत्तर दिया, "भाई! सचमुच ही मुझे किसी सहायता की आवश्यकता नही है। इसलिए २० ३० जवानो को लेकर तुम्हारा मेरे साथ चलना अनावश्यक है।"

इतना कह कर सुलतान ने रानी को डोले से बाहर निकलने को कहा। रानी डोले से बाहर निकली और सुलतान के साथ घोडे पर बैठी। परस्पर विदाई के अभिवादन के

१. ग्राम सीमा

ाद फूलसिंह अपने सवारो सहित ईडरगढ आया और मुलतान ने कीचलगढ की राह पकडी।

५२ कीचलगढ की ओर प्रयाण तथा जल मे प्रवाहित हो जाना

कीचलगढ के रास्ते मे बहुत से बीहड वन पडते थे। चलते-चलते दिन छिप गया। रास्ते मे एक नदी भी पडती थी। प्रश्न यह था कि आगे बढा जाय या यही विश्राम किया जाय।

मुलतान ने कहा, "रानी। रात को जल मे चलना खतरे से खाली नही है। तुम कहो तो यही रात काट दें और प्रात काल आगे बढें।"

रानी ने कहा—"यहा भयकर उजाड है, कहा विश्राम करेंगे? रात को यदि हम लोगो को नीद आ गई और कोई उठा कर ले गया तो क्या होगा? दरियाई घोडा हम लोगो के पास है, वह रात मे भी नदी पार करवा देगा।"

निहालदे को जल्दी से जल्दी कीचलगढ पहुँचने का चाव लग रहा था। इसीलिए उसने उक्त मत प्रकट किया था।

इस पर मुलतान ने घोडे की सलाह लेनी चाही और उससे पूछा, "हे घोडे! तुम्ही बताओ, रात का काम है, हमे आगे बढना चाहिए अथवा नही?"

यह सुनकर दरियाई घोडे ने उत्तर दिया, "रात से मैं नही डरता, न मुझे इसकी चिन्ता है कि मुझ पर दो व्यक्ति सवार होते है या चार। किन्तु स्त्री-जाति से मुझे भय लगता है। आज अँधेरी रात नही, चादनी रात है। यदि जल मे निहालदे की परछाई मैंने देख ली तो मैं भी विचलित हो उठूँगा, मेरा तप खण्डित हो जायगा। उस समय मेरा कोई वश नही चलेगा और हम सब जल के अथाह प्रभाव मे निमग्न हो जायेंगे।"

किन्तु मुलतान ने घोडे की चेतावनी पर कोई ध्यान नही दिया और कहा, "जो भी हो, हम आगे ही बढना है, यहा विश्राम करने का कोई स्थान नही है। मैं आगे बैठूँगा और पीछे बैठेगी रानी निहालदे। हे घोडे! तुम इस तरह प्रयत्न करना कि निहालदे की परछाई तुम न देख सको। भगवान् अवश्य बेडा पार करेगा।"

इतना कह कर मुलतान ने घोडे को नदी मे डाल दिया। जल को चीरता हुआ घोडा आगे बढा किन्तु ज्योही वह नदी के बीचो-बीच पहुँचा, रानी निहालदे की आकृति का भलक उसे दिखलाई पड गई जिसके कारण घोडा विचलित होने लगा, उसका तप खण्डित हो गया।

घोडे ने कहा, "मुलतान! मैंने तुम्हे पहले ही कहा था किन्तु मेरी बात पर तुमने कान नही दिया, उसे सुनी-अनसुनी कर दी। अब निश्चय ही हम तीनो जल मे प्रवाहित हो जायेंगे, मेरा यहा कोई वश नहीं चलगा।"

सुलतान घबरा कर कहन लगा, "हे घोडे। मुझे विश्वास नही था कि इस तरह जल मे हमारा बेडा गर्क हो जायगा।"

घोडे ने कहा, "सुलतान। मेरा इसमे कोई दोष नही है। मैंने तो तुम्हें पहले ही चेतावनी दे दी थी किन्तु सच बात तो यह है कि होनहार किसी के टाले नही टलता।"

इधर रानी ने विह्वल होकर कहा, "मुझ अभागिनी के भाग्य मे सुख बदा ही नही किन्तु मैं आपको सत्य कहे देती हूँ कि यदि कदाचित् मैं जल के बाहर जीवित निकल आई तो किसी अन्य पुरुष की ओर आँख उठा कर भी नही देखूँगी। मुझे पूरा विश्वास है, भगवान् भोलानाथ सतियो के सत् की पूरी रक्षा करेंगे।"

इस पर सुलतान ने कहा, "रानी। मैं भी तुम्हे वचन देता हूँ कि यदि मैं जीवित जल के बाहर निकल आया, तो कभी किसी दूसरी स्त्री से विवाह नही करूँगा।"

घोडे ने भी सुलतान से आखिरी बदगी की। उसके पैर ऊपर को उठने लगे। एक प्रभाव म घोडा बह गया, दूसरे मे रानी और तीसरे म सुलतान प्रवाहित हो गया।

दैववशात् प्रात काल होते होते सुलतान नदी के किनारे पहुँच गया। वहा नदी तट के एक वृक्ष की जड का सहारा लेकर वह नदी के बाहर आ गया।

५३ सुलतान और झगेरीमल सेठ

नदी के किनारे एक घाट था जहा एक पनवाडी पान धो रहा था। जब उसने सुलतान को उसने देखा, तब वह चल कर उसके पास आया और पूछने लगा, 'भाई तुम कौन हो जो इस तरह उन्मन उन्मन हो रहे हो?'

सहानुभूति के दो शब्द सुन कर सुलतान की आखो म आसू आ गये। उसन कहा, "म भाग्य का सताया हुआ हूँ। मेरी दशा पूछ कर तुम क्या करोगे? किन्तु फिर भी मैं तुम्हे सच्ची सच्ची बात बताये देता हूँ।"

इतना कह कर सुलतान ने दरियाई घोडे तथा निहालदे-सहित अपने प्रवाहित होने की सारी घटना अथ से इति तक कह सुनाई।

पनवाडी न, जिसका नाम झगेरामल था, सारी कथा सुन कर कहा, "रानी निहालदे तथा दरियाई घोडे का पता लगायेंगे। जहा तक तुम्हारा सवाल है, तुम मेरे साथ चलो। मेरे कोई सन्तान नही है, मैं तुम्हे आज स अपना धर्म का पुत्र बनाता हूँ।"

झगेरीमल पान का टोकरा सिर पर रख कर घर के लिए रवाना हुआ। साथ म उसी सुलतान चल रहा था। जब झगेरीमल 'पन्ना' शहर म पहुँचा तो सब वैश्या को उसके साथ बली सुलतान को देख कर बडा आश्चर्य हुआ। झगेरीमल ने जब सारा किस्सा कह सुनाया तो सबको बडा प्रसन्नता हुई। झगेरीमल न बडा दान-पुण्य किया। भाई चारे में

मिठाइया बाटी जाने लगी। कुछ दिनो बाद सुलतान झगेरीमल की दूकान पर बैठने लगा। सुलतान के कारण पान की बिक्री भी बहुत बढ गई।

५४ निहालदे और पण्डित की पुत्रिया

उधर काशी के धीवरो ने जल मे प्रवाहित होते हुए दरियाई घोडे को जब देखा तो उन्होने जाल डाल कर घोडे को बाहर निकाल लिया। निहालदे भी बहते-बहते काशी म गगा के किनारे जा पहुँची जहा शिवजी का स्थान था। यहा पर हवेराम पण्डित की चार लडकिया पूजा के लिए आई हुई थी। अकस्मात् यहा अनिंद्य सुन्दरी निहालदे को देख कर उन्होने आपस मे कहा, "शिव पूजा करते-करते बहुत-सा समय बीत चला था किन्तु कभी देवता ने दर्शन नही दिये। आज हम लोगो के सौभाग्य से हम माता पार्वती मिल गई है।"

चारो लडकियाँ दौड कर निहालदे से गले मिली और कहने लगी, "हे माता। तुम्हारी पूजा करते हुए कई वर्ष बीत गये। आज बडी मुश्किल से तुम्हारे दर्शन हुए है। अब हमारे जन्म-जन्म के पाप धुल गये हैं। अब हम तुम्हे नही छोडेंगी।"

यह सुन कर निहालदे ने उत्तर दिया, "बहिनो। मैं माता पार्वती नहीं हूँ। इतना गौरव मुझे क्या प्रदान कर रही हो ? मैं तो तुम्हारे ही जैसी हूँ।"

इतना कह कर निहालदे ने अपनी आप बीती इन चारो लडकियो को कह सुनाई।

निहालदे की राम कहानी सुन कर पण्डित की लडकिया ने कहा "हम अपने पिता की चार लडकिया है। हम तुम्हे भी अपनी धर्म की बहिन बना लेंगी। हम सब अभी अविवाहित हैं। उठो, पहले तो हम शिव की पूजा करें। भोलानाथ की पूजा कभी निष्फल नही जाती। पूजा से प्रसन्न होकर भगवान् शिव तुम्हारे पति को सुरक्षित रूप से जल के बाहर निकाल देंगे।"

इन शब्दो को सुन कर निहालदे बडी प्रसन्न हुई और कहने लगी, "मैंने भी शिव की पूजा का नियम ले रखा है। भगवान् आशुतोष की पूजा किये बिना मैं अन्न-जल ग्रहण नही करती।" इसलिए रानी निहालदे ने भी लडकिया के साथ जल म स्नान किया और फिर देवालय मे गई। देवालय में शिव को कलश स स्नान कराया और पाचो भगवान् शिव की स्तुति करने लगी।

स्तुति के अनन्तर लडकियो ने निहालदे से कहा, "बहिन। अब तुम भी हमारे साथ चलो।" निहालदे ने उत्तर दिया, "हमारा मिलाप अब पूरा हुआ। मैं तो यहा भगवान् शिव की शरण मे रह कर अपना जीवन बिताऊँगी। मैंने पर पुरुष का मुख न देखने का प्रण ले रखा है।"

इस पर लडकियो ने कहा, "हे जन बाला। हम तुम्हे यहां नही छोडेंगी। हमारे घर किसी बात की कमी नहीं। हमारे पिता तुम्हे पुत्री की तरह रखेंगे। उनके मन म

कोई भेद भाव नही है। वे तुम्हे हममे भी बढ़ कर मानेंगे। पर-पुरुष का मुख न देखने का जो प्रण तुमने ले रखा है, वह भी हम निभा देंगे। तुम्हारी इच्छा के अनुसार सब काम होगा। भगवान् शिव के देवालय मे हम तुम्हे वचन दे रही हैं और फिर हम भी तो वेदपाठी ब्राह्मण की लडकिया है। वचन देकर मुकर जाना हमारा कुल धर्म नही। हमारी बात पर तू विश्वास कर।"

पण्डित की लडकियो के वचन सुनकर निहालदे आश्वस्त हुई। उसने अपनी आखो के पट्टी बाँध ली और कहा, "मै तुम्हारे साथ चल रही हूँ किन्तु तुम मेरा यह प्रण निभा देना कि जब तक मेरे पतिदेव मुझे न मिलें, मै किसी पर पुरुष का मुँह न देखूँ।" निहालदे का हाथ पकड कर लडकिया उसे अपने घर ले गई। घर पर रानी की बडी आवभगत हुई। छत्तीसो प्रकार के व्यजन उसके लिए तैयार किये गये किन्तु जब वह भोजन करने बैठी तो उसे अपने पति का स्मरण हो आया और उसको आखो से टप टप आसू टपकने लगे और भोजन का थाल ज्यो का त्यो पडा रहा।

पण्डित की लडकियो ने कहा, "हे बहिन! जो भाग्य मे लिखा है, वह किसी के टाले नही टलता। तुम्हारे पतिदेव अवश्य ही सुरक्षित रूप से जल के बाहर निकल आये होगे और निश्चय ही भगवान् न कही न कही उनके भोजन की भी व्यवस्था की होगी। तुम यदि उनकी चिन्ता म घुलती रही तो उससे किसी अर्थ की सिद्धि नही होगी। तुम भगवान् शिव के भोग लगा कर भोजन करना प्रारम्भ करो।"

लडकिया के बहुत आग्रह करन पर रानी ने शिव के भोग लगाया और भोजन किया।

कुछ समय बाद लडकियो का पिता प० हुबेराम भी घर आ पहुँचा। पिता को आया हुआ देख कर लडकियो न उस निहालदे का पूरा समाचार कह सुनाया और बोली, "पिताजी! हमने इसे अपनी धर्म की बहिन बना लिया है।"

लडकियो की बात सुन कर हुबेराम बडा प्रसन्न हुआ और निहालदे स कहने लगा, "बेटी! मेरे ये चार लडकिया हैं। आज से मै तुम्हे अपनी धर्म पुत्री बनाता हूँ। यदि तुम्हारे पतिदेव कहीं मिल गये तो मै उनका पता लगाऊँगा। तुम यहा किसी भी प्रकार से दुखी न होना। इस घर को अपना घर समझना। इन चारो लडकिया से भी बढ कर मै तुम्हे मानूँगा।"

पण्डित के यहाँ खाने पीने की कोई कमी नहीं थी। निहालदे पण्डित की लडकिया के साथ रहने लगी। वहा रहते हुए वह मन लगाकर शिव की उपासना किया करती थी।

५५ सुलतान की सगाई

उधर काशी शहर का एक बनिया, जिसका नाम करोडीमल था, अपनी लडकी लिए वर तलाश म पत्ना शहर पहुँचा। किसी न उसे बता दिया कि सदर बाजार

झगेरीमल सेठ के लडके ने पान की एक दूकान कर रखी है। वह लडका सर्वथा योग्य है। करोडीमल झगेरीमल के यहां पहुँचा। झगेरीमल ने सेठ का बडा आदर-सत्कार किया और पत्रा शहर मे आने का कारण पूछा। करोडीमल ने सारा हाल कह सुनाया। सुलतान को देखकर वह बडा प्रसन्न हुआ और झगेरीमल से बोला कि यह लडका मुझे पूर्ण रूप से पसन्द है। सुलतान को जब इस बात का पता चला कि उसके विवाह का प्रबन्ध किया जा रहा है तो वह इन्कार कर गया किन्तु झगेरीमल के बहुत आग्रह करने पर सुलतान को अनिच्छा-पूर्वक अपनी स्वीकृति देनी पडी। तिलक की रस्म पूरी हुई। सुलतान को सोने का कंगन पहनाया गया। बहुत सी मोहर-अशर्फिया भेंट की गई।

५६. विवाह की तैयारी

इस प्रकार सुलतान की सगाई हो गई। सगे-सम्बन्धियो मे मिठाई बाटी गई। बडा हर्ष-चाव हुआ किन्तु सुलतान मन ही मन बडा उदास हो रहा था। कुछ समय बाद विवाह का लग्न स्थिर कर दिया गया। झगेरीमल के घर मे हर्ष की सरिता प्रवाहित होने लगी किन्तु ज्यो-ज्यो विवाह का लग्न निकट आ रहा था, सुलतान के मन की उदासी और भी बढ रही थी।

झगेरीमल ने सुलतान को उदास देख कर पूछा, "हे पुत्र। हर्ष के समय यह विषाद कैसा? तुम मुझे साफ-साफ इसका कारण बतलाओ।"

यह सुन कर सुलतान ने उत्तर दिया, मेरा जब अपनी रानी निहालदे से वियोग हुआ, तब मैंने उसे वचन दिया था कि यदि मैं कदाचित् जल मे से जीवित निकल आऊँ तो दूसरी स्त्री से कभी भी विवाह नही करूँगा। इसी प्रकार निहालदे ने कौल-करार किया था कि यदि मैं जीवित निकल आई तो किसी पर-पुरुष का मस्तक नही देखूँगी। अपने विवाह की इस साज-सज्जा को देख कर मुझे अपने वचनो का स्मरण हो रहा है। पता नही, निहालदे कहाँ किस अवस्था मे है? जीवित भी है या नही? यही मेरे दुःख का कारण है। इसलिए हे पिताजी। आप मेरा कहना मान कर मेरा विवाह न करें। जब तक अन्न-जल है, मैं आपको छोडकर अन्यत्र कही नही जाऊँगा।"

सुलतान के इन शब्दो को सुन कर झगेरीमल ने कहा, "निहालदे या तो जल मे डूब गई होगी अथवा किसी जानवर ने उसको खा डाला होगा। वचन का निर्वाह तो किसी जीवित व्यक्ति के साथ ही होता है, मरने के बाद किससे कैसा सम्बन्ध? इसलिए हे पुत्र। निहालदे को भूल जा और अपना विवाह करवाने मे किसी भी प्रकार की आनाकानी न कर।"

परिस्थितिवश सुलतान झगेरीमल के कहने को टाल नही सका। इसलिए बडे ठाट-बाट के साथ विवाह की तैयारियां होने लगी। सुलतान का बान बैठा। हाथ पैरों मे कगन डोरे बाधे गये। हाथो मे मेंहदी लगाई गई। सारे शहर को विवाह के उपलक्ष्य मे भोजन करवाया गया।

पर से पट्टी क्या उठाई गई, निहालदे के लिये एक अलौकिक भाव-लोक का द्वार खुल गया। उसने उल्लमित होकर ब्राह्मण की लडकियो से कहा, "हे पडित-बालाम्रो! मैं तुम पर बलि-बलि जाती हू। आज मुँहमागा मैं तुम्हे देने के लिए तैयार हूँ। आज मै सारे ससार की सपदा लुटाने के लिए आतुर हूँ। यह वर तो और कोई नहीं, मेरा ही पति सुलतान है। भला हो तुम्हारा जो तुमने मेरे बिछुडे हुए पति को मुझसे मिला दिया।"

पडित की लडकियो को निहालदे की बातो पर विश्वास नही हुआ। उन्होने निहालदे से कहा, "जान पडता है इस वर को देख कर तुम्हारा 'सत' विचलित हो गया है। आज हमें इस रहस्य का पता चला कि तुमने व्यर्थ ही आंखो पर पट्टी बाँध रखी थी और झूठ-मूठ ही तुमने 'नेम' का आडम्बर रच रखा था। लेकिन इसमे तुम्हारा भी कोई दोष नहीं, इस वर का प्रभाव ही ऐसा है। इस वर के सर्वातिशायी सौंदर्य को देखकर अनेक सतियो का 'सत' पहले ही डिग चुका है। स्त्री, पुरुष कोई भी हो, जिसने भी इस वर को एक बार जी भर कर देख लिया, वह इस पर मुग्ध हुए बिना न रहा।"

यह सुनकर रानी निहालदे ने कहा, "बहिनो! मै रत्ती भर भी झूठ नही बोलती। तुम किसी प्रकार इस चलते हुए हाथी को एक बार रुकवा दो। गाजे बाजे के साथ वर का जुलूस आगे बढ रहा है। इसलिए यदि मै आवाज लगाऊँगी तो उस आवाज को कोई सुनेगा नहीं।"

इस पर पंडित की लडकियो ने कहा, "हे समुद्रवाले! चलते हुए हाथी को हम कैसे रुकवा दें? यह हमारे वश की बात नही।" तब निहालदे ने कहा, "अगर आज इस वर ने बनिये के यहाँ जाकर तोरण मारा तो इसका क्षत्रियत्व कलकित होगा। तुम इस वर पर हीरे पन्ना का थाल बरसा दो—तब सभव है, चलता हुआ हाथी भी रुक जाय।"

निहालदे के कथनानुसार पडित की लडकियो ने हाथी पर हीरे-पन्नो के थाल की वर्षा की किंतु चलता हुआ हाथी फिर भी नही रुका। जुलूस के साथ चलने वाले लोग हीरे-पन्नो को बटोरने लगे।

इस पर पडित की लडकिया ने कहा, "बहिन! जान पडता है तुम झूठ बोल रही हो। तुमने जैसा कहा, हमने कर दिया किंतु फिर भी चलता हुआ हाथी रुका नही।"

इन शब्दो को सुन कर निहालदे के तन बदन म आग लग गई किंतु बिना कुछ कहे उसने एक खाली कागज हाथ मे लिया और उसमे अपने पति के नाम परवाना लिखने लगी कि पतिदेव! आपने प्रण किया था कि यदि मैं जीवित जल से बाहर निकल आया तो दुबारा विवाह नही करूँगा। आज आप प्रण भग कर किस प्रकार बनिये के यहां मौड बाध कर तोरण मारने चले हैं? क्या ऐसा करने मे आपके क्षत्रियत्व को दाग नही लगेगा?

निहालदे ने सुलतान की तरफ परवाना फेंका किंतु हवा की फटकार से परवाना वहाँ तक पहुँचा नहीं।

इस पर रानी बडी दुःखी हुई और करुण-क्रन्दन करने लगी।

निहालदे को दुःखी देख कर पंडित की चारो लडकियाँ कहने लगी, "हे समुद्र-बाले ! जान पडता है, तू पगली हो गई है । भला, तुम्हारा पति वर का रूप धारण करके यहाँ काशी मे क्यो आने लगा ? हो सकता है, इस वर की आकृति और तुम्हारे पति की आकृति मे साम्य हो ।"

निहालदे ने पडित की लडकियो की बातो पर कोई ध्यान नही दिया और मन ही मन सोचने लगी, "गया वक्त कभी हाथ नही आता । यदि आज मैं अवसर चूक गई तो मुझे जन्म भर पश्चात्ताप करना पडेगा ।" इसलिए वह शीघ्र ही आगे की अट्टालिका पर पहुँची । जब हाथी उस अट्टालिका के नीचे से गुजरने लगा, रानी ने अपने हाथ की मुँदडी सुलतान की तरफ फेंकी । मुँदडी सुलतान की गोद मे जा पडी । मुँदडी को पहचानते ही जब सुलतान ने अपनी आँखें ऊपर की ओर उठाई तो उसे मयराजा की लाडली निहालदे अट्टालिका मे खडी हुई दिखलाई दी । निहालदे को देख कर सुलतान अत्यन्त प्रसन्न हुआ और पलक मारते ही सबके देखते-देखते हाथी पर से कूद पडा और उस अट्टालिका की ओर बढा जिस पर निहालदे खडी थी । सुलतान को हाथी पर से कूदता देख कर झंगेरीमल सेठ भी उसके पीछे-पीछे हो लिया और कहने लगा, "काशी की स्त्रियाँ कामनगारी होती हैं । मेरे पुत्र पर भी इस शहर की किसी कामिनी ने जादू कर दिया है ।" झगेरीमल को इस प्रकार भागते देख कर बरात के अन्य लोग भी पीछे-पीछे भगे । वे जानना चाहते थे कि आखिर यह माजरा क्या है ? सारे शहर मे कोहराम मच गया । बाजे बजने से रह गये ।

बरात के लोग झगेरीमल के पीछे-पीछे पडित के घर मे घुसने लगे । पंडित का घर बरातियो से पूरी तरह भर गया । यह देख कर सभी लोग आश्चर्यचकित हो रहे थे । शोरगुल को देखकर हुबेराम पडित वहाँ पहुँचा और उसने सारी भीड को घर से बाहर किया । काशी के पचो ने जब हुबेराम पंडित से भीड इकट्ठी होने का कारण पूछा तो उसने अथ से इति पर्यन्त सारा हाल कह सुनाया । उधर पचो ने झगेरीमल को बुला कर इस विवाह के सम्बन्ध मे पूरी जानकारी चाही । झंगेरीमल ने भी पचो के सामने सब बातें सच-सच कह दीं । सबके अन्त मे पचो ने बली सुलतान से सारा रहस्य जानना चाहा । बली सुलतान ने भी अपने विगत जीवन की सब घटनाएँ खोल कर सामने रख दी ।

सब की बातें सुन कर पचो ने कहा, "यह बडे हर्ष की बात है कि अपना-अपना वृत्तान्त कहने मे सबने सत्य का आश्रय लिया है । पंचो की दृष्टि मे तो सब बराबर होते हैं । उनका तो एक-मात्र ध्येय न्याय करना होता है ।"

इस पर झगेरीमल ने पचो से कहा, "मुझे अपने भाईचारे मे से एक लडका गोद ले लेने दें । जिसे मैं पसन्द करूँ, उसे ही वर का बाना धारण करवा दिया जाय ताकि इस वैवाहिक आयोजन मे किसी प्रकार का विघ्न न पड़े ।"

पचो ने झगेरीमल के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया । झगेरीमल ने एक लडका पसन्द कर लिया और उसे वर की पोशाक पहना दी । सुलतान को अन्य सुन्दर परिधान से सुसज्जित कर दिया गया ।

झगेरीमल ने सुलतान से कहा, "हे मेरे धर्म के पुत्र ! इस विवाह में तुम मेरे सा
रहो। विवाह के बाद भले ही तुम अपने देश को चले जाना। मेरा और तुम्हारा इतने ह
दिनों का सयोग था। विधि के विधान के आगे किसी का वश नही चलता।"

झगेरीमल के शब्दो को सुनकर सुलतान प्रसन्न हुआ और उसने विवाह की अव
तक रहना स्वीकार कर लिया।

झगेरीमल के गोद के लिये हुए लडके को हाथी पर बिठला दिया गया। उसके सि
पर मुकुट बाँध दिया गया। सिर पर छत्र तान दिया गया और चँवर डुलाया जाने लगा
यथासमय तोरण मारने की प्रथा सम्पन्न हुई और बडे-हर्ष चाव और उत्साह से वैवाहि
कृत्य समाप्त हुए।

बरात मे भी जिस किसी ने वली सुलतान को देखा, वह उसके असाधारण व्यक्ति
से प्रभावित हुआ। किसी ने कहा, "यह राजा का पुत्र है।" किसी ने कहा, "यह क
अवतारी पुरुष है, जिसके चरण मे पदम सुशोभित है और मस्तक पर मणि दीप्त हो र
है।" रात्रि के समय भी मणिधारी सुलतान ऐसा जान पडता था मानो कोई दूसरा
उदित हो गया हो। उसकी मणि के प्रकाश मे अंधकार तो सामने ठहरता ही नहीं था।

इस विवाह के बाद सुलतान और निहालदे का हबेराम (अभयराम) पडित के
मिलन हुआ। उधर सुलतान का दरियाई घोडा भी उसे काशी मे मिल गया था।

५६ कोचलगढ के बाग मे प्रवेश

हबेराम से विदा लेकर सुलतान और निहालदे काशी से अपने देश के लिए रवा
हुए। चलते चलते व कोचलगढ के बाग के समीप आ पहुँचे। देश निकाले की अवधि पूरी ह
में केवल ७ दिन बाकी रह गये थे।

सुलतान ने निहालदे से कहा, 'रानी ! देश निकाले के इन अवशिष्ट सात दिनो
यही बाग म काटेंगे तथा एक सप्ताह बाद अवधि पूरी होने पर नगर मे प्रवेश करेंगे।"

इतना कह कर सुलतान निहालदे-सहित मालिन के पास पहुँचा, जो बाग
रखवाली कर रही थी और बोला, "हे मालिन ! यह किस राजा का बाग है और कौन
राजा यहाँ राज्य करता है? मैं दक्षिण देश का सौदागर हूँ और यहाँ व्यापार के लिए आ
हूँ। तू जरा बाग का दरवाजा खोल दे, चार घडी हम लोग यहाँ विश्राम करेंगे।"

सुलतान के शब्दो को सुन कर मालिन कहने लगी, 'हे सौदागर ! यह मैणपाल
बाग बगीचा है और इस गढ पर उसी का शासन है। मैं उसी राजा की मालिन हूँ और
की रखवाली के लिए तैनात की गई हूँ। मुझे बाग के दरवाजे को खोलने का हुक्म नहीं है
मैणपाल के कुँवर को देश निकाला दे दिया गया है। अवधि पूरी होने पर वही इस
दरवाजे को खोलेगा।"

सुलतान ने कहा, "मालिन ! मैं दूर देश से चलकर यहाँ आया हूँ । मेरी पत्नी भी बहुत थक गई है । तुम्हारी बख्शीस के रूप मे २५ अशर्फियाँ तुम्हे दे रहा हूँ ।"

२५ अशर्फियाँ मिलते ही मालिन ने दरवाजा खोल दिया और सुलतान ने निहालदे-सहित बाग मे प्रविष्ट होकर बाग के अन्दर से ताला बंद करवा दिया ।

सुलतान ने केवल चार घडी बाग में ठहरने के लिए कहा था, किन्तु जब अब अधिक समय बीतने पर भी सुलतान ने बाग खाली नही किया तो मालिन बहुत घबराई और कहने लगी, "हे सौदागर ! मुझे इस बाग की रखवाली करते हुए १२ वर्ष व्यतीत हो गये है । राजा मैंणपाल ने मुझे तीन तलाक दिला दी थी कि मैं किसी के लिए बाग का दरवाजा न खोलूँ, किन्तु इन २५ अशर्फियो के कारण मेरा राम निकल गया जिससे मैंने दरवाजा खोल दिया । अब अपने भविष्य की कल्पना करके मैं मन ही मन बहुत चिन्तित और आशंकित हो रही हूँ । इन २५ अशर्फियो के लिए मैंने अपनी 'लखीणी'[1] जान जोखिम मे डाल दी । यदि राजा को पता चल गया तो मै कही की न रहूँगी—वह निश्चय ही मेरे प्राणो का ग्राहक बन जायगा । हे सौदागर ! तुमने जो अवधि माँगी थी, वह व्यतीत हो चुकी है । अब तुम बाग से बाहर निकल कर अपने पथ के पथिक बनो, अन्यथा मै राजा मैंणपाल को खबर कर दूँगी । तुम मेरा कहना मान कर बाग से बाहर आ जाओ ।"

मालिन के इन शब्दो पर सुलतान ने कोई ध्यान नही दिया । वह अपने बाग में आनन्द मनाने लगा । उसने अपनी रानी से कहा, "अब हमे यहाँ किसी का धडका नही, सात दिन तक हम यहाँ बेखटके रहेगे और सात दिन के बाद माता-पिता का दर्शन कर लेंगे । यदि अवधि बीतने के पहले हमने राज्य मे प्रवेश किया तो पिता मुझे फिर देश-निकाला दे सकता है ।"

सुलतान इस प्रकार कह ही रहा था कि मालिन ने अपने सिर पर से चुनडी उतारी और बेजार होकर रोती हुई कहने लगी, 'अरे सौदागर ! तू ने बुरा किया जो तेरे कारण मेरा रोजगार चला गया ।"

मालिन ने एक छडी तोडी और उससे अपने ही बदन पर प्रहार करने लगी ।

मालिन को ऐसा करते हुए देख कर निहालदे ने कहा, "हे पति देव ! यह मालिन जाकर आपके पिता के पास फरियाद करेगी जिससे वे आक्रमण करने के लिए यहाँ बाग की ओर आयेंगे । कृपा कर बतलाइए उस हालत मे आप क्या करेंगे ?"

रानी के शब्दों को सुन कर सुलतान कहने लगा, "हे रानी ! तू बेखटके रह । बाबा गोरखनाथ सब भला करेंगे ।"

६०. मालिन की फरियाद

उधर मालिन कोई चारा न देख कर कोचनगढ पहुँची और मैंणपाल की कचहरी मे जाकर कहने लगी, "दक्षिण देश का एक सौदागर आया और उसने मुझे बाग का

१. लाखो रुपए की (बहुमूल्य)

दरवाजा खोलने के लिए कहा। मैंने उससे निवेदन किया कि राजकुँवर ही देश निकाले से लौट कर इस द्वार को खोल सकेगा। इस पर उसे क्रोध आ गया। उसने मेरे गोरे गात पर कस-कस कर छड़ी से प्रहार किया। चाबी मुझसे छीन ली और झट द्वार खोल लिया। उसके साथ एक रानी और दरियाई घोड़ा है। भीतर से उसने बाग का दरवाजा बन्द कर रखा है।"

मालिन के इन शब्दों को सुन कर मैंणपाल ने अपने सरदारों से कहा, "ऐसा कौन सौदागर है जो मेरी आन नहीं मानता? उसे उसकी करनी का फल चखाऊँगा। १२ तोपें चढ़ा कर शीघ्र ही बाग में चलो। मेरे पिता चकवे वंश की आन तो जानवर तक मानते थे, आदम देह का तो कहना ही क्या? मर्यादा का अतिक्रमण कर इस सौदागर ने बड़े दुःसाहस का काम किया है। घोड़ों पर जीन कसो, कमर पर हथियार बाँधो और बाग के चारों ओर घेरा डाल दो। कहीं ऐसा न हो कि वह सौदागर किसी तरह भाग कर निकल जाय।"

६१. राजा मैंनपाल का बाग की ओर प्रयाण

सौदागर पर आक्रमण की तैयारियाँ होने लगी। बात की बात में १२ हजार फौज इकट्ठी हो गई। सैनिक घोड़ों पर सवार हुए। घोड़ों की बागडोर ढीली कर दी गई। मैंनपाल हाथी के हौदे पर बैठा। कीचलगढ से बाग की दूरी लगभग ७ मील थी। फौज चल कर बाग के पास पहुँची और बाग के चारों ओर घेरा डाल दिया गया।

उधर सुलतान गोरख का स्मरण करके कहने लगा, "धोखे ही धोखे में मेरा पिता आक्रमण के लिए आ गया है। हे सतगुरु! मेरी लज्जा रखना। देश निकाले की अवधि पूरी होने में अब केवल ७ दिन बाकी रह गये हैं। मेरी रक्षा का समस्त भार आप पर है।"

शिष्य को संकट में पड़ा जान गोरखनाथ आकाश मार्ग से चल कर शीघ्र सुलतान के पास पहुँचे। सुलतान तथा निहालदे दोनों बाबा के चरणों में गिर पड़े। गोरख ने अपना वरद हस्त दोनों के सिर पर रखते हुए कहा, "हे शिष्य! मैं तुम्हारे पास खड़ा हूँ, तुम्हें किसी भी प्रकार घबराने की आवश्यकता नहीं।"

गुरु के शब्दों को सुन कर सुलतान और निहालदे ने कहा, "धन्य भाग्य, धन्य घड़ी जो इस संकट में आपने दर्शन दिया। अब हम किसी प्रकार की चिन्ता नहीं।"

इधर तोपों पर बत्ती डाल दी गई किन्तु जब तोपें चली नहीं तो राजा को भी बड़ा भारी आश्चर्य हुआ। राजा मैंनपाल बाग के दरवाजे के पास पहुँच कर कहने लगा, "हे सौदागर! तू बड़ा करामाती जान पड़ता है। तोपों पर बत्ती डलवाने पर भी आज मेरी तोपों ने जवाब दे दिया है। जान पड़ता है, मेरी भवितव्यता आ पहुँची है। तू मेरा सि उतार ले और कीचलगढ का राज्य अपने हाथ में ले ले।"

राजा मैंनपाल के इन शब्दों को सुन कर सुलतान ने कहा, "हे राजन! मुझे ऐस

वैसा सौदागर न समझना। मैं तो तुम्हारे पुत्र का परवाना लाया हूँ जिसे तुमने १२ वर्ष का देश निकाला दे दिया था।"

इतना सुनते ही राजा ने कहा, "मेरे पुत्र का परवाना शीघ्र ही मुझे सौंप दे जिससे मेरे कलेजे में ठण्डक पहुँचे। बहुत वर्ष हो गये, मैंने अपने प्रिय पुत्र को न तो कभी देखा और न उसका कोई समाचार ही सुना।"

यह सुन कर सुलतान ने कहा, "राजन्। आपने किस कारण अपने पुत्र को देश-निकाला दे दिया था, वह सारा हाल मुझे विस्तारपूर्वक कहिए।"

राजा मैनपाल ने सुलतान की जन्म से कथा कहानी प्रारम्भ की। जब मैनपाल जन्म की कथा सुना चुका तो उसने कहा कि अब मुझे अपने पुत्र का परवाना दे। सुलतान ने कहा, "मैं परवाना कहीं लेकर नहीं जाऊँगा किन्तु जब तक आप मुझे सुलतान की पूरी कथा नहीं सुना देंगे तब तक मैं आपको परवाना नहीं दूँगा।"

मैनपाल ने फिर क्रमशः आगे की कथा सुनाना प्रारम्भ किया। सुलतान तो चाहता था कि कथा सुनाते-सुनाते वह अवधि के शेष दिनों को किसी प्रकार पूरा कर दे।

इधर मैनपाल की कथा समाप्त हुई और उधर देश निकाले की अवधि के अवशिष्ट दिन भी पूरे हो गये।

६२ पिता-पुत्रादि का मिलन

सुलतान ने देश निकाले का आज्ञा-पत्र अपने पिता मैनपाल को सौंप दिया और आप उसके चरणों में गिर पड़ा। पिता ने १२ वर्ष के बिछुड़े हुए अपने पुत्र को छाती से लगाया। राजा के नेत्रों में सावन की बदली ने घर कर लिया। प्रेम का समुद्र उच्छलित होकर प्रवाहित होने लगा। राजा के हर्ष का आज कोई पारावार नहीं था।

मैनपाल के यहाँ उत्सव मनाया जाने लगा। गायनवादन होने लगे। हलकारे को चौगड़ भेज कर घोषणा करवा दी गई कि राजा का कुँवर बली सुलतान अपने देश-निकाल के १२ वर्षों को काट कर सकुशल आ पहुँचा है।

सारा शहर हर्ष के समुद्र में हिलोरें लेने लगा। राजकुँवर के आगमन के उपलक्ष्य में ५२ तोपें चलाई गईं। अन्तःपुर में खबर पहुँची तो सुलतान की माता भी हर्ष से फूली न समाई।

पालकी में बैठ कर दासी को साथ ले सुलतान की माता भी अपने पुत्र से मिलने के लिए बाग में पहुँची। माता को देखते ही सुलतान ने उसके चरणों में 'धोक'[1] खाई। माता ने पुत्र को छाती से लगा कर कहा, "हे मेरे लाडले। इतने वर्षों तक तुम कहाँ रहे? १२ वर्ष के बाद, हे पुत्र! तूने आज अपनी सूरत दिखलाई है। इतने वर्षों तक न जाने कितने

१ प्रणाम किया।

कष्ट तुमने सहे होंगे ? हे पुत्र ! जान पडता है, मेरे लिए विधाता ने सुख की सृष्टि ही नहीं की थी।"

फिर निहालदे ने अपनी सास के चरण दबाना प्रारम्भ किया। सास ने आशीर्वाद देते हुए कहा, "तू पुत्रवती हो और तेरा सौभाग्य अमर हो।"

सभी रानियां निहालदे के मुख को देखने लगी। ऐसा जान पडता था मानों घूंघट मे सूर्योदय हो गया हो। पद्मिनी स्त्री का केवल नाम ही नाम सुना था। आज सभी रानियो को लगा कि निहालदे के रूप मे उन्होने सभी गुणो से अलकृत पद्मिनी स्त्री के दर्शन किये है।

राजा मैनपाल और उनकी रानी ने पुत्र मिलन के उपलक्ष्य मे बडी खुशियां मनाई। फौज मे मिठाई बाँटी गई। सुलतान ने अपने देशाटन के वस्त्र उतार दिये। जरी की नई पोशाक उस पहनाई गई। कटि प्रदेश पर बाका कटारा सजाया गया। कन्धे पर बन्दूक सुशोभित हुई। सिर पर पचरग साफा बाधा गया। सजे हुए सुलतान का सौंदर्य सबको मात करने लगा। देव और गन्धर्वों मे भी ऐसा सुन्दर व्यक्ति शायद ही कभी हुआ हो। छत्तीसों जाति के लोग एकत्रित हुए। खैरात म हीरे-पन्ने उछाले जाने लगे। कुंवर पर हीरे पन्ने न्यौछावर किये जाने लगे।

सुलतान का बहुत बडा जुलूस निकला। आगे आगे सुलतान का हाथी झूमता हुआ चला। पीछे-पीछे सुलतान के साथ जुलूस आगे बढ रहा था। मैनपाल के हाथी के पीछे रानियां पालकियो मे सवार थी। उनके पीछे घुडसवार चल रहे थे।

जुलूस जब कौचलगढ के बाजार मे से होकर गुजरा तो शहर के साहूकारो ने सुलतान पर हीरे मोती बरसाये। जुलूस चल कर किले पर पहुँचा। रानियो की पालकिया अन्त पुर की ओर रवाना हो गई।

६३. राज्याभिषेक

मैनपाल ने छत्तीसो जाति के लोगो को सम्बोधित करते हुए कहा, "मेरा कुंवर देश निकाले के वर्षों को पूरा करके कौचलगढ लौट आया है। उसकी अवस्था अब २४ वर्ष की हो गई है। मेरी इच्छा है कि मैं अपने कुंवर को युवराज पद प्रतिष्ठित कर दूं।"

यह सुन कर सभी ने एक स्वर म कहा, "महाराज ! इससे अधिक खुशी की बात क्या हो सकती है कि आप अपने जीते जी कुंवर का राज्याभिषेक कर दें।"

राजा मैनपाल ने राज सिंहासन सजवाया, चमेली और केवडे का इत्र छिडकवाया गया। मखमल की गद्दिया लगवाई गई। बली सुलतान को हाथी स उतार कर राज सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर दिया गया। कौचलगढ के बडे बडे पण्डित राज्याभिषेक के

रानी निहालदे सुलतान के गले में वरमाला डालते हुए

अवसर पर उपस्थित हुए। राजधर्म सम्बन्धी मन्त्रों का उच्चारण होने लगा। पण्डितों ने सुलतान के तिलक किया और उनको प्रचुर दक्षिणा प्राप्त हुई। पण्डितों ने आशीर्वाद देते हुए कहा, "चक्रवेण की तरह तुम भी यशस्वी बनना, प्रजा को सुखी रखना, अच्छी परम्पराओं का निर्वाह करना तथा सत्य और न्याय की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व अर्पित कर देना।"

बनी सुलतान ने उत्तर दिया, "आप भगवान् से प्रार्थना करें कि मैं अपने आपको इस योग्य बना सकूँ और आपकी आशाओं-आकांक्षाओं को मूर्त रूप दे सकूँ।"

इसके बाद बड़े-बड़े साहूकारों ने सुलतान के तिलक किया और भेंट अर्पित की। बड़े साज-बाज, ठाठ-बाट और गायन-वादन के साथ सुलतान के राज्याभिषेक का कार्य सम्पन्न हुआ।

राजा बनने के बाद सुलतान ने अपने कर्तव्य का पूरी तरह से पालन किया। सभी उसके न्याय-इन्साफ की प्रशंसा करने लगे। उसने शहर में अनेक बाग बगीचे लगवाये, सड़कें बनवाईं, कुएँ और बावड़ियां खुदवाईं। उसके राज्य में प्रजा को किसी भी प्रकार का कोई कष्ट नहीं था। प्रकृति-रंजक होने के कारण सुलतान ने अपने 'राजा' नाम को सर्वथा सार्थक किया।

राजा मैनपाल भी अपने पुत्र की प्रजा-हितैषिता को देख कर मन ही मन आनन्द में फूला नहीं समाता था। समस्त प्रजा भी भगवान् से यही प्रार्थना करती थी कि कीचलगढ़ में बनी सुलतान युग-युग तक राज्य करता रहे और अश्वत्थामा आदि की तरह उसे अमरत्व प्राप्त हो जाय।

●●

(प्रथम खण्ड समाप्त)

२

निहालदे सुलतान

६४. भात न्योतने का प्रसग

राज्याभिषेक के बाद सुलतान को कीचलगढ मे रहते हुए काफी समय हो गया। उधर मारू ने, जिसे सुलतान ने अपनी धर्म-बहिन बना लिया था, भात न्योतने का निश्चय किया। मारू ने अपने पति ढोलसिह से कहा कि मैं अपने धर्म के भाई सुलतान के यहाँ भात न्योतने के लिए जाऊँगी। ढोलसिह ने उत्तर दिया, ' रानी ! सुलतान कोई बडा गढपति नही, कभी मैंने उसका गढ देखा नही। १२ हजार फौज साथ जायगी, उसका खर्च क्या उससे बर्दाश्त हो सकेगा ? हमारे यहा चाकरी करके वह अपने विपत्ति के दिना को काट कर अपने देश चला गया है। मैं बडे गढ का अधिपति हूँ। हम लोगो का वहाँ जाना क्या शोभा देगा ?"

ढोलसिह के इन शब्दो को सुनकर मारू को बडी निराशा हुई किन्तु उसने हिम्मत धारण करके कहा, "पतिदेव ! आप मेरे धम भाई सुलतान को कोई ऐसा-वैसा गढाधीश न समझें। वह कीचलगढ का अधिपति है। वहाँ उसका राज्याभिषेक हो गया है। १२ कोस की परिधि म उसका खैराती बाजार लगता है। हीरे-पन्नो का बाजार लगवाकर वह सायकाल उन्हें लुटवा देता है। वह ५२ गढा का गढपति और ५६ किलो का सरदार है। नरवलगढ जैसे गढ तो उसके पास अनेक हैं। रही यह बात कि वह अपने विपत्ति के दिनो को यहा चाकरी करके बिता गया वह अवश्य सच है, किन्तु विपत्ति किसी के वश की नहीं। विपत्ति के दिनो को पाडवा ने विराट् राजा के यहा बिताया था, हरिश्चन्द्र ने श्मशान मे पहरा देकर अपनी विपत्ति के दिन काटे थे, नल दमयन्ती पर जो विपत्ति पडी उसे भी आप जानते ही हैं। इसलिए बली सुलतान पर भी विपत्ति पडी तो इसमे आश्चर्य करने की कोई बात नही।"

इस पर ढोलसिह ने उत्तर दिया, "हे रानी ! यदि ऐसी बात है तो मैं अवश्य तेरे साथ कीचलगढ चलूँगा। किन्तु मेरी एक शर्त तुझे माननी होगी। यदि कीचलगढ मे खैराती बाजार न मिला तो मैं तेरा सिर धड से अलग कर दूँगा।"

मारू ने उसी क्षण उत्तर दिया, "हे पतिदेव ! यह शर्त मैं सहर्ष स्वीकार करता हूँ। यदि कीचलगढ म हीरे-पन्ना का खैराती बाजार न मिला तो आप अवश्य मेरा शीश धड से अलग कर दें।"

६५ कीचलगढ की ओर प्रयाण

मारू के इन शब्दो को सुनकर ढोलसिह चलने के लिए तैयार हो गया। १२ हजार फौज को सुसज्जित होकर प्रयाण करने का हुक्म दे दिया गया। उधर मारू ने दासी को

डोली सजाने की आज्ञा दी। रानी ने साज-शृंगार करना प्रारम्भ किया। गले में नौलखा हार पहना, बाजूबंद धारण किया, मांग मोतियों से भरी, माथे पर बिन्दी लगाई। तात्पर्य यह है कि उसने १६ शृङ्गार करके बत्तीसों आभूषण धारण किये। सिर पर लाल रंग का स्याल धारण किया तथा गुजरात का लहंगा पहना। इस प्रकार सजधज कर मारू डोली में बैठी और साथ में उसने दासियों को ले लिया।

ढोलसिंह के साथ १२ हजार सैनिकों की फौज चली। सुसज्जित हाथी-घोड़े साथ-साथ चल रहे थे। साथ में तोपें भी ले ली। गाजे बाजे के साथ ढोलसिंह हाथी के हौदे पर सवार हुआ। बड़े बड़े सरदार साथ में थे।

भात न्यौतने के लिए जब मारू की सवारी चली तो उसे बहुत अच्छे शकुन हुए। कोचरी दाईं तरफ बोलने लगी और खर बोलने लगे बाईं तरफ।

कई दिनों की यात्रा के बाद यह जुलूस कोचलगढ की सीमा के पास जा पहुँचा। ढोलसिंह ने कहा, "हे रानी! तुम कहो तो सीधे कोचलगढ चलें अथवा हम कुछ समय के लिए यहीं सीमा पर ही डेरा डाल दें।"

मारू ने उत्तर दिया, "हे पतिदेव! आज के लिए तो यहीं सीमा पर ही डेरा डालना अच्छा रहेगा। यहां पानी का भी पूरा आराम हम लोगों को मिलेगा।"

मारू की बात मानकर ढोलसिंह ने फौज को विश्राम करने के लिए हुक्म दे दिया। कोचलगढ की सीमा के पास तम्बू गाड़ दिये गये। पानी की सब प्रकार की सुविधा देख कर ढोलसिंह मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ। दूसरे दिन प्रातःकाल होने पर सब लोग नित्य कृत्य से निवृत्त हुए और दातुन-कुल्ला करने लगे। ढोलसिंह महाराज भी अपने नित्य-नैमित्तिक कार्यों में संलग्न थे। उधर मारू ने भी स्नान करने के बाद जल का लोटा हाथ में लेकर सूर्यदेव से प्रार्थना की, "हे भगवन्! मेरी लज्जा आपके हाथ है। सतियों के सत की रक्षा करने वाले आप ही हैं।"

६६. सुलतान के नाम मारू का परवाना

इसके बाद मारू ने भिक्षुकों को पन्ने-जवाहिरात दान में दिये। फिर मारू ने अपने भाई सुलतान के नाम परवाना लिखना प्रारम्भ किया। बन्दगी और जय हरिनाम से परवाने का प्रारंभ हुआ। लिखते-लिखते मारू के नेत्र डबडबा आये। मारू ने लिखा, "हे भाई! तुम्हारे यहां भात न्यौतने आ गई हूँ, ढोलसिंह महाराज भी साथ में हैं। किन्तु नरवलगढ से रवाना होने के पहले ढोलसिंह ने मुझे कहा कि सुलतान के यहां मैं क्या चलूँ, उसका कोई ठौर-ठिकाना नहीं, उसने विपत्ति के दिन हमारे यहां चाकरी करके काटे, वह तुम्हें भूख से मरी हो धर्म की बहिन बना कर चला गया है। इस पर मैंने उत्तर दिया कि मेरे भाई को आप कम न समझें, वह ५२ गढ़ों का अधिपति है और ५६ किलों का सरदार है। चकवें बेण के राजसिंहासन की कोई तुलना नहीं। हीरे-पन्ना का वहां व्यवहार होता है। सच्चे मोतियों का वहां बाजार लगता है और मोती खैरात में बांट दिये जाते हैं। मेरे इन शब्दों को सुन

कर ढोलसिंह ने उत्तर मे कहा था कि अगर कीचनगढ मे हीरे-पन्नो का बाजार नही मिलेगा तो मैं तुम्हारा सिर धड से अलग कर दूगा। मैंने ढोलसिंह की इस शर्त को स्वीकार कर लिया। तभी वे मेरे साथ आये हैं। अब हे भाई! मेरे वचनो की रक्षा करना तुम्हारे हाथ है। जब तक कीचलगढ मे तुम हीरे-पन्नो का बाजार नहीं लगा दोगे, तब तक मैं नगर मे प्रवेश नही करूँगी। यदि तुमसे यह न हो सका तो मैं कटारी खाकर प्राण त्याग कर दूँगी। हे भाई! मेरे इस परवाने को पढ कर शीघ्र ही मेरी खबर लेना और ऐसा प्रयत्न करना जिससे सती के वचन झूठे न हो।" मारू ने परवाना लिख कर हलकारे को दे दिया। हलकारा परवाना लेकर कीचलगढ पहुँचा। उसने एक दरवान को परवाना देकर कहा कि यह परवाना सुलतान के पास सुरक्षित रूप से पहुँचा दिया जाय। दरवान ने परवाना ले जाकर सुलतान को दे दिया। सुलतान ने ज्यो ही परवाना खोल कर पढा, वह दग रह गया। उसने हलकारे को १० अशर्फियाँ दी और उसके खान-पान की व्यवस्था करवा दी। इसके बाद सुलतान ने प्रत्युत्तर के रूप म मारू को निम्नलिखित परवाना लिखा।

६७ सुलतान का उत्तर

"हे बहिन! तू मेरे यहाँ जो भात न्योतने आई, यह तो बहुत बडा काम किया। तेरे शुभागमन को मै सिर माथे लेता हू किन्तु हीरे-पन्ना के बाजार की जो शर्त तुमने ढोल-कुँवर से करली है, उसके कारण मैं बडे असमजस मे पड गया हूँ। किन्तु फिर भी हीरे-पन्नो के बाजार की व्यवस्था करने का पूर्ण प्रयत्न मैं करूँगा। भगवान कुदरतीनाथ मेरी रक्षा करेंगे। फिर भी मेरी एक प्रार्थना तुमसे है। जब तक मैं हलकारा न भेजूँ, तुम ढोलसिंह को लेकर कीचलगढ न आना और न कटारी खाकर आत्म-हत्या ही करना। जब कीचलगढ म हीरे पन्नो का बाजार लग जायगा, मैं तुम्हे बुलवा लूँगा। जो कुछ मैंने लिखा है, उसे गोपनीय रखना और मेरी बात को अन्यथा न समझना।"

परवाना लिख कर सुलतान ने हलकारे को दे दिया और कहा कि यह परवाना मारू के अतिरिक्त और किसी के हाथ म न पडे। हलकारा परवाना लकर मारू के तंबू के पास पहुँचा। मारू तो बडी उत्सुकतापूर्वक पहले से ही सुलतान के उत्तर की प्रतीक्षा कर रही थी। जब उसने परवाना खोल कर पढा तो उसके दिल पर उदासी छा गई और खाना-पीना भी उसका हराम हो गया। उसने मन ही मन कहा, "अब तो मेरी लज्जा भगवान् के ही हाथ है।"

६८ खैराती बाजार के लिए दौड धूप

उधर सुलतान ने शहर के प्रमुख व्यक्तियो और बडे-बडे साहूकारो को बुला कर कहा, "जब मैं नरवलगढ मे था, मैंने मारू को अपनी धर्म की बहिन बना ली थी, अब वह भात न्योतने के लिए आई हुई है। कीचलगढ की सीमा पर वह अपनी १२ हजार फौज के साथ ठहरी हुई है। उसने यह प्रण कर रखा है कि यदि कीचनगढ म हीरे-पन्ना का खैराती बाजार लग जाय, तब तो मैं नगर म प्रवेश करूँगी, अन्यथा कटारी खाकर प्राण त्याग

दूँगी। यदि मारू ने कटारी खाकर प्राण त्याग दिये तो इसका पाप मुझे लगेगा। इसलिए हे साहूकारो! आप लोग कोई उपाय निकालें, मैंने अपनी कठिनाई आपके समक्ष रख दी है।"

इस पर भारामल व तारामल नामक साहूकार कहने लगे, "महाराज! चार पाँच मन हीरे-पन्ने और मोती-जवाहिरात तो बडे-बडे साहूकारो के यहाँ मिलेंगे, छोटे साहूकारो के यहाँ नही। इनसे अगर खैराता बाजार आप लगवा सकते है तो भले लगवालें, हमारा और कोई वश यहाँ नहीं चलता।"

इन शब्दो को सुन कर सुलतान ने कहा, "इतने हीरे-पन्नो से खैराती बाजार नही लग सकता। तुम लोग यह बतलाओ कि दादा चकवे बैण के शासनकाल मे दीवान कौन था? उसके घर का पता लगा कर दो।"

इस पर साहूकारो ने उत्तर दिया, "अन्नदाता! आपके दादा के यहाँ जो दीवान था उसके घर का पता हम लोग बतला देंगे। आज उसके घर मे दरिद्रता का साम्राज्य है, घर वालो को दोनो वक्त खाने को भी पूरा नही पडता। नत्थू कोयलागर उसका नाम है। हमारे चिलमो मे आग रखने का काम वह करता है। उसकी गुजर बडी मुश्किल से होती है। व फटे वस्त्र और टूटे जूते पहनता है। उसके सिर पर पगडी का नाम नही। यदि आपका हुक्म हो तो हम अभी आपकी सेवा म उसे प्रस्तुत कर दें।"

६६. नत्थू कोयलागर को बुलाना

सुलतान ने नत्थू कोयलागर को बुलाने का हुक्म दिया। हलकारा नत्थू कोयलागर पास पहुँचा और उसे सुलतान का हुक्म कह सुनाया। नत्थू का शरीर थरथर काँपने लग किन्तु विवश होकर उसे हलकारे के साथ चलना पडा। जब वह सुलतान के पास पहुँचा त सुलतान ने उसे अपने पास बिठलाया और पूछा, "हे नत्थू! तुम मुझे यह बतलाओ, दाद चकवे बैण के जमाने मे दीवान के पद पर कौन काम करता था?"

नत्थू ने उत्तर दिया, "हे अन्नदाता! मुझ दुखिया को आप क्या व त पूछते हैं। आज तो मुझे कहते भी लज्जा का अनुभव होता है। मेरी तो भगवान् से यही प्रार्थना है कि किसी पर विपत्ति न पडे। मेरे भी ऐश्वर्य के दिन थे किन्तु वे दिन आज बीत गये। आज तो अप कुटुम्ब मे मैं अकेला बचा हूँ। कोयले बेच कर किसी तरह अपना पेट पालता हूँ। किस मुँह से मैं कहूँ कि आपके दादा के जमाने म जो दीवान थे, मैं उन्ही का वशज हूँ? चकवे बैण के शासनकाल मे मेरे दादा दीवान का काम किया करते थे किन्तु आज तो मुझे इस बात के स्वीकार करने मे भी लज्जा का अनुभव होता है। मेरी स्थिति आज बहुत ही दयनीय है। मेरे जो मकान थे, वे भी गिर पडे हैं। मुझ अभागे की यही राम कहानी है।"

७०. चाबियों का गुच्छा

सुलतान ने इतना सुनते ही नत्थू को छाती से लगा लिया। उसे अच्छी पोशाक पहनाई और शहर के बडे बडे साहूकारो और दीवान मुसद्दियो को साथ लेकर सुलतान नत्थू

के घर के द्वार पर पहुँचा। नत्थू आगे चलकर दरवाजे के भीतर घुसा और सुलतान पीछे-पीछे चला। सुलतान की ठोकर लगने से दरवाजे का एक पत्थर निकल पड़ा जिसके नीचे से चाबियों का एक गुच्छा निकला जिसे सुलतान ने झट से उठा लिया। वह बड़ा प्रसन्न होकर मन ही मन कहने लगा कि कुदरतीनाथ अवश्य ही सत्यवादियों के सत्य की रक्षा करेंगे।

७१. बहियों की प्राप्ति

चाबियों की सहायता से मकानों के ताले खोले गये। कमरा के अन्दर बहुत-सी बहियाँ और कागजात मिले। सुलतान ने साहूकारा को हुक्म दिया कि वे बहियों को पढ़ें और जिस बही में चकवै वैण के किले का हाल हो, वह मेरे सामने प्रस्तुत की जाय। बहियों को देखते देखते भारामल साहूकार के हाथ वह बही लग गई जिसमें किले का हाल लिखा हुआ था। बही में लिखा हुआ था कि चकवै वैण के वंश में जो करामाती पुत्र उत्पन्न होगा, वही इस किले का फाटक खोल सकेगा। फाटक के कोई ताला नहीं लगा हुआ था। यही कहना चाहिए कि सत् के ताले से ही फाटक बन्द किया हुआ था।

वली सुलतान ने जल का लोटा हाथ में लिया और सूर्यदेव से प्रार्थना की, "हे भगवान् सविता। मेरी लज्जा आज तुम्हारे ही हाथ है।"

७२. पुतलियों से सवाद

सूर्यदेव को पानी चढ़ा कर ज्यों ही सुलतान ने दरवाजे की ओर हाथ बढ़ाया, त्यों ही पत्थर की पुतलियों ने ललकार कर कहा, "हे द्वार खोलने वाले मानवी। मेरी बात सुन। यह तो सत् का द्वार है, तुम से नहीं खुल सकेगा। कोई सच्चा यती ही इस दरवाजे को खोल सकेगा। सत्य से ही इस किले का निर्माण हुआ है देवताओं का यहाँ पहरा लगता है। यह चकवै वैण का किला है और चकवै वैण कोई साधारण व्यक्ति नहीं था। उसका राज्य सत्य का राज्य था, प्रजा से उसने कभी कर वसूल नहीं किया, रैयत को उसने कभी सताया नहीं। इस किले के भीतर अपार धन-सम्पत्ति है किन्तु उसे तुम हस्तगत नहीं कर सकोगे। यह किला हीरे पन्नों और मोतियों से भरा हुआ है, इसमें अपार युद्ध की सामग्री है, अस्त्र शस्त्र हैं, कल के घोड़े हैं किन्तु बिना किसी करामाती के यह किला नहीं खुल सकता। इस किले के द्वार को तो वही खोल सकेगा जो हाथ का सखी हो और नाड़े का जती हो।"

पुतलियों के इन शब्दों को सुनकर सुलतान अत्यन्त प्रसन्न हुआ और कहने लगा, "हे पुतलियो। मैंने हमेशा सत् की रक्षा की है, मैं हाथ का सखी और नाड़े का जती हूँ। इस किले के द्वार को मैं खोलूँगा।"

इस पर पुतलियों ने उत्तर दिया, "हे द्वार खोलने वाले। अनेक बार तुम्हारा सत् डिग चुका है। पहले पहल तुम्हारा सत् तब डिगा था जब घर के पुरोहित की कुमारी लड़की से तुमने छेड़ छाड़ की थी। दूसरी बार तुम केलागढ़ का स्मरण करो जब कुँवर

निहालदे अपने बाग में झूले पर झूल रही थी, तीजों के त्यौहार के वे दिन थे। क्या तुमने वहाँ जाकर कुंवर निहालदे का हाथ नहीं पकड़ा था ? क्या उस समय तुम सत् से विचलित नहीं हुए ? और तीसरी बार तुम सत्य से डिगे थे काशी शहर में, जब बनिये की लड़की से विवाह करने के लिए तुमने सिर पर मुकुट बांधा था। तीन-तीन बार जो सत् से डिग चुका है, उसे सत्-सत् की रट लगाना शोभा नहीं देता।"

पुतलियों के इन शब्दों को सुनकर मणिधारी सुलतान ने उत्तर दिया, "हे पुतलियो! पुरोहित की लड़की के मैंने जो कलश फोड़ डाले थे, उसके दण्डस्वरूप मैं देश निकाले के १२ वर्ष काट चुका हूँ। जिस निहालदे का बाग में मैंने हाथ पकड़ा था, उसे ही मैं पत्नी-रूप में ग्रहण कर चुका हूँ। काशी में बनिये की लड़की से विवाह करने के लिए मैं अवश्य मुकुट बाँध कर गया था किन्तु वहाँ भी विधि की अनुकूलता से मेरी रानी निहालदे मुझे मिल गई और मैं बनिये की लड़की के यहाँ तोरण मारने नहीं गया। इस प्रकार हे पुतलियो। मैं सत्य कहता हूँ, मेरे जीवन का कोई भी ऐसा प्रसंग नहीं है जहाँ मैं सत्य से विचलित हुआ हूँ।"

इस पर पुतलियों ने कहा, "हम तो इस किले के द्वार पर पहरा देने वाली पुतलियाँ हैं। यदि सचमुच ही तुम अपने जीवन में सत् से विचलित नहीं हुए हो तो निश्चय ही यह तुम्हारे हाथ का स्पर्श पाते ही खुल जायगा।"

७३. सत्य क्रिया

इतना सुनते ही सुलतान ने कहा, "यदि मैं सच्चे गुरु का चेला हूँ, यदि मैंने पर-नारी को सदा पवित्र भाव से देखा है और यदि अभी तक अपने जीवन में मैं कभी भी सत्य से विचलित नहीं हुआ हूँ तो मेरे हाथ का स्पर्श होते ही किले के किवाड़ खुल जायें।"

इस 'सत्य क्रिया' के बाद ज्यों ही सुलतान ने अपने हाथों से किवाड़ों का स्पर्श किया, किवाड़ उसी क्षण खुल गये। किवाड़ खुलते ही पुतलियों के मुँह से निकल पड़ा "धन्य है मणिधारी सुलतान के माता पिता को जिन्होंने सुलतान जैसे सत्यवादी पुत्र को जन्म दिया।"

कीचलगढ़ की धरती भी आज प्रसन्न थी। छत्तीसों जाति के लोग इस अलौकिक दृश्य को देख कर विस्मय-विमुग्ध हो 'धन्य-धन्य' कह उठे।

७४. किले में प्रवेश और रत्नों की प्राप्ति

सुलतान अपने सरदारों, सभासदों तथा साहूकारों को लेकर किले के अंदर प्रविष्ट हुआ और विशाल जन-समूह सुलतान के संकेत पर बाहर रुका रहा।

सुलतान ने अपने सरदारों से कहा, "जमीन के नीचे 'भँवरा'[१] है जिसमें हीरे-पन्ने तथा अन्य 'जवाहिरात हैं।" वहीं मेंदिये गये निर्देशों के अनुसार सुलतान ने जमीन खुदवाना शुरू किया। जमीन खोदते-खोदते 'भँवरे' का द्वार मिल गया जिसके ताला लग रहा था।

१. भूमि-गृह

लतान ने ताला खुलवाया और वह सरदारों के साथ 'भँवरे' में अन्दर प्रविष्ट हुआ। अन्दर जाकर क्या देखते हैं कि बिना चिराग वह स्थान जगमग-जगमग हो रहा है। रत्नों की अपार राशि को देखकर सुलतान के हर्ष की सीमा न रही। उसने अपने सरदारों को कहा, "अब देर क्यों करते हो? जितने हीरे-पन्ने निकाल सकते हो, अविलम्ब निकाल लो और हीरे-पन्ना का ऐसा बाजार लगा दो जिसकी शोभा देख कर ढोलसिंह भी आश्चर्य से विमुग्ध हो उठे। भगवान् ने आज मेरी इच्छा पूर्ण कर दी है। कुदरतीनाथ सत्यवादियों के सत्य की हमेशा से रक्षा करते आये हैं। मेरी बहिन की चिन्ता भी अब दूर होगी।"

७५. मारू के नाम पत्र

सरदारों ने सुलतान की इच्छानुसार बाजार लगवा दिया। सुलतान घोड़े पर सवार होकर बाजार के निरीक्षण के लिए निकला। अपनी इच्छानुसार सजे-सजाये बाजार को देख कर सुलतान अत्यन्त उल्लसित हुआ और कलम-दवात लेकर अपनी बहिन के नाम पत्र लिखने लगा—

"सिध श्री श्री लिखै था ओपमा
लाखां ऊपर की लिखता जै हर नाम
ढोल की कवर सैं बँचियो म्हारी बदगी
मेरी मारू की भाण सैं की जै हरि नाम
सतिया का सत की बाई राख्या कुदरतीनाथ
हीरा पन्ना मोत्या का मै लगा दिया खैराती बजार
इब की आज्या हे मा-जाई कीचलकोट में
जाएँ ढोल कंवर नै की ल्यायो
हाथी कै होदै चढाय।"

सुलतान ने पत्र लिख कर हलकारे को दे दिया। हलकारा घोड़े पर सवार होकर मारू के तबुओं मे जा पहुँचा।

हलकारे ने ड्योढीवान को परवाना दे दिया। ड्योढीवान ने परवाना ले जाकर मारू को सौंप दिया। नरवलकोट की धनियानी ने जब परवाना खोल कर पढा तो उसे ऐसा लगा मानो मरणासन्न को अमृत मिल गया हो। मारू ने तीन दिन से अन्न का एक दाना भी ग्रहण नही किया था किन्तु सुलतान के पत्र को पढ कर उसने बड़ी खुशी से अन्न-जल ग्रहण किया। हीरे-पन्ना के बाजार का समाचार पढ कर वह मन ही मन 'मगन' हो रही थी। उसने खुश होकर हलकारे को कुछ इनाम देना चाहा किन्तु उसने इनकार करते हुए कहा कि किसी प्रकार की 'बिदागी' मैं आपसे नही ले सकता।

इतना कह कर हलकारा कीचलगढ पहुँचा और सुलतान को खबर दी कि आपकी मारू बहिन अब शीघ्र ही आ रही है। हलकारे ने कहा कि मारू मुझे पत्र पढ कर इनाम देने लगी किन्तु मैंने उससे कुछ भी लेना उचित नहीं समझा।

हलकारे के इन शब्दों को सुन कर सुलतान और भी प्रसन्न हुआ और उसने अपनी ओर से २५ अशर्फियां हलकारे को इनाम में दीं।

७६. कीचलगढ़ में आनन्दोत्सव

अब शहर में जोरों से आनन्दोत्सव मनाया जाने लगा। गाजे-बाजे बजने लगे। सदर-बाजार में ढींडी पीट दी गई कि मारू सुलतान के यहाँ भात न्यौतने आ रही है।

सुलतान के महलों में रानियाँ १६ शृंगार करने लगीं, रानी निहालदे भी सजधज कर तैयार हो रही थी, दर्शन का उसे भी बड़ा चाव था

महलों में पूरी सजावट करवादी गई। गद्दे-मसनद लगवा दिये गये। विभिन्न प्रकार के इत्र छिड़कवा दिये गये। छत्तीसों प्रकार के व्यंजन तैयार करवाने का हुक्म रसोइयों को दे दिया गया।

उधर ढोलसिंह महाराज ने कीचलगढ़ में प्रवेश करने की तैयारी की। घोड़ों पर पाखर-जीनें डाल दी गईं। हाथियों के हौदे सजा दिये गये। मारू ने भी १६ शृंगार किये और बत्तीसों आभूषण धारण किये। आज वह सुन्दरता को भी सुन्दर कर रही थी, उसे देखकर रति भी मानो लज्जा से छिप छिप रह जाती थी। सहस्र जिह्वा वाले शेष नाग भी उसके लावण्य और उसकी अनुपम छवि का वर्णन करने में असमर्थ थे।

हीरे-पन्नों से सुशोभित डोले पर मारू आसीन हुई और ढोलसिंह महाराज एक अद्वितीय सजे-सजाये हाथी पर सवार हुए। उनकी कमर में बाँकी कटार लगी हुई थी, सिर पर पचरंग पाग शोभित हो रही थी और गले में मोतियों की माला सजी हुई थी। ५०० घोड़ों पर पाँच सौ सवार उनके साथ-साथ चल रहे थे। मारू के साथ २५९ खोजे चल रहे थे। आगे आगे ढोलसिंह महाराज का गजराज तथा पीछे-पीछे मारू का डोला चल रहा था।

जब ढोलसिंह महाराज का हाथी नगर-द्वार पर पहुँचा तो वली सुलतान ने झुककर मुजरा किया। ढोलसिंह ने भी 'जै हर नाथ' कहा। वली सुलतान ने ढोलसिंह महाराज के तिलक किया और ५१ लाल भेंट की, जरी का सिरोपाव दिया। पंडितों ने विधिवत पूजन करवाया। सुलतान ने पंडितों को दक्षिणा देकर मालामाल कर दिया। उन्होंने भी चकवें बैण के पोते को हृदय से आशीर्वाद देते हुए कहा "कीचलगढ़ का निरन्तर अभ्युदय हो और तुम्हारी कीर्ति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़े।"

इसके बाद जुलूस हीरे-पन्नों के बाजार की ओर रवाना हुआ। सुलतान का घोड़ा ढोलसिंह महाराज के हाथी के बराबर-बराबर चल रहा था।

ढोलसिंह का हाथी झूमता हुआ चल रहा था। पीछे-पीछे सब सरदारों के घोड़े भी अपनी मस्त चाल से धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे थे।

७७. खैराती बाजार का दृश्य

जब यह जुलूस हीरे-पन्नों के खैराती बाजार में पहुँचा तो ढोलसिंह महाराज ने अपनी आँखों से देखा कि याचक-गण और भिक्षुक यथेच्छ हीरे-पन्ने उठा-उठा कर ले जा रहे थे। यह अद्भुत दृश्य देखकर ढोलसिंह भी चकरा गये और कहने लगे, "हे सुलतान! धन्य है तेरे माता-पिता को! तुमने भी हीरे-पन्नों की अच्छी लूट मचवाई है!"

यह सुनकर मारू ने कहारों से कहकर अपना डोला ढोलसिंह महाराज के पास करवाया और वह अपने पति से कहने लगी, "आपने ही तो कहा था कि जो मेरे यहाँ चाकरी कर चुका है, उसके यहाँ भात न्यौतने कैसे चलूं? आज आप मेरे भाई का वैभव अपनी आँखों से देख लीजिये। नरवलगढ जैसे ५२ गढ मेरे भाई के अधिकार में हैं और कीचलगढ जैसा दूसरा गढ दुनिया में कोई है नहीं। हाँ, यह ठीक है कि ऐसा सुलतान भी नरवलगढ कई वर्षों तक रहा और चाकरी करके उसने अपने विपत्ति के दिन काटे। यह यथार्थ ही कहा गया है कि किसी पर भी विपत्ति न आये।

'धीखो थी क्षिती में थो वैरी मत पडो।
धीखो यो छुटवादे थी जलमी भोम ॥'"

विपत्ति पड़ने पर मनुष्य को अपनी जन्मभूमि तक छोड़ देनी पड़ती है। मेरे भाई सुलतान पर भी विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा था, तभी तो उसे नरवलगढ में चाकरी करनी पड़ी और आपने 'ओलगिया' जैसे तुच्छ नाम से उसे सम्बोधित किया। क्या आपका इस प्रकार का व्यवहार किसी भी प्रकार औचित्यपूर्ण कहा जा सकता है?"

ढोलसिंह से कुछ उत्तर देते न बना। वह नीचे की तरफ देखने लगा। उसके चेहरे पर उदासी छा गई। सुलतान सारी स्थिति को अच्छी तरह भाँप गया। उसने ढोलसिंह को खुश करने के उद्देश्य से कहा, "संसार में समय ही सबसे बड़ा बलवान् है। उसके सामने मनुष्य की कोई हस्ती नहीं। मुझे ही देखिए, अपनी विपत्ति के दिनों को काटने के लिए मैंने आपके यहाँ नौकरी की। मैं ५½ वर्षों तक नरवलगढ में रहा और आपके द्वारा 'ओलगिया' कहलवाया। इसलिए मैं तो समझता हूँ, आप ही बड़े सरदार हैं, मैं तो नितान्त नगण्य हूँ। मारू ने स्त्री स्वभाववश यदि कुछ कह दिया हो तो उसे आप अन्यथा न समझें। आप तो हमारे सिर के ताज हैं, यह सारा उत्सव आप ही के लिए सम्पन्न हो रहा है। हीरे-पन्नों का खैराती बाजार भी आपका अभिनन्दन करने के लिए ही लगाया गया है।"

सुलतान के इन शब्दों को सुनकर ढोलसिंह बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगा, "हे सुलतान! तुम्हें धन्य है जो इतने ऐश्वर्य और इतनी प्रभुता के होते हुए भी तुम्हारे मन में तनिक भी घमण्ड नहीं है। ऐसे ही पुत्र को जन्म देकर जननी पुत्रवती कहलाती है। हीरे-पन्नों का ऐसा खैराती बाजार मैंने तो अपने जीवन में पहली बार देखा है, मैं तो इसे एक बहुत ही अद्भुत दृश्य मानता हूँ। इस दृश्य की अमिट छाप मेरे मानस पट पर आजन्म अंकित रहेगी।"

ढोलसिंह ये शब्द कह ही रहा था कि उधर सुलतान के संकेत को पाकर कीचलगढ़ के साहूकारों ने रत्नों की झोली भर-भर कर ढोलसिंह पर न्योछावर की। ढोलसिंह का जितना आदर-सत्कार कीचलगढ में हुआ, उतना उसे पहले कभी नसीब नहीं हुआ था।

७८. ढोलसिंह का सम्मान

ढोलसिंह का हाथी जब चल कर महलों के द्वार पर पहुँचा तो महाराज के सम्मान में ५२ तोपें छोड़ी गईं। बड़े अदब से ढोलसिंह को हाथी पर से उतारा गया। हाथी से उतर कर महाराज महलों में जा बिराजे। कमरों में गलीचे बिछे हुए थे, बहुमूल्य इत्रों के छिड़काव से सारा वातावरण गहमह गहमह हो रहा था। हीरे-पन्नों से सुसज्जित पलंग पर महाराज को बिठलाया गया।

उधर मारू का डोला चलकर जनाने महल में पहुँचा। वहाँ द्वार पर सभी रानियाँ मारू की अगवानी के लिए उपस्थित थीं। मारू जब डोले से उतरी तो वहीं उसका भाई सुलतान भी पास ही खड़ा था। पहले-पहल वह अपने भाई से मिली। भाई ने उसको सिर आँखों पर लेते हुए कहा, "मेरे धन्य भाग्य जो आज मेरी बहिन इतनी दूर से चलकर यहाँ आई। मेरे दिल में आज बेहद उमंग है, हृदय सागर में हर्ष की उत्ताल तरंगें लहरा रही हैं। ऐसा जान पड़ता है मानो आनन्द का उच्छलन हो रहा है।" सुलतान के इन शब्दों को सुनकर मारू पुलकित हो गई।

इसके बाद मारू अपनी भावज निहालदे से मिली। निहालदे ने अपनी ननद को एक सुसज्जित पलंग पर बिठलाया। दासी पगचम्पी करने लगी, निहालदे ने पंखा झलना शुरू कर दिया और कहा, 'हे बाईजी! मैं अपना अहोभाग्य समझती हूँ कि आपका इधर पधारना हुआ। आपके दर्शन से मेरे तो जन्म-जन्मान्तर के पाप कट गये। मेरे स्वामी नरवलगढ में ५½ वर्षों तक रहे। आपने उन्हें धर्म-भाई बनाया, नरवलगढ के शासन प्रबं का भार उनको सौंप दिया और उनका इतना सम्मान किया जितना राजा महाराजाओं का भी नहीं होता। हे ननद! यदि मैं आपके लिए अपने शरीर की जूती भी बनवाद्रूँ तब भी मैं आपसे उऋण नहीं हो सकता। आपने हम पर जो अनन्त उपकार किये हैं, उनका बदला हम सैकड़ों जन्मों में भी नहीं चुका सकते।"

यह सुन कर मारू कहने लगी, हे मेरी प्यारी भावज! मेरी इतनी प्रशंसा न कर मैं इसके योग्य नहीं। जिस दिन भाई सुलतान नरवलगढ आया था, उसी दिन मैंने उसके नाम, गाँव आदि सब पूछे तो उसने यही कहा कि मैं अपना क्या परिचय दूँ? मेरा परिचय तो यही है कि आकाश ने मुझे नीचे गिरा दिया और धरती माता ने मुझे झेल लिया। यदि मुझे सच्ची स्थिति का पता होता तो मैं उसे कभी भी चाकर के रूप में न रखती।'

मारू के इन शब्दों को सुन कर निहालदे बोल उठी, "हे मेरी प्यारी ननद! तुम्हें किसी भी प्रकार से खिन्न होने की आवश्यकता नहीं। दुनिया की दृष्टि में आपके भाई भले ही नौकर रहे हों किन्तु आप और हम लोगों की दृष्टि में वे नौकर नहीं रहे। नरवलगढ़ के

वे एक छदाम भी नहीं लाये। जितना कमाया, उतना वही खर्च कर दिया। आपने मेरे स्वामी को अपना धर्म-भाई बना कर सत की सच्ची बाजी लगादी और यहाँ आकर मुझे जो दर्शन दिये, उससे मेरे मन के सारे पाप धुल गये। मेरी ओर से हे ननद! मन में किसी प्रकार की शंका न लाना। मेरी दृष्टि में तो आप शारदीय ज्योत्स्ना की भाँति उज्ज्वल हैं।" निहालदे के इन शब्दों को सुन कर मारू अत्यन्त प्रसन्न हुई।

उधर बली सुलतान ने सरदारों से ढोलसिंह का परिचय करवाया गया। उसके बाद राग-रंग होने लगे। महफिल में सभी सरदार विराजे। आपानक-गोष्ठियां होने लगी। फूल शराब के प्यालों से ढोलसिंह की मनुहारें होने लगी। वेश्याओं द्वारा नृत्य और गायन होने लगे। तबलचियों ने अपने तबले सम्हाले। राग रंग का ऐसा समां बँधा कि ढोलसिंह विस्मय विमुग्ध होकर प्रफुल्लित हो उठे। हँसी के कहकहे लगने लगे।

७९ ढोलसिंह और सुलतान की बात-चीत

अन्त में ढोलसिंह ने हाथ जोड़ कर कहा, "हे बली सुलतान! जिस दिन से नरवलगढ़ आपने पदार्पण किया था, तभी से वहाँ भलाई और नेकी के काम होने लगे। दानव को र कर आपने नरवलगढ के निवासियों को सदा के लिए सुखी बना दिया था। मुझे मालूम हीं था कि आप कीवलगढ जैसे विशाल गढ के अधिपति हैं, अन्यथा मैं कभी भी आपको गेनगिया' करके नहीं रखता। मैं आपको अपने सिंहासन पर पास बिठाता किन्तु क्या ताऊँ, उस समय मेरी अकल पर पत्थर पड़ गये थे। रह-रह कर वे पुरानी बातें मुझे याद ाती हैं। आप द्वारा जो लोकोपकार के काम किये गये थे, उन्हें स्मरण करके तो मेरा त्त प्रसन्न होता है किंतु मैंने आपको जो चाकर के रूप में रखा, उसका खेद मेरे चित्त को ाज भी कुरेद रहा है।"

यह सुन कर बली सुलतान ने उत्तर दिया, "उन दिनों मैं अपने देश निकाले के दिन ो काट रहा था। अच्छा ही हुआ जो मेरी असली स्थिति का किसी को पता नहीं चला। उन दिनों का स्मरण करके आप तनिक भी खिन्न न हों। मैं तो आपका तथा मारू का अत्यत कृतज्ञ हूँ कि आपने मुझे बड़े से बड़े पद पर अधिष्ठित कर दिया था, जिसके कारण मैं यथेच्छ जन हितकारी प्रवृत्तियों में अपना समय लगा सका। नरवलगढ में बिताये हुए उन दिनों का स्मरण करके आज भी मैं रोमांचित हो उठता हूँ।"

जनाने महल में भोजन के लिए थाल सजाये गये। सुलतान की माता, निहालदे तथा मारू झरोखे खोल-खोल कर पर्दों में से देख रही थी।

"जीमतडा की वै निरसै थी आगली।
बोलतडा की वी सुगणी जीभ॥"

ढोलसिंह और बली सुलतान साथ बैठे हुए जीम रहे थे। ढोलसिंह के लिए 'सीठणे' गाये जा रहे थे और सभी प्रकार से उनकी मनुहारें हो रही थी।

मारू भी आज अत्यन्त प्रसन्न थी। वह अपने भाग्य की सराहना कर रही थी कि वह अपने भाई सुलतान से मिल सकी। न जाने पूर्वजन्म के कौनसे पुण्य उदय हुए थे जिनके कारण उसे सुलतान जैसा धर्म-भाई प्राप्त हुआ। इसी प्रकार निहालदे भी आज अपनी ननद से मिल कर हर्ष से फूली नहीं समा रही थी।

ढोलसिंह ने जीमने के बाद थाल में २५ अशर्फियाँ डाल दीं। भोजन के अनन्तर हाथी पर सवार होकर ढोलसिंह महाराज फिर अपने डेरे पधारे। एक रत्नजडित पलंग पर लेटकर वे आराम करने लगे और नौकर पगचम्पी करने लगा। संतरी पहरा देने लगे। ढोलसिंह निश्चिन्त होकर सो रहे।

इसके बाद बलो सुलतान लौटकर जनाने महल में आया। मारू और निहालदे भोजन के लिए बैठी। सुलतान अपनी बहिन की मनुहारें करने लगा। दासी पंखा झलने लगी। मारू के भोजन कर लेने के बाद सुलतान फिर अपने महलों में चला गया।

८०. मारू और सुलतान की बातचीत

मनवांछित भोजन कर मारू ने थोड़ी देर पलंग पर आराम किया। फिर उसने हलकारा भेजकर सुलतान को बुलाया। निहालदे भी पास में बैठ गई। मारू ने सुलतान से कहना आरम्भ किया, "हे भाई! मैं यहाँ भात न्योतने के लिए आई और जो सत्कार तुमने हम लोगों का किया है, वैसा कोई क्या करेगा? तुम्हारे ऐश्वर्य और वैभव को देखकर देवताओं को भी ईर्ष्या होती होगी और तुम्हारे जैसे भाई को पाकर मुझे जिस आत्म-गौरव का अनुभव होता है, वह शब्दों द्वारा अनिर्वचनीय है। हे भाई! अब मैं तुमसे यही कहना चाहती हूँ कि जब तुम भात भरने आओ तो अपने जैसे ही 'गोरे गाबरू, साथ लाना जिनके तीखे नैण हों और जिनकी मूँछें कानों तक जा लगी हों। बावन गढों के गढपति और ५६ किलों के सरदार अपने साथ लाना, कजली बन के ऐसे हाथी साथ में लाना जिनकी अंबारी लाल हो, पूंगल देश के ऐसे ऊँट लाना जिनकी 'ओछी गोडी' और लम्बी गरदन हो,[१] ऐसे दरियाई घोड़े लाना जो बड़े से बड़े दरियाव को चीर कर पार हो जायँ और हे भाई! मेरी प्यारी भावज का डोला साथ में लाना जिसके साथ ५२ गढों के अन्य डोले चल रहे हों, कीचलगढ के प्रतिष्ठित ब्राह्मण-बनिया को साथ लाना। और 'काकड' को चुनडी ओढ़ाना, शहर की सीमा से हीरे पन्ना की वर्षा करना, पाट पर भी बहुमूल्य रत्न बरसाना। इस प्रकार हे भाई! जब तुम मेरे यहां भात भरने आओगे, तभी तुम्हारी और मेरी शोभा है।"

"आप सरीका ल्यावे गोरा गाबरू
मूछां जिणरी कानां तक पूंची जाय।

---

१. मिलाइए- "ओछी गोडी नस कड, वहै उलालां वग्ग।
बो ओठी बो करहलो, आयण होय अलग्ग॥"

बावन गढां का ल्याये भाई गढपती
छप्पन किलॉं का वी वै सिरदार।
हाथी वी ल्याये बीरा कजली वन का
लाल अभारी सोभा कहिय न जाय।
करवा वी ल्याये पूंगल रै देश का
ओछी गोडी वी लम्बी नाड।
घोडा वी ल्याये हो मेरा भाई जलहरा
चीर पगावें वी कहर दरयाव
भायज का डोला लीये भाई साथ में॥
बावन गढा का वी जिनाना डोला वी लीये साथ
कीचल वी शहर का लीजे बामण-बाणिया
और लिये वी सारो साथ
काकड नें उढाये हो भाई चूनडी
जद पाछै वी काकड को राखिये आदर सतकार
काकड सें वी हीरा मोती पन्ना वरसिये
हो भाई पाटा पै वरसो वी पन्ना वै जुंवहार॥"

"हे भाई! अपनी ओर से मुझे जो कुछ कहना था, वह मैं कह चुकी हूँ। मेरे कहने मे किसी वस्तु की कमी रह गई हो तो उसे तुम अपनी बुद्धि से पूरी कर लेना।"

माल के इन शब्दो को सुनकर सुलतान ने उत्तर दिया, "हे बहिन! तुम किसी भी बात की चिन्ता मत करो, तुम अपने मन मे धैर्य रखो। जैसा भात भरने के लिए तुमने कहा है वैसा ही भात मैं भरूंगा। और फिर हे बहिन! सच्ची बात तो यह है कि वैसा भात भरने की शक्ति मुझ मे तो है नही, किन्तु मैं जानता हूँ कि गोरखनाथ मेरी सहायता करेंगे। उन्होने सत्यवादियो के सत्य की हमेशा रक्षा की है। मेरी लज्जा भी उन्ही के हाथ है। हे बहिन! मेरा किया हुआ कुछ नही होगा, किन्तु जो भगवान् की इच्छा होगी, वह तत्काल पूरा हो जायगी।

"म्हारी कर्‌योडी हे बाई! कुछ ना बणै, हर चाही तत्काल।"

किन्तु मुझे पूरा विश्वास है कि कुदरतीनाथ अवश्य ही मेरी मनोकामना पूरी करेंगे।"

सुलतान के इन शब्दो को सुनकर माल अत्यन्त प्रसन्न हुई और कहने लगी, "हे भाई! मेरा पिता बुधसिंह भी भात लेकर आयेगा, ताराचन्द और मेघचन्द नामक मेरे भाई भी भात भरेंगे किन्तु मैं तुम्हे कहे देती हूँ कि मैं सबसे पहले तुम्हारे हाथ से चुनडी ओढूंगी, उसके बाद भले ही मुझे दूसरे चुनडी ओढादें। हे भाई! जब मुझे इस बात का पता चल जाय कि नरवलगढ के 'कांकड' पर तुम पहुँच गये हो, तभी मैं हथियापोल को 'चिरचूंगी'।